# चिंगारी

## ज़मीनी स्तर की महिला कार्यकर्ताओं के साथ नारीवाद नेतृत्व निर्माण पर एक संसाधन पुस्तक

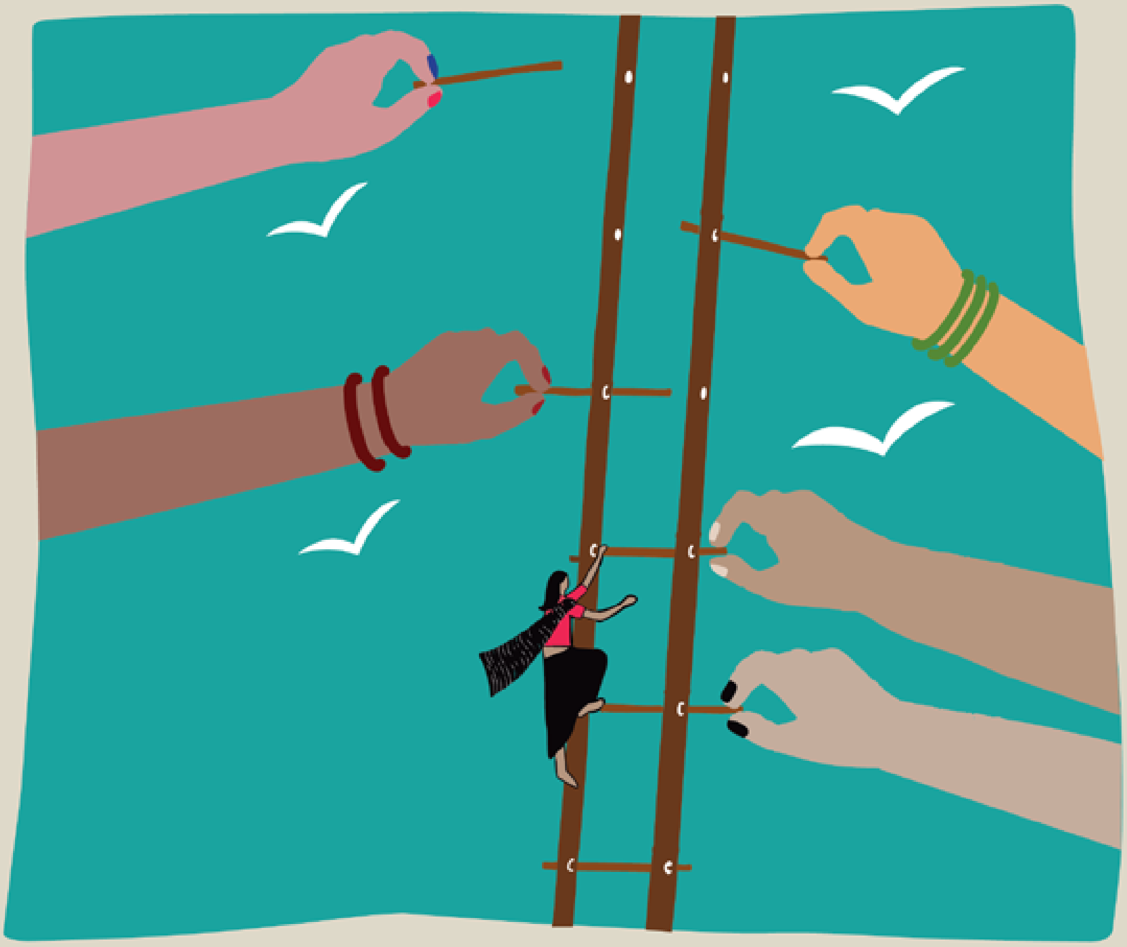

नेहारिका महाजन, बिरजा नंदन मिश्रा, श्रुति गुप्ता, वान्या सुनेजा, दीपिका सलूजा और सपना केडिया

जनवरी 2026

## आई. सी. आर. डब्ल्यू. के बारे में

आई. सी. आर. डब्ल्यू. एक विकेंद्रीकृत वैश्विक नेटवर्क है, जिसमें तीन स्वायत्त क्षेत्रीय इकाइयाँ शामिल हैं–आई. सी. आर. डब्ल्यू. अफ्रीका, आई. सी. आर. डब्ल्यू. अमेरिका और आई. सी. आर. डब्ल्यू. एशिया। लगभग 50 वर्षों से, आई. सी. आर. डब्ल्यू. ने क्रियान्वयन–उन्मुख शोध और समाधान के माध्यम से लैंगिक समानता, समावेशन और साझा समृद्धि के वैश्विक एजेंडा को आकार दिया है।

हमारे वैश्विक विशेषज्ञ महत्वपूर्ण और अभिनव अंतर्दृष्टियाँ विकसित करते हैं तथा आर्थिक अवसर और सुरक्षा, स्वास्थ्य और प्रजनन अधिकार, लैंगिक मानदंड और जलवायु कार्रवाई जैसे विषयों पर लैंगिक परिवर्तनकारी रणनीतियाँ तैयार करते हैं।

हमारी दृष्टि एक ऐसे न्यायसंगत, सतत और समृद्ध विश्व का निर्माण करना है, जहाँ महिलाएँ, लड़कियाँ और संरचनात्मक रूप से वंचित समुदाय नेतृत्व करें और प्रगति करें।

## WGH इंडिया के बारे में

WGH इंडिया, वैश्विक Women in Global Health (WGH) आंदोलन का हिस्सा है, जिसका उद्देश्य भारत में स्वास्थ्य क्षेत्र के नेतृत्व में जेंडर समता को आगे बढ़ाना है। WGH इंडिया का प्रयास है कि स्वास्थ्य क्षेत्र में काम करने वाली महिलाओं के अनुभवों और ज्ञान को सामने लाया जाए – खासकर अग्रिम पंक्ति (फ्रंटलाइन) की स्वास्थ्य कर्मियों और हाशिए पर मौजूद व संवेदनशील समूहों की महिलाओं के अनुभवों को। यह काम संवाद, शोध और वकालत (एडवोकेसी) के माध्यम से किया जाता है।

साथ ही, WGH इंडिया एक ऐसा आंदोलन खड़ा करना चाहता है जो भारत के स्वास्थ्य क्षेत्र में महिलाओं के नेतृत्व को आगे बढ़ाने की मांग करे। वर्तमान में, WGH इंडिया के 245 से अधिक सदस्य हैं, जिनमें नर्स, दाइयाँ, डॉक्टर, पब्लिक हेल्थ पेशेवर, स्वास्थ्य नीति–निर्माता, शोधकर्ता और निजी क्षेत्र में काम करने वाले स्वास्थ्य कर्मी शामिल हैं।

## लेखक

नेहारिका महाजन, बिरजा नंदन मिश्रा, श्रुति गुप्ता, वान्या सुनेजा, दीपिका सलूजा और सपना केडिया

## सुझाया गया संदर्भ (Citation)

महाजन, एन., मिश्रा, बी., गुप्ता, एस., सुनेजा, वी., सलूजा, डी. और केडिया, एस. 2026. चिंगारीः ज़मीनी स्तर की महिला कार्यकर्ताओं के साथ नारीवाद नेतृत्व निर्माण पर एक संसाधन पुस्तक। नई दिल्ली, इंटरनेशनल सेंटर फॉर रिसर्च ऑन वीमेन और वीमेन इन ग्लोबल हेल्थ इंडिया।

## प्रकाशन अधिकार

इस संसाधन पुस्तक को चिंगारी प्रोजेक्ट के तहत तैयार किया गया है, जिसे ICRW और WGH इंडिया द्वारा मिलकर किया गया है, और जिसे गेट्स फाउंडेशन का सहयोग प्राप्त है। इस संसाधन पुस्तक का उपयोग केवल गैर–व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है, और इसका उपयोग करते समय उचित संदर्भ (एट्रिब्यूशन) देना आवश्यक है।

# चिंगारी

जनवरी 2026

## ज़मीनी स्तर की महिला कार्यकर्ताओं के साथ नारीवाद नेतृत्व निर्माण पर एक संसाधन पुस्तक

# आभार

सबसे पहले, हम चिंगारी फेलोज के प्रति अपनी गहरी कृतज्ञता व्यक्त करते हैं। उनकी उदारता, साहस, साथ और भागीदारी के बिना यह संसाधन पुस्तक संभव नहीं थी। उनके जीवन के अनुभव, उनके सवाल, उनके संदेह, उनकी गहरी समझ और संघर्षों से हासिल की गई दृढ़ता ही इन पन्नों में सांस लेती है। यही सब इस काम की कल्पना को भी आकार देते हैं और उसकी असली बनावट भी रचते हैं।

हम उन संगठनों के भी उतने ही आभारी हैं जिन्होंने चिंगारी कार्यक्रम में भाग लिया। अपने साथियों को नामित करके और इस प्रक्रिया में अपना समय और मन लगाकर उन्होंने इस यात्रा को संभव बनाया। खास तौर पर साथियों, सहकर्मियों और पर्यवेक्षकों के लिए बनाए गए कार्यशालाओं के जरिए उनका जुड़ाव इस सामूहिक सीख को और गहरा करता है, जिससे यह संसाधन पुस्तक बनी है।

हम मीनू वढेरा के प्रति अपनी गहरी कृतज्ञता व्यक्त करते हैं, जिन्होंने चिंगारी फेलोज के साथ नारीवादी नेतृत्व पर एक समृद्ध, संवेदनशील और दिल को छू लेने वाला सत्र लिया। इस यात्रा की शुरुआत इससे अधिक उजली और प्रेरक नहीं हो सकती थी। कार्यक्रम की दहलीज पर खड़े उस सत्र ने एक दिशा दी, कल्पनाओं को जगाया, और बहुत ही सहज लेकिन गहरे तरीके से उन सवालों, मूल्यों और सोच को आकार दिया, जो आगे चलकर इस पुस्तक की आत्मा और लेखन में उतरते गए।

हम अरजू शाकिर और क्रांति खोड़े के प्रति भी दिल से आभार जताते हैं, जिनका योगदान बतौर संसाधन व्यक्तियों के रूप में इस कार्यक्रम को और समृद्ध बनाता है। उनकी तेज राजनीतिक समझ और जमीन से जुड़ी, फिर भी व्यापक सोच ने हमें नारीवादी नेतृत्व को नए और गहरे तरीकों से देखने में मदद की। उनका अनुभव और दृष्टि इस पुस्तक में हर जगह महसूस होती है।

हम दीप्ता भोग के भी अत्यंत आभारी हैं, जिन्होंने अपने लंबे अनुभव, गंभीर विश्लेषण और गहन ज्ञान को हमारे साथ साझा किया। उनके साथ के जुड़ाव ने आईसीआरडब्ल्यू टीम को मजबूत किया, हमें और सख्ती से सोचने के लिए प्रेरित किया, और हमारे काम को नारीवादी आंदोलनों और नेतृत्व की व्यापक यात्रा और इतिहास से जोड़कर रखा।

हम संदीपा फांडा के प्रति गहरी कृतज्ञता व्यक्त करते हैं, जिनका निरंतर सहयोग और देखभाल, खासकर परियोजना प्रबंधन में, इस पूरी यात्रा में हमारे साथ बनी रही। हम फलक रजा का धन्यवाद करते हैं, जिन्होंने यह सुनिश्चित किया कि कार्यक्रम उच्चतम नैतिक मानकों पर आधारित रहे। मोनिका भल्ला और निशा बारला का भी हम दिल से आभार मानते हैं, जिनके बिना लॉजिस्टिक्स और प्रशासन से जुड़ा काम संभव नहीं हो पाता और प्रत्यक्ष कार्यशालाएँ आयोजित नहीं हो पातीं। अनुराग पॉल का भी धन्यवाद, जिन्होंने कार्यक्रम के संचार और प्रसार को संभाला।

हम सुनीता और साक्षी के भी आभारी हैं, जिन्होंने क्षमता निर्माण सत्रों के दौरान अनुवादक के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनका योगदान केवल भाषा तक सीमित नहीं रहा, बल्कि उसने हमारी टीम को और अधिक समावेशी और सजग तरीके से समझने, सवाल करने और प्रक्रिया को संचालित करने की क्षमता दी।

प्रिय एनी के लिए एक स्नेह भरा धन्यवाद, जिनकी चित्रकारी ने इस कार्यक्रम के ज्ञान संसाधनों में जान और गहराई भर दी। उनके काम के माध्यम से हमारे विचारों को आकार, रंग और रूप मिला, जिसने इस पुस्तक की कल्पना और आत्मा दोनों को समृद्ध किया।

हम रवि वर्मा, प्रणिता अच्युत और पद्मा देओस्थली के प्रति अपनी गहरी कृतज्ञता व्यक्त करते हैं, जिनके मार्गदर्शन, अंतर्दृष्टि और इस काम पर अटूट विश्वास ने हमें संभाले रखा। रवि के स्नेह, जिज्ञासा और प्रोत्साहन ने हमें अपने विचारों पर भरोसा करना सिखाया। प्रणिता की स्पष्टता, सहज उपस्थिति और निरंतर सहयोग इस पूरी प्रक्रिया में हमारे साथ रहा। पद्मा के प्रति हम विशेष रूप से आभारी हैं, जिन्होंने स्वास्थ्य प्रणालियों को नारीवादी दृष्टि से समझने का अपना गहरा अनुभव उदारता से साझा किया, खास तौर पर एक प्रभावशाली मास्टरक्लास के माध्यम से। उनके विश्वास और हर बार हमारे साथ खड़े रहने की तत्परता ने इस कार्यक्रम की दिशा को मजबूत किया।

हम साथी संगठनों के प्रति भी आभार व्यक्त करते हैं, विशेषकर निरंतर ट्रस्ट, क्रीआ, पार्टनर्स इन लॉ एंड डेवलपमेंट, जुबान बुक्स, जगोरी, सहेली और संगत, जिनके प्रकाशनों, संसाधनों और अभिलेखों ने इस कार्यक्रम को अनगिनत तरीकों से समृद्ध किया। उनके काम ने हमारी सोच को पोषित किया, हमारी योजना को दिशा दी और हमारी अवधारणात्मक यात्राओं को गहराई दी। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि उन्होंने हमें नारीवादी संघर्षों, ज्ञान निर्माण और सीख की लंबी और ऊर्जावान परंपराओं से जोड़े रखा।

अंत में, हम विमेन इन ग्लोबल हेल्थ की वैश्विक टीम के प्रति अपनी गहरी कृतज्ञता व्यक्त करते हैं, जिनके विश्वास और सहयोग ने इस काम को संभव बनाया। साथ ही, विमेन इन ग्लोबल हेल्थ के भारत अध्याय का भी धन्यवाद, जिसने इस कार्यक्रम को संवेदनशीलता और समर्पण के साथ थामे रखा।

# अनुक्रम

परिचय | 11

नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम के केंद्र में क्या है? | 11

चिंगारी क्या है? उसकी प्रक्रिया क्या थी? | 13

इस संसाधन–पुस्तक की संरचना | 15

इस पुस्तक का उपयोग कैसे करें? | 16

अध्याय 1: नारीवादी नेतृत्व की नींव गढ़ना | 21

चिंगारी का कंटेंट क्या था? | 22

हमने यह कंटेंट क्यों चुना? | 24

बिल्डिंग ब्लॉक 1: जेंडर और पितृसत्ता | 25

बिल्डिंग ब्लॉक 2: सत्ता | 34

बिल्डिंग ब्लॉक 3: हाशियाकरण और इंटरसेक्शनैलिटी | 42

बिल्डिंग ब्लॉक 4: महिला कामगार, उनका कार्य संसार और महिला कामगारों के अधिकार | 52

बिल्डिंग ब्लॉक 5: नारीवादी नेतृत्व और नारीवादी एक्शन | 61

अध्याय 2: नारीवादी पद्धति को आगे बढ़ाना – सीखने–सीखाने को राजनीति, अभ्यास और संभावना की तरह थामना | 69

नारीवादी पद्धति का मर्म | 71

एक पद्धति को नारीवादी क्या बनाता है? | 75

नारीवादी पद्धतिः देखभाल की एक अनंत प्रतिबद्धता | 91

## अध्याय 3: प्रक्रिया के भीतर की प्रक्रिया: नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम में शोध का समावेश | 95

शोधः नारीवादी अभ्यास, न कि जोड़–तोड़ | 97

नारीवादी नेतृत्व की प्रक्रियाओं में सीखने–सीखाने की जटिलताओं के साथ झूझना | 98

ज्ञान सिखाने से ज्ञान बनाने तक | 98

शोध ने कार्यक्रम डिजाइन को कैसे मजबूत किया | 101

टीम पर शोध का असर | 102

## अध्याय 4: नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम बनाने और बनाए रखने में क्या–क्या लगता है? | 105

इन प्रक्रियाओं के बारे में लिखना क्यों महत्वपूर्ण है? | 106

विमर्श को समझना: कार्यक्रम को व्यापक नारीवादी नेतृत्व की समझ में रखना | 107

प्रतिभागियों की पहचान | 109

प्रतिभागियों की जरूरतें समझना | 111

प्रतिक्रिया/फीडबैक और चिंतन कार्यशालाओं को प्रक्रिया में शामिल करना | 112

जगह, जुड़ाव और जवाबदेही | 116

## अध्याय 5: अनुभव और समझ: हमारी यात्रा के सबक | 119

विचार 1: नारीवादी सीखने–सीखाने की प्रक्रियाएँ जादू की छड़ी नहीं है | 120

विचार 2: जगह बनाना एक असमान प्रक्रिया है | 122

विचार 3: समावेशन एक काम है | 124

विचार 4: समीक्षात्मक सोच, दृष्टिकोण और कौशल दोनों है | 125

विचार 5: सीखने के लिए असहज होना जरूरी है | 127

विचार 6: नारीवादी नेतृत्व हर जगह एक जैसा नहीं दिखता | 128

शब्दकोष | 130

हमारे भीतर धधकती हर उस चिंगारी के नाम।

उनके नाम, जिन्होंने हमसे पहले इस चिंगारी को सुलगाया। उनके नाम, जो आज हमारे साथ चलते हुए इस चिंगारी को जिंदा रखे हुए हैं। और उनके नाम, जो आने वाले कल में इसे और आगे ले जाएंगे।

उन सबके लिए, जो अपनी ही लौ को पहचानते हैं, उसे थामते हैं, और उसे बुझने नहीं देते।

अमृता प्रीतम
के शब्दों में

# “मेरी आग मुझे मुबारक”

# परिचय

## नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम के केंद्र में क्या है?

हर कार्यक्रम की शुरुआत एक प्रश्न से होती है। इंटरनेशनल सेंटर फॉर रिसर्च ऑन वीमेन (ICRW) और वीमेन इन ग्लोबल हेल्थ (WGH), इंडिया द्वारा तैयार किया गया जेंडर ट्रांसफॉर्मेटिव लीडरशिप कार्यक्रम, चिंगारी, भी एक प्रश्न से ही जन्मा था: नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम के केंद्र में आखिर क्या है?

यह प्रश्न हमारे लिए इसलिए भी महत्त्वपूर्ण था क्योंकि चिंगारी में हमारा उद्देश्य बार–बार एक ही स्पष्ट संकल्प पर लौट आता था – ज़मीनी स्तर की महिला स्वास्थ्य कर्मियों के नेतृत्व को पोषित करना और आगे बढ़ाना। वे महिलाएँ, जो समुदाय के स्वास्थ्य कार्य का पूरा भार अपने कंधों पर उठाए चलती हैं। यही प्रश्न हम अपने आप से पूछते रहे, एक–दूसरे से पूछते रहे, अपने सहयात्रियों, साथियों, विशेषज्ञों से पूछते रहे और जीवन तथा इस दुनिया से भी।

चिंगारी की फेलोज के साथ यात्रा आगे बढ़ी तो यह प्रश्न भी फैलता गया, गहरा होता गया। अलग–अलग जाति, धर्म, जेंडर और सामाजिक संदर्भों से आने वाली उन महिला कर्मियों को, जो अपने समुदायों को जोड़े रखती हैं – एक नेतृत्व–निर्माण कार्यक्रम में साथ लाने का अर्थ क्या है? नारीवादी नेतृत्व पर आधारित कोई क्षमता–निर्माण कार्यक्रम उनके कामकाजी जीवन में वास्तव में क्या और कैसे योगदान दे सकता है? क्या हमें उन्हें नारीवादी नेतृत्व के बारे में सोचने और उसे अभ्यास में लाने के लिए आमंत्रित करना चाहिए? क्या यह प्राथमिकता होनी भी चाहिए?

### ये प्रश्न अमूर्त नहीं थे।

वे उन संवादों से उपजे थे, जिनमें महिलाएँ घर की देखभाल और काम की अनिश्चित माँगों के बीच संतुलन साधती दिखीं; जो संगठनात्मक ढाँचों में अदृश्य बनी रहती हैं, जबकि समुदाय के स्वास्थ्य तंत्र की रीढ़ वही हैं। उन्होंने ऐसे कार्यस्थलों की बात की जहाँ दृश्य और अदृश्य, दोनों तरह की बाधाएँ उनके वेतन, स्वास्थ्य, जीवन–निर्णयों और आत्मसम्मान को प्रभावित करती हैं। उन्होंने जेंडर और यौनिकता से जुड़े उन नियम–कायदों का उल्लेख किया, जो 'इज़्ज़त' को उनके शरीर से बाँध देते हैं, उनकी आवाजाही सीमित करते हैं और अवसरों के दरवाजे संकरे कर देते हैं। उन्होंने जेंडर आधारित हिंसा, यौन उत्पीड़न, जातिगत और धार्मिक बहिष्करण की कहानियाँ साझा कीं, जो उनके जीवन को चारों ओर से घेर लेती हैं।

कभी वे धीमे स्वर में बोलती थीं। कभी गुस्से, आक्रोश, तीखेपन के साथ। कभी बेबसी, निराशा और आँसुओं के साथ। पर हर संवाद ने एक बात स्पष्ट कर दी कि कमी उनमें नहीं थी; समस्या उन ढाँचों में थी, और उस तरीके में थी जिससे हम उन्हें देखते और समझते आए थे।

चिंगारी ने हमें सिखाया कि ज़मीनी महिला कर्मियों के लिए नेतृत्व कार्यक्रम में उनके अधिकारों और सुरक्षा को शामिल करना अनिवार्य है। ऐसे कार्यक्रमों में गुस्से, थकान, उलझन, और कभी–कभी सीखने की अनिच्छा के लिए भी जगह होनी चाहिए। उन्हें यह स्वीकार करना होगा कि सीखना और बदलाव धीमे होते हैं, विशेषकर तब, जब दुनिया

व्यक्ति को केवल नियमों के अनुरूप ढलने के लिए तैयार की गई हो; अनुरूपता को पुरस्कृत करती हो और असहमति को दंडित करती हो, चाहे वह कार्यस्थल हो, परिवार या समुदाय।

इन कार्यक्रमों को ज़मीनी महिला कर्मियों की इंटेरसेक्शनलिटी को केवल विविधता की सूची की तरह नहीं, बल्कि जटिल जीवन–अनुभवों को समझने के गंभीर प्रयास की तरह केंद्र में रखना होगा। साथ ही यह असुविधाजनक सच्चाई भी स्वीकार करनी होगी कि सर्वोत्तम इरादों के बावजूद हर कार्यक्रम सबके लिए कारगर नहीं हो सकता। कुछ यथार्थ ऐसे होते हैं जिन्हें पहचाना तो जा सकता है, पर तुरंत हल नहीं किया जा सकता।

यह संसाधन–पुस्तक इन्हीं प्रश्नों के बीच आकार लेती गई। यह केवल निर्देशिका नहीं है; यह चिंगारी की प्रक्रिया में उभरे सीखने और अनसीखने का दस्तावेज है, फैसिलिटेटर और फेलोज के साझा अनुभवों का साक्ष्य।

यह उन क्षणों को समेटती है जब किसी महिला कर्मी ने पहली बार अपने घर और कार्यस्थल की कहानी खुलकर कहीय जब किसी ने अपनी सत्ता या अपनी असहायता को पहचानाय जब किसी ने किसी 'सामान्य' मानी जाने वाली प्रथा पर प्रश्न उठाया; जब हँसी ने पीड़ा को चीर दिया; और जब आँसुओं ने स्पष्टता का रास्ता खोला। इन्हीं पलों ने बताया कि कौन–सा विषय महत्त्वपूर्ण है, कौन–सी पद्धति कारगर है, और नेतृत्व–निर्माण के लिए किन सिद्धांतों और प्रक्रियाओं की जरूरत है।

हमने यह पुस्तक उनके लिए लिखी है जो ऐसे समावेशी, सहभागी और नारीवादी नेतृत्व की प्रक्रिया बनाना चाहते हैं, जहाँ सिद्धांत, राजनीति, प्रक्रिया और उद्देश्य नारीवादी मूल्यों से संचालित हों। यह उन संगठनों और संस्थानों के लिए है जो ज़मीनी महिला कर्मियों को, एक महिला और एक कर्मी दोनों रूपों में, केंद्र में रखकर धीमा, धैर्यपूर्ण एवं निरंतर चलने वाला कार्य करना चाहते हैं।

यह फैसिलिटेटर के लिए है जो ऐसी प्रक्रियाएँ सँभालना चाहते हैं जहाँ महिलाएँ अपनी जीवन–यात्रा साझा कर सकें और साथ ही जाति, वर्ग, धर्म, क्षमता और ब्राह्मणवाद जैसी संरचनाओं में निहित अपने विशेषाधिकारों पर भी आलोचनात्मक दृष्टि डाल सकें।

यह उन ज़मीनी कर्मियों के लिए है, जो यह समझना चाहती/चाहते हैं कि नेतृत्व को पोषित करने में कितना दृश्य और अदृश्य श्रम लगता है। खासकर उनके बीच, जिन्हें सत्ता के ढाँचे नेतृत्व तक पहुँचने की अनुमति नहीं देते, और जिन्हें स्वयं को नेतृत्व की भूमिका में देखने की कल्पना से भी वंचित रखा गया है।

अंततः यह पुस्तक स्मृति भी है और मार्गदर्शिका भी। चिंगारी ने हमें दिखाया कि नेतृत्व केवल प्रशिक्षण से नहीं पनपता। वह तब अंकुरित होता है जब किसी को देखा, सुना और थामा जाता है। जब अनुभवों को राजनीतिक अर्थ दिया जाता है।

चिंगारी एक चिंगारी थी। यह पुस्तक सुनिश्चित करती है कि यह चिंगारी दूसरी चिंगारियों को सुलगाती रहे।

# चिंगारी क्या है?
# उसकी प्रक्रिया क्या थी?

चिंगारी एक जेंडर ट्रांसफॉर्मेटिव लीडरशिप (GTL) कार्यक्रम है, जिसे ICRW एशिया और WGH इंडिया ने मिलकर इस उद्देश्य से तैयार किया कि भारत के टियर–2 और टियर–3 शहरों में समुदाय आधारित स्वास्थ्य संगठनों के साथ काम कर रही युवा महिलाओं के बीच नेतृत्व का निर्माण और विस्तार किया जा सके।

भारत के स्वास्थ्य कार्यबल का लगभग 70 प्रतिशत हिस्सा महिलाएँ हैं, फिर भी नेतृत्व पदों पर उनकी उपस्थिति मात्र 25 प्रतिशत है। वे महिलाएँ, जो भारत की स्वास्थ्य व्यवस्था की रीढ़ हैं, उनमें से मुश्किल से हर चौथी किसी नेतृत्व भूमिका तक पहुँच पाती है। यह विरोधाभास संयोग नहीं है। ICRW के अध्ययन "Barriers to Breakthroughs: Women's Leadership Journeys in Indian Healthcare Organizations" ने बार–बार यह उजागर किया है कि जेंडर के नियम–कायदे, परिवार और संस्थानों से समर्थन की कमी, तथा कार्यस्थलों की वह संस्कृति जो प्रतिस्पर्धा, आक्रामकता और महिलाओं की आवाज को अनसुना या बीच में काट देने जैसी 'मर्दाना' मूल्यों पर टिकी होती है – महिलाओं की नेतृत्व–यात्रा को कमजोर कर देती है।

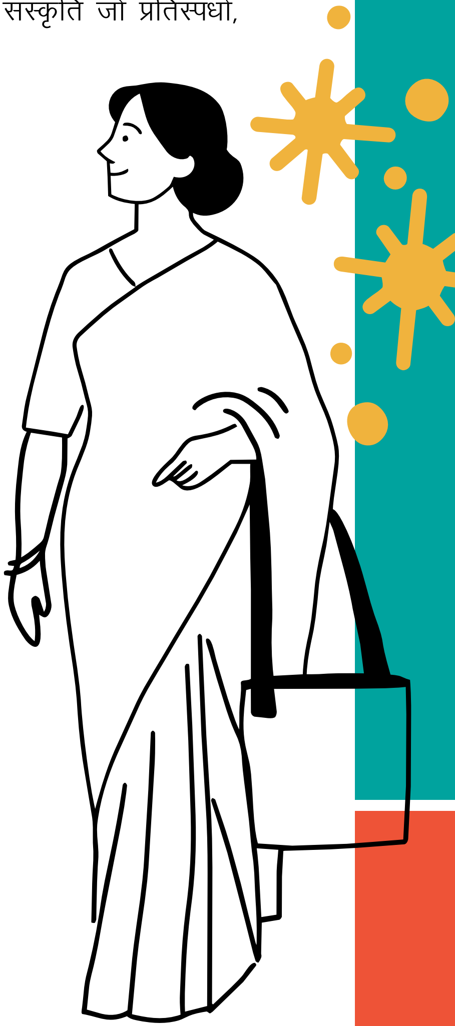

इसके विपरीत, जेंडर ट्रांसफॉर्मेटिव प्रक्रियाएँ, समावेशी पर्यवेक्षण और नारीवादी मेंटरशिप महिलाओं के विकास के नए रास्ते खोलते हैं। वे ऐसे वातावरण रचते हैं जहाँ महिला अपनी क्षमता को पहचान सके, उसे अभिव्यक्त कर सके और आगे बढ़ा सके।

इसी शोध को आधार बनाकर चिंगारी ने टियर–2 और टियर–3 शहरों में CBOs और NGOs के साथ कार्यरत 46 ज़मीनी महिला स्वास्थ्य कर्मियों को, उनकी पूरी विविधता सहित साथ जोड़ा। ये महिलाएँ अपने समुदायों में अक्सर सबसे पहले पहुँचने वाली कर्मी होती हैं। वे अस्थिर और असुरक्षित परिस्थितियों में काम करती हैं, जिसमें शामिल हैः कम वेतन, अनुबंध आधारित रोजगार, पेशागत अदृश्यता, और घर व कार्यस्थल में गढ़ी हुई जेंडर आधारित अपेक्षाएँ।

फिर भी, उनके भीतर नेतृत्व की अपार संभावनाएँ हैं, संघर्ष से उपजी दृढ़ता है, और स्थानीय अनुभव से अर्जित ज्ञान भी। चिंगारी ने एक ऐसा सहभागी और समावेशी स्थान रचने का प्रयास किया, जहाँ इस संभावना को पहचाना जाए, पोषित किया जाए और सशक्त बनाया जाए।

## कार्यक्रम के उद्देश्यः

- CBOs से जुड़ी युवा महिला स्वास्थ्य कर्मियों को जेंडर समता और समानता को आगे बढ़ाने के लिए आवश्यक उपकरणों और संसाधनों से सशक्त करना।
- एक सुरक्षित और संवादात्मक स्थान उपलब्ध कराना, जहाँ प्रतिभागी नारीवादी सिद्धांतों, सत्ता–संबंधों और जेंडर आधारित स्वास्थ्य असमानताओं पर खुलकर विचार कर सकें।

- युवा महिलाओं जिन चुनौतियों का सामना कर रही हैं, उनकी पहचान करना, उनकी जटिलता को समझना और उनसे झूझने के लिए उन्हें मजबूती देना।
- प्रतिभागियों को स्वयं को परिवर्तनकारी एजेंट के रूप में देखने के लिए तैयार करना – ताकि नेतृत्व भूमिकाओं में महिलाओं की भागीदारी बढ़े और स्वास्थ्य परिणाम अधिक जेंडर–न्यायपूर्ण बन सकें।

दो बैचों में कुल 46 महिलाएँ इस यात्रा का हिस्सा बनीं। वे ऐसे सामुदायिक स्वास्थ्य संगठनों का प्रतिनिधित्व करती थीं, जो हाशियाकरण का सामना कर रहे और बहिष्कृत समुदायों के साथ गहराई से काम करते हैं। इनमें से 44 ने स्वयं को सिस–वुमन के रूप में पहचाना, एक ने ट्रांसजेंडर महिला के रूप में और एक ने इंटरसेक्स व्यक्ति के रूप में अपनी पहचान व्यक्त की। एक फेलो विकलांग थीं।

बहुत–सी प्रतिभागियों के लिए यह पहला अवसर था जब वे कार्यस्थल पर भेदभाव, अपनी आकांक्षाओं, थकान, असमंजस और संभावनाओं पर खुलकर बोल सकीं।

चिंगारी की अवधि छह महीने थी। इसकी शुरुआत अप्रैल 2025 में दिल्ली में आयोजित एक आवासीय कार्यशाला से हुई, जिसके बाद पंद्रह–पंद्रह दिनों के अंतराल पर जूम के माध्यम से बारह ऑनलाइन सत्र आयोजित किए गए।

कार्यक्रम में मिश्रित–पद्धति शोध (mixed-methods research) को भी समाहित किया गया। इसमें सर्वेक्षणों (पूर्व और पश्चात परीक्षण, तथा प्रत्येक मॉड्यूल और आवासीय कार्यशाला के बाद फीडबैक सर्वे), गहन साक्षात्कार (in-depth interviews) और चिंतन–कार्यशालाओं (reflection workshops) के माध्यम से डेटा एकत्र किया गया। इस शोध का उद्देश्य मात्र मूल्यांकन नहीं था, बल्कि यह समझना था कि प्रतिभागियों ने इस पूरी यात्रा को कैसे अनुभव किया – उनके भीतर क्या बदला, क्या प्रश्न उठे, क्या स्पष्ट हुआ।

चिंगारी ने ढाँचागत हकीकतों को केंद्र में रखा। उसने यह स्पष्ट किया कि महिलाएँ बाधाओं का सामना इसलिए नहीं करतीं कि उनमें क्षमता की कमी है, बल्कि इसलिए कि हमारे सामाजिक, राजनीतिक और संस्थागत ढाँचे असमान हैं। इसलिए नेतृत्व को केवल व्यक्तिगत गुण या पदवी के रूप में नहीं, बल्कि उन सामाजिक–सांस्कृतिक और राजनीतिक परिस्थितियों के भीतर समझा गया जो महिलाओं के कार्यस्थल पर उनके अधिकारों को आकार देती हैं।

नारीवादी नेतृत्व की चिंगारी मात्र पदनामों से नहीं जलती; वह तब प्रज्वलित होती है जब महिलाएँ स्वयं को ऐसे व्यक्तियों के रूप में पहचानती हैं जो जाति, जेंडर, धर्म और ऐबेलिस्म पर आधारित अन्यायपूर्ण संरचनाओं और व्यवस्थागत असमानताओं को देख एवं समझ सकती हैं।

वह तब और उज्ज्वल होती है जब महिलाएँ यह पहचान लेती हैं कि अधिकार और संरक्षण उनके एक कर्मी होने की पहचान का अभिन्न हिस्सा हैं। और जब वे इन अधिकारों की माँग केवल अपने लिए नहीं, बल्कि हर उस व्यक्ति के लिए करती हैं जो किसी–न–किसी रूप में हाशिये पर धकेला गया है।

इसी कारण चिंगारी ने नेतृत्व को एक पोजीशन और एक अभ्यास दोनों रूपों में कल्पित करने की राजनीति को स्पष्ट रूप से रेखांकित किया। कार्यक्रम ने उन प्रथाओं और प्रक्रियाओं को सजगता से विकसित किया, जो नारीवादी नेतृत्व की कल्पना को आकार देती हैं।

साथ ही, फेलोज के पर्यवेक्षकों और संगठनात्मक नेतृत्व के लिए तीन विशेष कार्यशालाएँ भी आयोजित की गईं। यह बहु–स्तरीय दृष्टिकोण इस समझ

पर आधारित था कि नेतृत्व केवल व्यक्तिगत स्तर पर विकसित नहीं होता; उसे संस्थागत प्रतिबद्धता, सामूहिक समर्थन और उत्तरदायी संरचनाओं की आवश्यकता होती है।

चिंगारी ने यही रेखांकित किया कि जब तक ढाँचे नहीं बदलते, नेतृत्व की संभावनाएँ अधूरी रह जाती हैं। और जब ढाँचे बदलने की प्रक्रिया में महिलाएँ स्वयं अपनी आवाज और अपनी सत्ता को पहचान लेती हैं, तब एक चिंगारी सचमुच आग बन सकती है।

## इस संसाधन–पुस्तक की संरचना

यह संसाधन–पुस्तक चिंगारी कार्यक्रम के बुनियादी विचारों और सिद्धांतों पर आधारित है। इसकी शुरुआत उन सोच और समझ से होती है, जिन्होंने चिंगारी को जन्म दिया। उन विचारों से, जिन्होंने चिंगारी को आकार दिया और धीरे–धीरे अभ्यास, प्रक्रिया और चिंतन की ओर अग्रसर किया।

सबसे पहले पुस्तक नारीवादी नेतृत्व के बुनियादी निर्माण–खंडों को रेखांकित करती है: जेंडर, सत्ता, हाशियाकरण, काम की दुनिया, और नारीवादी काम। ये अवधारणाएँ केवल सैद्धांतिक चर्चा भर नहीं हैं; वे कार्यक्रम को कार्यस्थलों में मौजूद असमानताओं को संरचनात्मक सच्चाइयों से जोड़ती हैं। यहीं से पुस्तक यह स्पष्ट करती है कि ज़मीनी महिला कर्मियों के लिए नेतृत्व–विकास को उनके कामकाजी परिवेश से अलग करके नहीं समझा जा सकता। जेंडर, जाति, वर्ग, धर्म और क्षमता पर आधारित असमानताएँ, जो कार्यस्थलों, समुदायों और स्वास्थ्य तंत्र में गहराई से मौजूद हैं, नेतृत्व की संभावनाओं को आकार देती हैं।

इसके बाद पुस्तक पद्धति की ओर मुड़ती है। यह अध्याय उस सीखने–सीखाने की प्रक्रिया का विस्तार से वर्णन करता है जिसने पूरे कार्यक्रम को एक सूत्र में बाँधे रखा। यहाँ पद्धति को केवल शिक्षण–तकनीक नहीं, बल्कि सीखने–सीखाने का दर्शन और राजनीति माना गया है। यह अध्याय प्रश्न उठाता है – किसी पद्धति को नारीवादी क्या बनाता है? उसका आधार जीवन–अनुभवों में कैसे निहित होता है? वह विश्लेषण, आलोचनात्मक चिंतन और भावनात्मक संलग्नता को किस प्रकार साथ लेकर चलती है?

यह फैसिलिटेशन की राजनीति पर भी बात करता है। आनंद और उल्लास की उतनी ही महत्ता जितनी कि चिंतन के माध्यम से असुविधा पैदा करने की आवश्यकता; जीवन के अनुभवों की शक्ति; और इस बात की जरूरत कि भावनाओं और ढाँचों, दोनों को एक साथ थामा जाए। साथ ही, यह भी बताया गया है कि चिंगारी ने इस नारीवादी पद्धति को व्यवहार में कैसे रूपांतरित किया। किन विधियों का प्रयोग हुआ, उनके पीछे क्या सजगता थी, और विशेषकर ऑनलाइन सत्रों में किन चुनौतियों और सीमाओं का सामना करना पड़ा।

इसके बाद पुस्तक यह बताती है कि जब किसी नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम में शोध को जोड़ा जाता है, तो वह यह दिखाने में मदद करता है कि नेतृत्व कैसे धीरे–धीरे बनता है, कभी सीधा, कभी उलझा हुआ, और कई बार असुविधाजनक तरीकों से। यहाँ शोध को सिर्फ असर मापने का एक बाहरी तरीका नहीं माना गया है, बल्कि एक नारीवादी प्रक्रिया की तरह देखा गया है, जो सीख को गहरा करता है, नेतृत्व के पुराने और तय विचारों पर सवाल उठाता है, और जटिल बातों को आसान बनाकर छिपाने के बजाय उन्हें स्वीकार करता है।

इसके बाद पुस्तक उन जरूरी प्रक्रियाओं की बात करती है, जिनसे कोई नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम सच में चल पाता है। इसमें यह समझने पर जोर है कि प्रतिभागियों की जरूरतें क्या हैं, उनके साथ भरोसा कैसे बनाया जाए, और कार्यक्रम को मजबूत और टिकाऊ कैसे रखा जाए। यह साफ कहा गया है कि नारीवादी नेतृत्व सिर्फ अच्छे विषय या अच्छी पद्धति से नहीं बनता, इसके लिए सोच–समझकर बनाई गई कार्यक्रम की प्रक्रियाएँ भी उतनी ही जरूरी हैं। साथ ही, यह भी चर्चा है कि अगर कोई संगठन अपने संदर्भ में नारीवादी नेतृत्व को बढ़ाना चाहता है, तो उसे कार्यक्रम के स्तर पर कैसी प्रतिबद्धताएँ निभानी होंगी।

अंत में, यह पुस्तक चिंगारी से मिली हमारी मुख्य सीखों के साथ खत्म होती है। इसमें कार्यक्रम के दौरान जो अनुभव, चुनौतियाँ और बदलाव सामने आए, उन्हें समेटा गया है। इन सभी अध्यायों के जरिए यह कोशिश की गई है कि पाठक सिर्फ यह न जानें कि चिंगारी ने क्या किया, बल्कि यह भी समझें कि नारीवादी नेतृत्व कैसे और क्यों बनता है। कैसे विषय–वस्तु, पद्धति, प्रक्रिया और अधिकार–आधारित सतत सीख इसे आकार देती हैं।

## इस पुस्तक का उपयोग कैसे करें?

यह संसाधन–पुस्तक कोई ऐसी चेकलिस्ट नहीं है, जिसे क्रमवार पूरा कर लेने से परिवर्तन की गारंटी मिल जाए। यह कोई तैयार साँचा भी नहीं है, जिसे हूबहू उतार लिया जाए। हम चाहते हैं कि पाठक इस पुस्तक को एक सहयात्री की तरह ग्रहण करें, ऐसा साथी, जो आपके साथ–साथ चले, जब आप अपने संदर्भ में किसी नारीवादी नेतृत्व–स्थल की कल्पना करें या उसकी योजना बनाएँ।

यह पुस्तक चिंगारी के मूल्यों और उसकी संरचना को समेटते हुए एक समग्र मार्गदर्शिका बनाने का प्रयास है, ताकि पाठक नारीवादी नेतृत्व–निर्माण के "क्यों", "क्या" और "कैसे" को समझ सकें। इसे लचीले ढंग से उपयोग करने के लिए रचा गया है। संगठन अपनी परिस्थिति, अपनी क्षमता और जिन महिलाओं के साथ वे काम करते हैं, उनकी जरूरतों के अनुसार इसे रूपांतरित कर सकते हैं।

इस पुस्तक में प्रवेश करने के अनेक रास्ते हैं। आप चाहें तो शुरुआत से पढ़ते हुए अध्याय–दर–अध्याय उसी यात्रा से गुजरें, जिससे हम गुजरे। या आप किसी विशेष प्रश्न के साथ इसमें आएँ, जैसे:

"किसी विचार को कैसे समझाएँ?"
"सीखने–सीखाने की पद्धति को नारीवादी कैसे बनाएँ?"
"सुरक्षित जगह कैसे तैयार करें?"

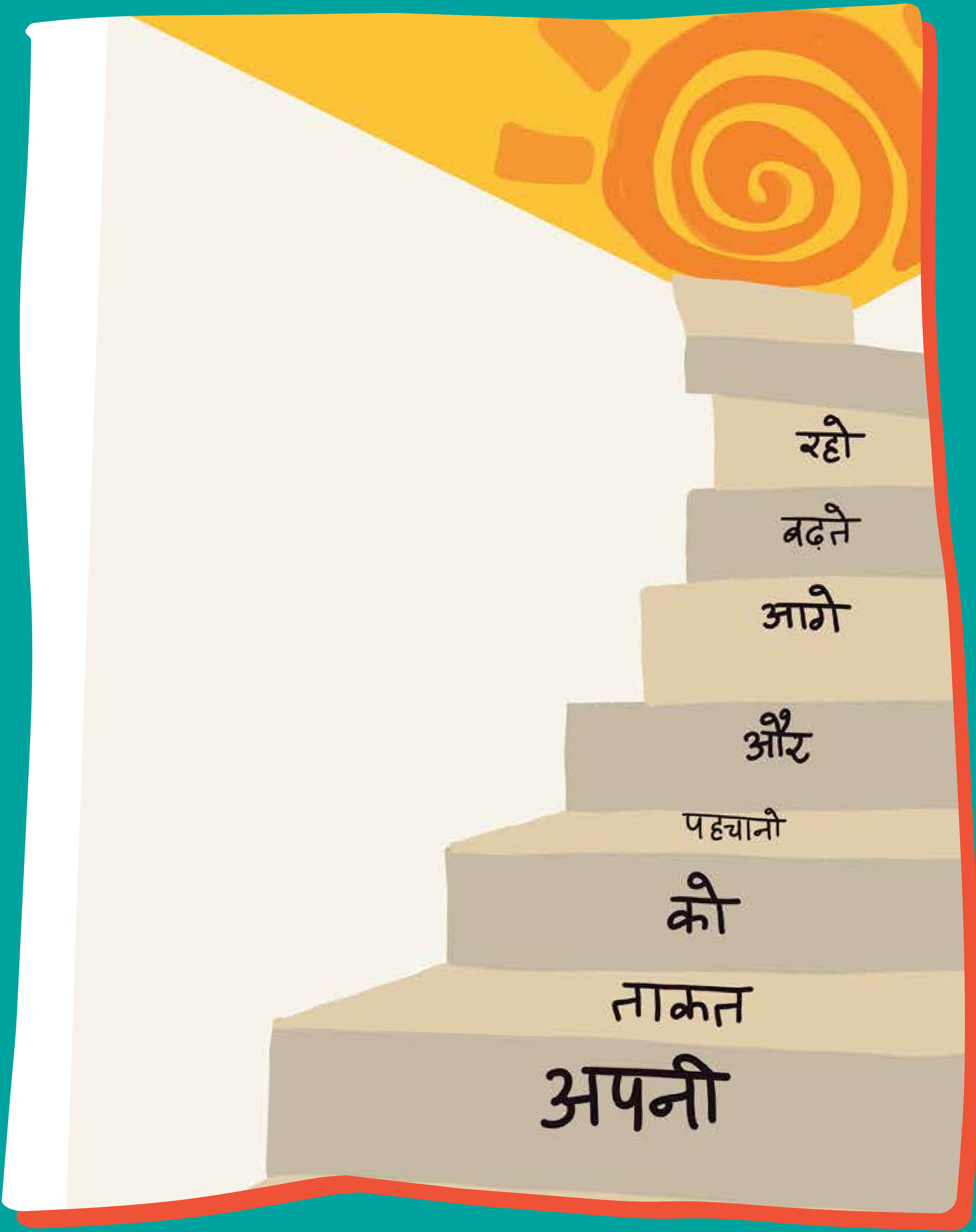
अपनी
ताकत
को
पहचानो
और
आगे
बढ़ते
रहो

# नेतृत्व करना मेरी ताकत है

यदि आप एक फैसिलिटेटर हैं, तो यह पुस्तक आपको यह समझने में सहायक हो सकती है कि नारीवादी सिद्धांतों पर आधारित प्रक्रियाएँ कैसे सँभाले जाते हैं। आप इसके माध्यम से ऐसे नेतृत्व–यात्राएँ रच सकते हैं, जो प्रतिभागियों के जीवन–अनुभवों और संरचनात्मक असमानताओं से जुड़ी हों। विषय–वस्तु वाले अध्याय अवधारणाओं को स्पष्टता और संदर्भ के साथ प्रस्तुत करने में मदद करेंगे, जबकि पद्धति वाला अध्याय ऐसे सत्र गढ़ने में सहारा देगा जहाँ चिंतन, संवाद और आलोचनात्मक सोच को प्राथमिकता मिले, और जहाँ महिलाएँ स्वयं को पूरी तरह लेकर उपस्थित हो सकें। यह आपको याद दिलाएगा कि नारीवादी स्थानों में फैसिलिटेशन "सामग्री पहुँचाने" का काम नहीं है; यह ध्यान से सुनने, कोमलता से प्रश्न उठाने और जटिलताओं के लिए जगह बनाने की प्रक्रिया है।

यदि आप किसी संगठन से जुड़े हैं या नेतृत्व कार्यक्रमों में काम करते हैं, तो यह पुस्तक आपको उन प्रक्रियाओं की झलक दिखाएगी जो परदे के पीछे चलती हैं। यह बताएगी कि ऐसा नेतृत्व कार्यक्रम चलाने के लिए कितनी सजगता चाहिए, जो उन्हीं असमान और पितृसत्तात्मक ढाँचों को दोहराए नहीं, जिन्हें वह चुनौती देना चाहता है। यह योजना बनाने और कार्यक्रम संचालित करने के लिए मार्गदर्शन कर सकती है। प्रक्रियाओं वाला अध्याय साफ करता है कि संगठन को क्या–क्या प्रतिबद्धताएँ निभानी होंगी – समय, भावनात्मक श्रम, टीम की एकरूपता, नैतिक विचार और संस्थागत समर्थन। इन अंतर्दृष्टियों के आधार पर आप अपनी तैयारी देख सकते हैं, जिम्मेदारी से योजना बना सकते हैं, और ऐसे ढाँचे तैयार कर सकते हैं जहाँ नारीवादी नेतृत्व फल–फूल सके।

यदि आप शोधकर्ता हैं, यह पुस्तक दिखाती है कि साक्ष्य को किस तरह नैतिक और संवेदनशील तरीके से नेतृत्व कार्यक्रम में जोड़ सकते हैं। शोध सिर्फ प्रभाव–आकलन या मॉनिटरिंग का उपकरण नहीं है। यह सीख को गहरा करने, दिशा स्पष्ट करने, और क्षमता–निर्माण को अनुभवजन्य समझ से जोड़ने का माध्यम बन सकता है। अक्सर क्षमता–निर्माण और शोध का मेल केवल आंकड़ों तक सीमित रह जाता है। चिंगारी में हमने इसे सिर्फ यह जानने के लिए नहीं जोड़ा कि क्या काम हुआ और क्या नहीं, बल्कि यह समझने के लिए जोड़ा कि जब विविध पृष्ठभूमियों के फेलो और फैसिलिटेटर साथ आते हैं, तब सीख कैसे खुलती और विकसित होती है।

यदि आप फंडर या सहयोगी हैं, यह पुस्तक आपको बताएगी कि ज़मीनी महिला कर्मियों के लिए नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम केवल तकनीकी हस्तक्षेप नहीं हैं। यह रिश्तों, राजनीति और भावनाओं से जुड़ी प्रक्रिया है। यह आपके निर्णयों को संवेदनशील और सूक्ष्म बना सकती है, ताकि आप समझ सकें कि सार्थक प्रभाव के लिए समय, भावनात्मक श्रम और राजनीतिक प्रतिबद्धता कितनी जरूरी है।

आप इस पुस्तक के किसी भी हिस्से की प्रतिलिपि बना सकते हैं, अनुवाद कर सकते हैं या अपने संदर्भ में ढाल सकते हैं। महत्त्व इसकी नकल में नहीं, बल्कि उस सजगता में है, जिससे आप इसके विचारों को ज़मीनी महिला कर्मियों के अधिकार और न्याय के लिए प्रयोग में लाएं।

इस पुस्तक का इस्तेमाल वैसे करें जैसे आपको सबसे अच्छा लगे। उस पर टिप्पणी करें, सवाल उठाएँ, इसे अपने संदर्भ में बदलें। इसे आपको सोचने, चुनौती देने, कभी कोमल, कभी तीव्र, और कभी अप्रत्याशित तरीके से प्रेरित करने दें।

यह याद दिलाए कि नेतृत्व बड़े पद से नहीं, बल्कि उस छोटे क्षण से शुरू होता है जब हम जेंडर, जाति, वर्ग, धर्म और क्षमता पर आधारित असमानताओं को पहचानते हैं। वह एक कहानी से शुरू हो सकता है, जो किसी की दुनिया देखने का नजरिया बदल दे। वह उस छोटे निर्णय से भी शुरू हो सकता है, जब कोई अगली बार थोड़ी ऊँची आवाज में बोलने का साहस करे।

सबसे बढ़कर, यह पुस्तक आपको स्मरण कराए कि नारीवादी नेतृत्व निर्देश से नहीं, आमंत्रण से फलता–फूलता है। और वह आमंत्रण अब आपके हाथों में है।

## प्रस्तावित अध्ययन सामग्री:

**Uppal, R., Anwer, S., Verma, R., & Kedia, S. (2024).** From barriers to breakthroughs: Women's leadership journeys in Indian healthcare organizations. International Center for Research on Women.

https://www.icrw.org/publications/from-barriers-to-breakthroughs-womens-leadership-journeys-in-indian-healthcare-organizations/

**Women in Global Health. (2023).** #SheShapes: The state of women and leadership in global health. Women in Global Health.

https://womeningh.org/wp-content/uploads/2023/03/The-State-of-Women-and-Leadership-in-Global-Health.pdf

**World Health Organization. (2019).** Delivered by women, led by men: A gender and equity analysis of the global health and social workforce. World Health Organization.
https://cdn.who.int/media/docs/default-source/health-workforce/delivered-by-women-led-by-men.pdf

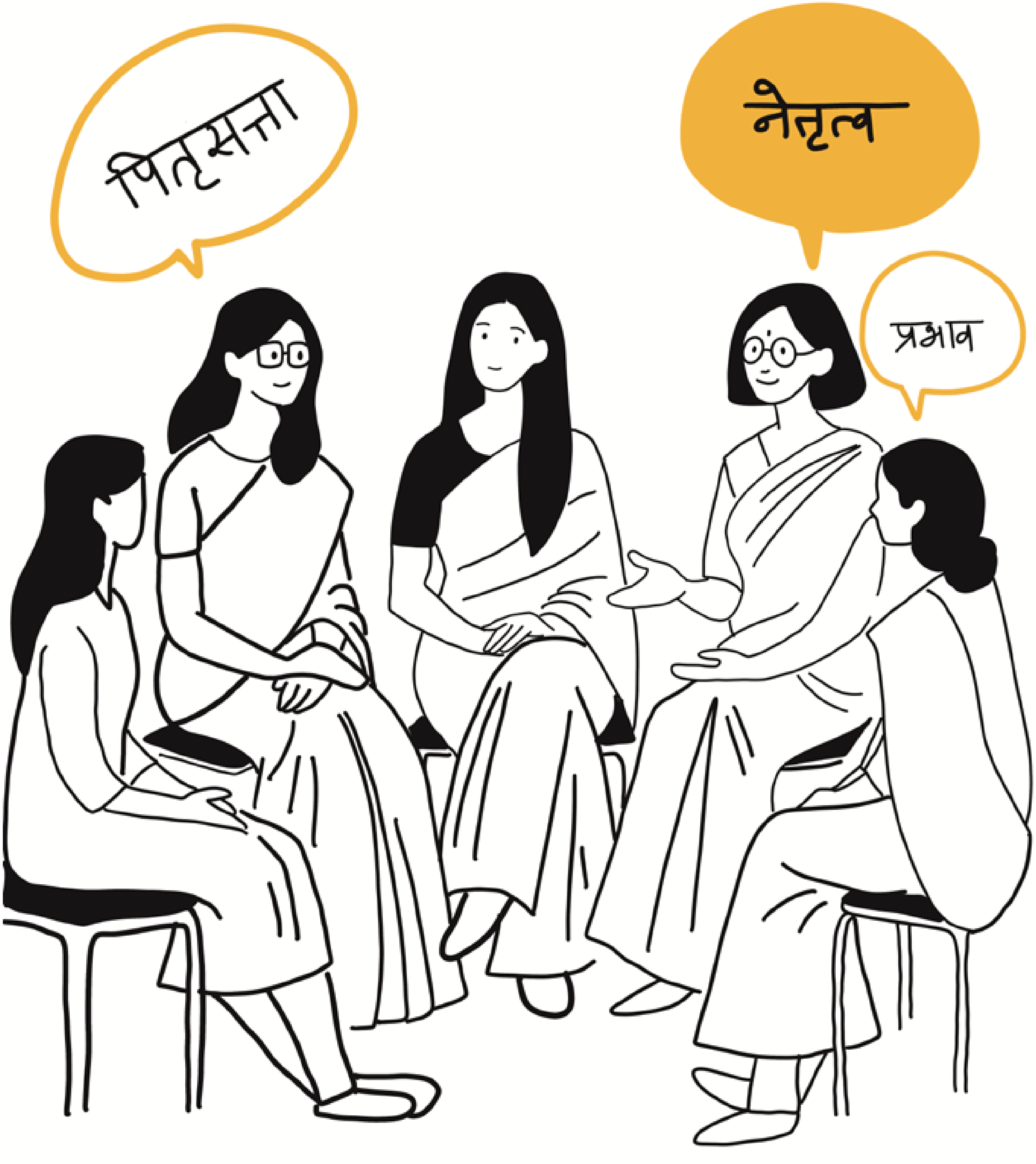
पितृसत्ता
नेतृत्व
प्रभाव

# अध्याय 1:

# नारीवादी नेतृत्व की नींव गढ़ना

> किसी भी सामाजिक रूप से गढ़ी हुई दुनिया को जानने का एक ही तरीका है – उसके भीतर से। हम कभी भी उसके बाहर खड़े होकर उसे नहीं समझ सकते।
>
> डोरोथी ई. स्मिथ (1987)

# चिंगारी का कंटेंट क्या था?

चिंगारी ने शुरुआत से ही यह पहचाना कि नारीवादी नेतृत्व की यात्रा वहाँ से शुरू नहीं होती जहाँ नेतृत्व दिखता है, बल्कि वहाँ से शुरू होती है जहाँ जीवन और काम पहले से आकार ले चुके होते हैं। इसलिए इस यात्रा की पहली शर्त थी उन ढाँचों को समझना, जिनके भीतर चिंगारी फेलोज काम करती हैं। क्योंकि यही ढाँचे उनके जीवन को बहुत पहले से गढ़ते हैं – उस समय से भी पहले, जब नेतृत्व की संभावना पैदा होती है।

ये ढाँचे तय करते हैं कि महिलाओं के सामने कौन से अवसर खुलते हैं, वे किन आकांक्षाओं को जन्म देती हैं, और उनके नेतृत्व की राहें कैसी बनती हैं।

चिंगारी से जुड़ने वाली महिलाएँ ज़मीनी स्तर की स्वास्थ्य कर्मी थीं, जो अलग–अलग समुदाय आधारित संगठनों में, छोटे और मध्यम शहरों में काम कर रही थीं। इनमें नर्स, कार्यक्रम से जुड़ी कार्यकर्ता, आउटरीच वर्कर, काउंसलर और फील्ड कोऑर्डिनेटर शामिल थीं। उनका काम सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था को थामे रखता है, लेकिन इस काम में उनका श्रम अक्सर अदृश्य, अनौपचारिक और कम आंका हुआ रह जाता है।

चिंगारी में आने वाली महिलाएँ एक तरह की दोहरी विरासत के साथ आती हैं – वे महिलाएँ हैं, और वे ऐसे क्षेत्र की कामगार हैं जिसे स्त्रीकृत, कम मूल्य वाला और मेहनतकश माना जाता है। वे उस काम की दुनिया का हिस्सा हैं जहाँ जिम्मेदारी बहुत है, लेकिन पहचान कमय जहाँ निर्णय लेने की सत्ता बराबर बंटी नहीं है। इनमें से कई ऐसी संस्थाओं में काम कर रही थीं जहाँ नेतृत्व के रास्ते बहुत सीमित थे। उनकी आगे बढ़ने की संभावना सिर्फ उनकी क्षमता पर निर्भर नहीं थी, बल्कि परिवार की जिम्मेदारियों, कार्यस्थल की संस्कृति, जातिगत दर्जाबंदी, पितृसत्ता, और संस्थागत पहचान की कमी जैसे कारकों से तय होती थी।

आपकी आवाज़ मायने रखती हैं

वे नेतृत्व की जगहों पर इसलिए नहीं पहुँच पा रही थीं क्योंकि उनका जीवन और काम ऐसे ढाँचों से संचालित था जो पहले से ही तय कर चुके थे कि उन्हें कहाँ और कैसे होना चाहिए। उनके जीवन में देखभाल की जिम्मेदारियाँ, स्वास्थ्य व्यवस्था के भीतर जातिगत पदानुक्रम, धार्मिक और सामाजिक नियम, और संस्थाओं की ऐसी संस्कृतियाँ शामिल थीं जो निर्णय लेने की सत्ता को उनसे दूर रखती थीं।

चिंगारी के डिजाइन को आकार देने वाले एक संगठनात्मक अध्ययन ने यह भी दिखाया कि स्वास्थ्य कार्यबल में महिलाएँ बड़ी संख्या में अग्रिम पंक्ति की भूमिकाओं में मौजूद हैं, लेकिन नेतृत्व की भूमिकाओं में उनकी उपस्थिति बहुत कम है। इसी संदर्भ में चिंगारी के भीतर यह जरूरी हो गया कि नेतृत्व की बातचीत को व्यक्तिगत गुणों से अलग किया जाए, और उसकी जगह उन संरचनात्मक स्थितियों को केंद्र में रखा जाए जो महिलाओं के जीवन को प्रभावित करती हैं। जैसे – घर में बिना वेतन का देखभाल का काम, अनौपचारिक रोजगार, घर और कार्यस्थल पर भेदभाव, श्रम सुरक्षा का अभाव, कार्यस्थल पर हिंसा, और संस्थागत सत्ता तक सीमित पहुँच।

**इसका मतलब था कि नेतृत्व की प्रक्रिया व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा से शुरू नहीं हो सकती थी। उसे संरचनात्मक समझ से शुरू होना होगा।**

इसीलिए चिंगारी ने सबसे पहले इन वास्तविकताओं को नाम दिया। यह मानते हुए कि नेतृत्व तब तक नहीं बन सकता, जब तक हम यह न समझें कि जेंडर, जाति, सत्ता और काम की दुनिया किस तरह एक–दूसरे से जुड़कर महिलाओं के अवसरों, चुनावों और सीमाओं को गढ़ते हैं।

चिंगारी के सत्रों में जिन अवधारणाओं पर बातचीत हुई, वे थीं – जेंडर और पितृसत्ता, सत्ता, हाशियाकरण और इंटेरसेक्शनलिटी, महिला कामगार और उनके श्रम अधिकार, नारीवादी एक्शन, और नारीवादी नेतृत्व। ये अवधारणाएँ चिंगारी के हर सत्र की रीढ़ बनीं। इनका चयन सोच–समझकर किया गया था, ताकि हम उन असमानताओं को समझ सकें जो हमारे चारों ओर मौजूद हैं, और खासतौर पर स्वास्थ्य क्षेत्र में काम करने वाली ज़मीनी महिला कामगारों के जीवन में गहराई से अनुभव की जाती हैं।

चिंगारी का कंटेंट इन महिलाओं के जेंडर आधारित अनुभव और उनके कामगार होने के अनुभव को कई बातचीतों के केंद्र में लाता है। इसमें यह समझने की कोशिश शामिल थी कि संगठनों में सत्ता कैसे चलती है; जाति, जेंडर और धर्म कैसे दृश्यता और विकास को प्रभावित करते हैं; कार्यस्थल पर हिंसा क्या रूप लेती है; श्रम अधिकारों को नारीवादी नेतृत्व से कैसे जोड़ा जाएय नारीवादी मूल्यों को कैसे पहचाना जाए; और यह कि नेतृत्व केवल व्यक्तिगत कौशल से नहीं, बल्कि संरचनात्मक सीमाओं से भी आकार लेता है।

सीखने की प्रक्रिया जानबूझकर ऊपर से नीचे ज्ञान देने वाले मॉडल से अलग रखी गई। इसके बजाय, इसने श्रम की राजनीति, महिला स्वास्थ्य कर्मियों के इतिहास, और जेंडर आधारित अपेक्षाओं को सामने रखा, ताकि प्रतिभागी पहले खुद को इन ढाँचों के भीतर पहचान सकें, और फिर बदलाव की कल्पना कर सकें।

## इस तरह, चिंगारी का कंटेंट तीन महत्वपूर्ण काम करता हैः

- यह महिलाओं को यह देखने में मदद करता है कि कार्यस्थल कोई तटस्थ जगह नहीं है, बल्कि एक जेंडर आधारित संस्थान है, जहाँ सत्ता, निर्णय और संसाधनों तक पहुँच बराबर नहीं होती।
- यह महिला कामगारों की उस क्षमता को मजबूत करता है जिससे वे कार्यस्थल की असमानताओं को पहचान सकें और उनका विश्लेषण कर सकें, बजाय इसके कि उन्हें अपनी कमी या असफलता मान लें।
- और यह स्थापित करता है कि नारीवादी नेतृत्व, श्रम अधिकार, सुरक्षा, गरिमा और संस्थागत बदलाव से अलग नहीं हो सकता।

यह अध्याय इस कार्यक्रम की मूल बात को सामने लाता है – नारीवादी नेतृत्व को समझना तब तक संभव नहीं है, जब तक हम उन ढाँचों को न समझें जिनमें महिलाएँ जीती हैं, काम करती हैं, बातचीत करती हैं और नेतृत्व करती हैं।

# हमने यह कंटेंट क्यों चुना?

चिंगारी ने नेतृत्व को व्यक्तिगत कौशलों के सेट के रूप में नहीं देखा। इसकी शुरुआत एक अलग समझ से हुई – नेतृत्व को ढाँचे आकार देते हैं, उसे संभव भी बनाते हैं और सीमित भी करते हैं।

जेंडर, जाति, सत्ता और काम की संरचना ऐसी बाहरी ताकतें नहीं हैं जिन्हें केवल आत्मविश्वास या कौशल से पार किया जा सके। ये सक्रिय ढाँचे हैं, जो रोजमर्रा के जीवन में काम करते हैं – यह तय करते हैं कि किसका श्रम मूल्यवान है, किसकी आवाज सुनी जाएगी, किसे आगे बढ़ाया जाएगा, और किसे चुप करा दिया जाएगा।

इसलिए चिंगारी का ढाँचा इस तरह बनाया गया कि ये संरचनाएँ दिखाई देने लगें, और नेतृत्व को एक राजनीतिक और संस्थागत प्रश्न की तरह समझा जाए।

कार्यक्रम ने यह भी माना कि महिलाओं की नेतृत्व यात्राएँ सत्ता के ढाँचों के भीतर ही आकार लेती हैं। परिवार, संगठन, कानून और सामाजिक मानदंड – ये सभी स्तर एक साथ काम करते हैं। इसलिए नेतृत्व को समझना इन सबके बीच के रिश्तों को समझे बिना संभव नहीं है।

इस ढाँचे के केंद्र में काम और कार्यस्थल को जेंडर आधारित संस्थान के रूप में समझना था। स्वास्थ्य व्यवस्था में महिलाओं का श्रम, खासकर देखभाल और अग्रिम पंक्ति के कामों में, बहुत अहम है। इसलिए "काम की दुनिया" को बातचीत के केंद्र में रखा गया – और कार्यस्थल को सिर्फ दफ्तर तक सीमित नहीं माना गया, बल्कि घर, समुदाय, फील्ड और अनौपचारिक जगहों तक फैलाया गया।

यह बदलाव इसलिए जरूरी था क्योंकि कई प्रतिभागी ऐसे स्थानों पर काम करती थीं जहाँ औपचारिक सुरक्षा या नियम बहुत कमजोर थे, और सत्ता अक्सर अनकहे नियमों, दर्जाबंदी और सामाजिक मानदंडों के जरिए चलती थी।

चिंगारी में सत्ता को एक रिश्तों में बहने वाली, बदलती हुई चीज के रूप में देखा गया। सत्ता सिर्फ नियंत्रण नहीं है, बल्कि यह रिश्तों, भूमिकाओं, शरीरों और संस्थाओं के बीच प्रवाहित होती है। प्रतिभागियों को यह समझने के लिए प्रोत्साहित किया गया कि उनके कार्यस्थल में सत्ता कैसे काम करती है – कौन उसे रखता है, कैसे उसका इस्तेमाल होता है, और कैसे उसे बदला जा सकता है। इस प्रक्रिया में सत्ता के दमनकारी रूप भी सामने आए, जैसे बहिष्करण, नियंत्रण और हिंसा, एवं साथ ही उसके रचनात्मक रूप भी, जैसे सामूहिकता, एकजुटता और रोजमर्रा के प्रतिरोध।

## बिल्डिंग ब्लॉक 1:

# जेंडर और पितृसत्ता

कार्यस्थल और नेतृत्व में असमानताएँ सिर्फ संगठन की समस्याएँ नहीं हैं। वे एक बड़े जेंडर आधारित सामाजिक ढाँचे का परिणाम हैं, जो जीवन के हर क्षेत्र में श्रम, सत्ता और अवसर को प्रभावित करता है। जेंडर और पितृसत्ता कार्यस्थलों की अदृश्य संरचना हैं। जेंडर यह तय करता है कि कौन देखभाल का काम करेगा, किसके श्रम को कौशल माना जाएगा, और किसे निर्णय लेने का अधिकार मिलेगा। अगर जेंडर को समझे बिना नेतृत्व पर काम किया जाए, तो यह जोखिम रहता है कि एक संरचनात्मक समस्या को व्यक्तिगत कमी मान लिया जाए।

ये पैटर्न घर से शुरू होते हैं और कार्यस्थल तक फैलते हैं। जेंडर यह तय करता है कि कौन सेवा और देखभाल करेगा, और कौन रणनीतिक फैसले लेगा। पितृसत्ता यह सुनिश्चित करती है कि किसका श्रम मूल्यवान माना जाएगा और किसका समय और शरीर आसानी से खर्च किया जा सकता है। इसका परिणाम यह होता है कि महिलाएँ काम की दुनिया में पहले से ही कुछ कमियों के साथ प्रवेश करती हैं – कम समय, कम संस्थागत समर्थन, और नेतृत्व तक कम रास्ते।

जेंडर बाइनरी सिर्फ शरीरों को वर्गीकृत नहीं करती, वह अर्थ और मूल्य भी तय करती है। पुरुषत्व को अक्सर सत्ता, तर्क, नियंत्रण और सार्वजनिक जीवन से जोड़ा जाता है। स्त्रीत्व को देखभाल, धैर्य, त्याग और आज्ञाकारिता से। समाज हमें सिखाता है कि कौन सा व्यवहार "उचित" है। पुरुष अच्छे नेता होते हैं, महिलाएँ अच्छी देखभाल करने वाली होती हैं। पुरुष निर्णय लेते हैं, महिलाएँ सहयोग करती हैं।

ये विचार सिर्फ विचार नहीं रहते। ये तय करते हैं:

- कौन क्या काम करेगा
- किसे कितना वेतन मिलेगा
- किसे पदोन्नति मिलेगी
- किसे "स्वाभाविक" नेता माना जाएगा

# श्रम का विभाजन

पितृसत्ता यह सुनिश्चित करती है कि यह विभाजन केवल अंतर न रह जाए, बल्कि असमानता बन जाए। वह जेंडर बाइनरी के नियमों को दर्जाबंदी और नियंत्रण में बदल देती है। इस तरह महिलाओं का श्रम जिम्मेदारी में दिखता है, लेकिन अधिकार में नहीं।

पितृसत्ता कोई एक व्यक्ति नहीं है। यह एक सामाजिक और संस्थागत व्यवस्था है जो पुरुषत्व को प्राथमिकता देती है और स्त्रीत्व को कम महत्व देती है। यह श्रम, संसाधनों, यौनिकता, कानून, ज्ञान और संस्कृति – इन सभी क्षेत्रों में काम करती है। ये सभी मिलकर एक ऐसा चक्र बनाते हैं जहाँ हर हिस्सा दूसरे को मजबूत करता है।

पितृसत्ता एक ऐसे तंत्र के रूप में काम करती है जिसके जरिए जेंडर बाइनरी को समाज में "असमान" होते हुए भी "स्वाभाविक" और "स्थिर" बना कर कायम रखा जाता है। यह इस तरह संचालित होती है कि सत्ता, संसाधन और निर्णय लेने का अधिकार कुछ खास समूहों में केंद्रित हो जाते हैं और ये समूह प्रायः पुरुष होते हैं।

हालाँकि हम देखते हैं कि व्यक्तिगत स्तर पर कई पुरुष पितृसत्ता से लाभ उठाते हैं, लेकिन इसे केवल इस रूप में समझना कि कुछ पुरुष कुछ महिलाओं पर हावी होते हैं, इसकी जटिलता को बहुत सीमित कर देता है। दरअसल, यह एक व्यापक सामाजिक और संस्थागत ढाँचा है जो पुरुषत्व को प्राथमिकता देता है और स्त्रीत्व को कमतर आँकता है।

यह असमानता और दर्जाबंदी हमारे जीवन के हर हिस्से में दिखाई देती है – व्यवहार में, जैसे रोना बनाम मजबूत होना, गुणों में, जैसे भावनात्मक बनाम व्यावहारिक होना, और श्रम में, जैसे देखभाल का काम बनाम वेतन वाला काम।

पितृसत्ता कई आपस में जुड़े हुए क्षेत्रों में काम करती है – जैसे श्रम, संसाधन, यौनिकता, कानून और अधिकार, ज्ञान और संस्कृति। ये सभी मिलकर एक ऐसा चक्र बनाते हैं, जिसे सत्र में "पितृसत्ता का पहिया" कहा गया – जहाँ हर हिस्सा दूसरे हिस्सों को मजबूत करता है। उदाहरण के तौर पर, श्रम का असमान बंटवारा केवल काम के स्तर पर नहीं रहता, बल्कि सांस्कृतिक मान्यताओं, कानूनी ढाँचों और ज्ञान की प्रणालियों के जरिए भी मजबूत होता है, जो पुरुषों की सत्ता को वैध ठहराते हैं और महिलाओं की अधीनता को सामान्य बना देते हैं।

चिंगारी में पितृसत्ता को इस तरह नहीं समझाया गया कि सभी पुरुष शक्तिशाली हैं और सभी महिलाएँ सत्ताहीन। सत्र में यह स्पष्ट रूप से माना गया कि पुरुषों के बीच भी सत्ता बराबर नहीं बंटी होती। जाति, वर्ग, धर्म, क्षेत्र, विकलांगता और अन्य सामाजिक दर्जाबंदियाँ यह तय करती हैं कि किसके पास कितनी सत्ता है।

इस तरह पितृसत्ता इन सभी ढाँचों के साथ जुड़कर काम करती है, और अलग–अलग लोगों के लिए विशेषाधिकार और वंचना के अलग–अलग अनुभव पैदा करती है।

इसी कारण स्वास्थ्य क्षेत्र में महिलाएँ बड़ी संख्या में उन भूमिकाओं में दिखाई देती हैं जो देखभाल, धैर्य और समुदाय से जुड़ी होती हैं – जैसे नर्सिंग, सामुदायिक स्वास्थ्य कार्य, काउंसलिंग, आउटरीच। ये भूमिकाएँ सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए बेहद महत्वपूर्ण हैं, लेकिन इन्हें अक्सर विशेषज्ञता या नेतृत्व की जगह के रूप में नहीं देखा जाता। समुदाय आधारित संगठनों में भी यह विभाजन दिखता है। महिलाएँ फील्ड में लंबे घंटे काम करती हैं, लोगों से जुड़ती हैं, संकट संभालती हैं। लेकिन योजना बनाना, बजट तय करना और रणनीतिक फैसले लेना अक्सर कुछ सीमित लोगों तक ही रहता है। यहीं से यह समझ उभरती है कि नेतृत्व की असमानता महिलाओं की कमी नहीं है, बल्कि उन ढाँचों का परिणाम है जिनमें उनका काम और जीवन गढ़ा गया है।

## घर और कार्यस्थल में पितृसत्ता

पितृसत्ता सिर्फ घर तक सीमित नहीं रहती, और न ही केवल कार्यस्थल की बात है। यह दोनों जगहों पर एक साथ, आपस में जुड़ी हुई तरीकों से काम करती है। घर और परिवार के भीतर यह संसाधनों और अवसरों के बंटवारे को तय करती है – किसके पास पैसे पर नियंत्रण होगा, कौन फैसले लेगा, कौन खाना बनाएगा, कौन बच्चों की देखभाल करेगा।

यही पैटर्न आगे चलकर कार्यस्थल में भी दिखाई देते हैं। वहाँ भी यह तय होता है कि निर्णय कौन लेगा, कौन ऐसी भूमिका में होगा जहाँ संस्थागत संसाधनों या फंडिंग से जुड़ा काम होता है। इस तरह पितृसत्ता संगठनों के भीतर भूमिकाओं, दर्जाबंदी और नेतृत्व के नियमों को आकार देती है।

जेंडर के नियम–कायदे महिलाओं को "स्वाभाविक" रूप से देखभाल के काम के लिए उपयुक्त मानते हैं – चाहे वह घर हो या कार्यस्थल। क्योंकि इस काम को एक सीखी हुई क्षमता के बजाय स्त्री होने का हिस्सा माना जाता है, इसलिए इसे अक्सर कम महत्व दिया जाता है, कम वेतन मिलता है, और यह नेतृत्व के रास्तों से बाहर रखा जाता है।

यह मान लिया जाता है कि महिलाएँ स्वभाव से ही देखभाल करने वाली होती हैं, जिससे उनका श्रम असीमित दिखाई देने लगता है। यही सोच कार्यस्थल पर भेदभाव को सही ठहराने का आधार बनती है।

आईसीआरडब्ल्यू के शोध से यह सामने आता है कि महिलाएँ ज़्यादातर जूनियर और मिड–लेवल पदों पर केंद्रित हैं, जबकि वरिष्ठ नेतृत्व की जगहों पर पुरुषों का दबदबा बना हुआ है। 79 प्रतिशत संगठनों में बोर्ड चेयर पुरुष थे, और उतने ही संगठनों में मुख्य कार्यकारी या संगठन प्रमुख भी पुरुष थे।

स्वास्थ्य क्षेत्र में, जहाँ महिलाओं का श्रम पूरी व्यवस्था की रीढ़ है,
वहाँ भी नेतृत्व की भूमिकाओं में उनकी हिस्सेदारी केवल 18 प्रतिशत के आसपास है।

यह तस्वीर साफ दिखाती है कि पितृसत्ता सिर्फ एक विचार नहीं है – यह एक जीवित ढाँचा है, जो घर से लेकर कार्यस्थल तक, हर जगह नेतृत्व की संभावनाओं को आकार देता है।

## संसाधनों और अवसरों का बंटवारा

पितृसत्ता सत्ता को बनाए रखने का एक महत्वपूर्ण तरीका यह है कि वह यह नियंत्रित करती है कि जमीन, पैसा और ज्ञान जैसे अहम संसाधनों पर किसका अधिकार होगा और किसकी पहुँच होगी। जहाँ इन संसाधनों पर नियंत्रण असमान होता है, वहाँ अवसर भी उसी असमान रेखा पर बंट जाते हैं।

अवसर का मतलब केवल नौकरी मिलना या कोई पद हासिल करना नहीं है। अवसर यह तय करता है कि किसी व्यक्ति के पास अपने फैसले लेने की कितनी स्वतंत्रता है, वह कितना आगे बढ़ सकता है, और समाज और संस्थाओं में उसे कितनी गंभीरता से लिया जाता है।

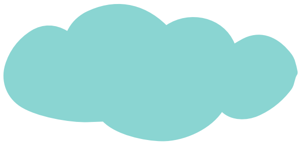

पितृसत्ता सिर्फ महिलाओं को सत्ता से बाहर नहीं करती, बल्कि वह रोजमर्रा के जीवन को इस तरह गढ़ती है कि निर्भरता स्वाभाविक लगे और स्वतंत्रता जोखिम भरी दिखाई दे।

जब महिलाओं की संसाधनों तक पहुँच सीमित होती है, तो वे भले ही "काम" कर रही हों, लेकिन वे वास्तव में स्वतंत्र नहीं होतीं। उनके फैसले इस डर से प्रभावित होते हैं कि कहीं आय का स्रोत न छिन जाए, सुरक्षा न चली जाए, परिवार का सहारा न टूट जाए, या सामाजिक स्वीकृति न खो जाए। इस तरह उनकी स्वतंत्रता सीमित हो जाती है। क्योंकि यहाँ सवाल सिर्फ कानूनी समानता का नहीं है, बल्कि बिना डर के फैसले लेने और उन्हें अमल में लाने की वास्तविक क्षमता का है।

पितृसत्ता इस तरह भी काम करती है कि वह महिलाओं की पहचान को देखभाल, त्याग और समायोजन से जोड़ देती है। जब महिलाओं से अपेक्षा की जाती है कि वे बिना संसाधनों पर नियंत्रण के सेवा करें, तो उनका श्रम संस्थाओं को मजबूत करता है, लेकिन उन संस्थाओं के भीतर उनकी अपनी स्थिति को मजबूत नहीं करता।

इस अर्थ में, अवसर सिर्फ पहुँच का सवाल नहीं है। यह उस क्षमता का सवाल है, जिसके जरिए कोई व्यक्ति अपनी मेहनत को अधिकार और सत्ता में बदल सके।

घरेलू और व्यक्तिगत सर्वेक्षणों के आधार पर, नेशनल फैमिली हेल्थ सर्वे यह दिखाता है कि केवल लगभग 8.3 प्रतिशत महिलाओं के पास अपनी व्यक्तिगत जमीन का स्वामित्व है, जबकि लगभग 23.4 प्रतिशत महिलाओं के पास जमीन संयुक्त रूप से है। कुल मिलाकर, चाहे व्यक्तिगत स्वामित्व हो या संयुक्त, जमीन पर महिलाओं का अधिकार पुरुषों की तुलना में काफी कम है।

भारत में काम करने वाली महिलाओं में 90 प्रतिशत से अधिक महिलाएँ अनौपचारिक रोजगार में हैं, जबकि पुरुषों में यह संख्या लगभग 82 प्रतिशत है। इन अनौपचारिक श्रमिकों के बीच भी पुरुषों की आय महिलाओं से 50 से 70 प्रतिशत अधिक होती है।

करीब हर तीन में से एक कामकाजी महिला बिना वेतन के पारिवारिक श्रमिक के रूप में काम करती है, जबकि पुरुषों में यह अनुपात लगभग दस में एक है।

नियमित वेतनभोगी कामगारों के बीच पुरुषों की कमाई महिलाओं से 20 से 60 प्रतिशत अधिक है। वहीं स्व–रोजगार में लगे पुरुष, महिलाओं की तुलना में चार से पाँच गुना अधिक कमाते हैं।

ये आँकड़े साफ तौर पर दिखाते हैं कि काम की दुनिया में महिलाओं की मौजूदगी तो बड़ी है, लेकिन संसाधनों, आय और आर्थिक अधिकारों तक उनकी पहुँच गहराई से असमान बनी हुई है।

इसीलिए संसाधनों के इस बंटवारे को पहचानना नारीवादी नेतृत्व के लिए बेहद केंद्रीय है। जब महिलाओं के पास संसाधनों तक पहुँच नहीं होती या उन पर उनका नियंत्रण नहीं होता, तो उनके पास न आर्थिक सुरक्षा होती है, न सामाजिक।

यही वजह है कि अग्रिम पंक्ति के स्वास्थ्य और सामुदायिक कामों में महिलाओं की बड़ी मौजूदगी अपने आप बेहतर वेतन या नेतृत्व की भूमिका में नहीं बदलती। महिलाएँ सेवा देने की प्रक्रिया के केंद्र में हो सकती हैं, लेकिन जब उनके श्रम को उनकी पहचान का विस्तार मान लिया जाता है – यानी देखभाल और सेवा के रूप में, न कि रणनीतिक काम के रूप में – तो वह संस्थागत सत्ता में तब्दील नहीं होता।

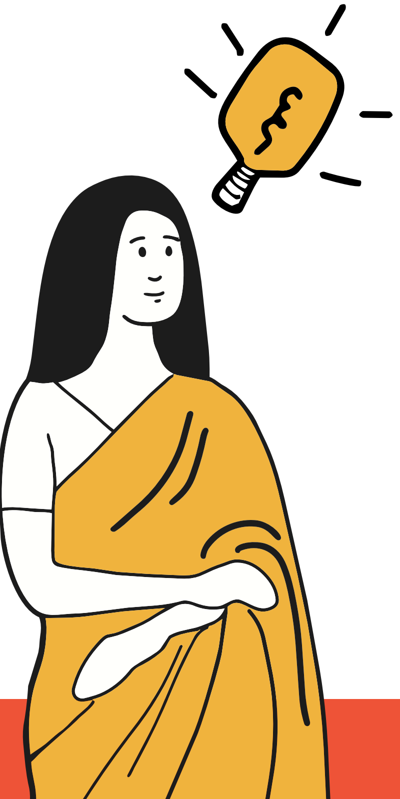

लगभग 100% आशा (ASHA) कार्यकर्ता महिलाएँ हैं। 80% से अधिक नर्स और दाइयाँ भी महिलाएँ हैं।

आशा कार्यकर्ताओं को आधिकारिक तौर पर "स्वयंसेवक" कहा जाता है (स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार, 2005), न कि कर्मचारी। उन्हें नियमित वेतन नहीं मिलता। जहाँ तय मानदेय दिया जाता है, वह राज्य के अनुसार लगभग ₹1,000 से ₹6,000 प्रति माह के बीच होता है।

उनकी कमाई ज़्यादातर काम के आधार पर होती है, जैसे संस्थागत प्रसव, टीकाकरण, परिवार नियोजन और सर्वे जैसे लक्ष्यों को पूरा करने पर। अलग–अलग राज्यों में उनकी औसत मासिक कमाई आम तौर पर ₹8,000 से ₹10,000 के बीच होती है, जबकि उनका काम का समय लंबा होता है और जिम्मेदारियाँ लगातार बढ़ती रहती हैं। भुगतान अनियमित, शर्तों पर आधारित और काम के हिसाब से होता है – यह एक तय वेतन नहीं है। जबकि उनकी भूमिका सार्वजनिक स्वास्थ्य में बहुत अहम है, फिर भी उन्हें न तो न्यूनतम वेतन की गारंटी मिलती है और न ही कोई कानूनी लाभ।

## पितृसत्ता और कार्यस्थल

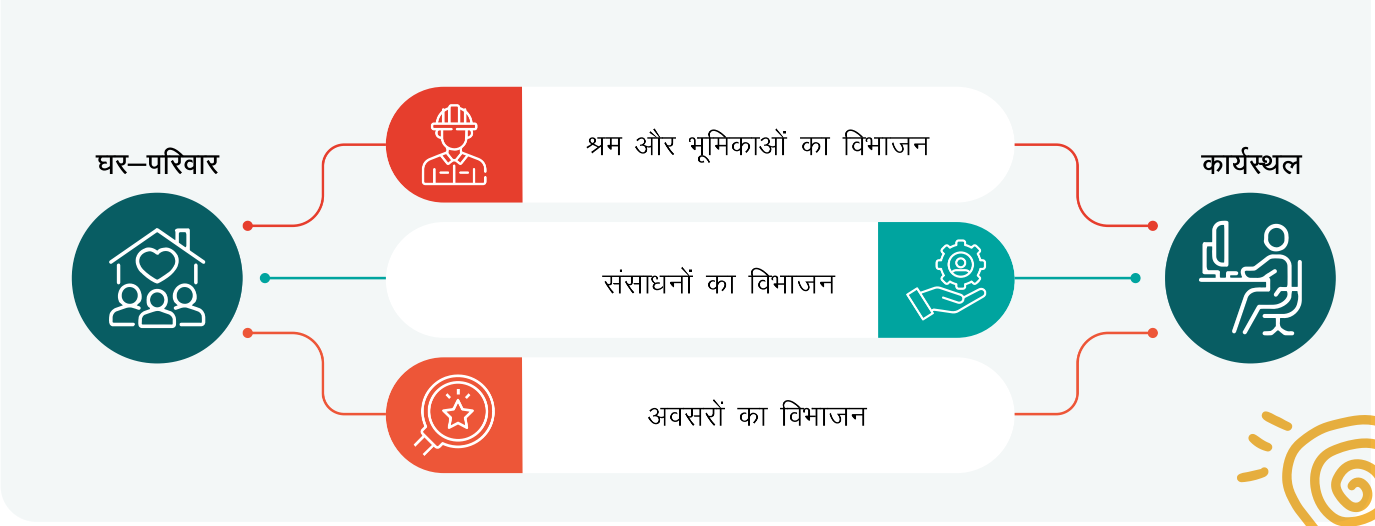

**घर–परिवार**

श्रम और भूमिकाओं का विभाजन

संसाधनों का विभाजन

अवसरों का विभाजन

**कार्यस्थल**

स्रोतः "कार्यस्थल पर पितृसत्ता" मॉड्यूल, चिंगारी 2025 पाठ्यक्रम

भौतिक संसाधनों तक पहुँच केवल महिलाओं की आय को नहीं बदलती, बल्कि उनकी सामाजिक स्थिति और मोल–तोल की क्षमता को भी बदलती है। जब महिलाएँ कम या अस्थिर आय पर निर्भर होती हैं, तो वे अन्यायपूर्ण प्रथाओं को चुनौती देने या अपने विकास में निवेश करने की स्थिति में नहीं होतीं। जमीन पर स्वामित्व और नियंत्रण महिलाओं की घरेलू निर्णयों में भागीदारी को मजबूत करता है, उनकी असुरक्षा को कम करता है, और परिवार व समुदाय में उनकी सामाजिक स्थिति को बेहतर बनाता है।

## इनाम और दंड

पितृसत्ता सिर्फ कानूनों या खुली ताकत के जरिए नहीं चलती। यह रोजमर्रा की स्वीकृति और अस्वीकृति की उन सूक्ष्म व्यवस्थाओं के जरिए भी कायम रहती है, जो बचपन से ही व्यवहार को गढ़ती हैं। लड़कियों और महिलाओं को अक्सर जेंडर के नियम–कायदे मानने के लिए इनाम मिलता है – जैसे आज्ञाकारी होना, खुद को ढाल लेना, त्याग करना, या अपनी इच्छाओं से पहले परिवार को रखना। इसके बदले उन्हें सराहना, स्नेह, सामाजिक सम्मान, या व्यावहारिक सहारा मिलता है, जैसे बच्चों की देखभाल में मदद, घर के काम में सहयोग, या काम करने की अनुमति।

यहाँ तक कि शादी या स्थानीय स्तर पर नौकरी मिलना भी अक्सर "सही" व्यवहार के इनाम के रूप में सामने आता है। इसके उलट, इन नियमों से हटने पर आलोचना, दूरी, देखभाल का वापस ले लिया जाना, या सामाजिक जोखिम का सामना करना पड़ता है। इस तरह, रोजमर्रा के छोटे–छोटे संकेत यह सिखाते रहते हैं कि कौन से चुनाव स्वीकार्य हैं और किनके परिणाम होंगे। धीरे–धीरे ये जेंडर आधारित अपेक्षाएँ निजी और सार्वजनिक जीवन दोनों में गहराई से बैठ जाती हैं।

घर और समुदाय में ये नियम लगातार निगरानी, सुधार और सामाजिक दबाव के जरिए लागू किए जाते हैं। जो लड़कियाँ और महिलाएँ घरेलू काम, शिक्षा, विवाह, पहनावे या व्यवहार से जुड़े नियमों को चुनौती देती हैं, उन्हें आलोचना, चुगली, आवाजाही पर रोक, सहारे की कमी, या यहाँ तक कि रहने की जगह और आर्थिक सुरक्षा खोने का जोखिम झेलना पड़ता है।

वहीं लड़के अगर देखभाल, कोमलता या भावनाएँ दिखाते हैं, तो उन्हें शर्मिंदा किया जाता है और "मर्दाना" व्यवहार अपनाने के लिए दबाव डाला जाता है।

यह लगातार निगरानी एक ऐसी स्थिति पैदा करती है जहाँ लोग खुद पर नजर रखने लगते हैं, निर्णय लेने से डरते हैं, और हर कदम पर आकलन का भय बना रहता है। इसका असर यह होता है कि महिलाएँ मुख्य रूप से देखभाल की जिम्मेदारी उठाती रहती हैं और पुरुष कमाने की भूमिका में बने रहते हैं – और इन भूमिकाओं से बाहर निकलना सामाजिक और आर्थिक रूप से महंगा पड़ता है।

इसी तरह, जो महिलाएँ काम के लिए नियमित रूप से यात्रा करने लगती हैं या देर से घर लौटती हैं, उन्हें कहा जाता है कि वे "घर ठीक से नहीं संभाल रहीं", "बहुत महत्वाकांक्षी हो गई हैं", या उनकी प्राथमिकताएँ गलत हैं। जो महिलाएँ बैठकों में अपनी बात रखती हैं, फैसलों को चुनौती देती हैं या अपनी सीमाएँ तय करती हैं, उन्हें "बहुत

## एक छोटी सी झलक

शादी पितृसत्ता के सबसे प्रभावशाली इनाम तंत्रों में से एक है। जो महिलाएँ व्यवहार, पहनावे, यौनिकता और आज्ञाकारिता से जुड़े जेंडर के नियम–कायदे मानती हैं, उन्हें "उपयुक्त" माना जाता है और शादी की बातचीत में उन्हें परिवार का समर्थन मिलने की संभावना ज़्यादा होती है।

शादी को केवल एक निजी पड़ाव के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक सुरक्षा, रहने की जगह, आर्थिक सहारे और सामाजिक मान्यता के रूप में पेश किया जाता है। इस तरह, नियमों के अनुसार चलना सीधे तौर पर सुरक्षा और सामाजिक दर्जे से जुड़ जाता है।

शादी के भीतर भी, लगातार समायोजन और अनुकूलन को और इनाम मिलते हैं। अगर कोई महिला अपने करियर से पहले अपने पति के करियर को प्राथमिकता देती है, तो उसे भावनात्मक मान्यता, आर्थिक सुरक्षा या परिवार की स्वीकृति मिल सकती है। कई घरों में, जो महिला "झगड़ा नहीं करती", टकराव से बचती है और तनाव को अपने भीतर समेट लेती है, उसे "अच्छी तरह एडजस्ट करने वाली" कहा जाता है। यह एक ऐसी तारीफ है, जो अक्सर थकान और अवसरों के खोने को ढँक देती है।

आँकड़े भी इसी तस्वीर को सामने रखते हैं।

- विवाहित पुरुषों में 95 प्रतिशत से अधिक श्रमबल का हिस्सा होते हैं।
- जबकि विवाहित महिलाओं में केवल लगभग 23 से 25 प्रतिशत ही श्रमबल में शामिल हैं।
- जहाँ बहुत कम पुरुष श्रमबल से बाहर होते हैं, वहीं लगभग 75 प्रतिशत विवाहित महिलाएँ श्रमबल से बाहर रहती हैं।
- जो पुरुष काम नहीं कर रहे होते, उनमें लगभग कोई भी घरेलू जिम्मेदारियों को कारण नहीं बताता। इसके उलट, जो विवाहित महिलाएँ काम नहीं कर रहीं, उनमें लगभग 90 प्रतिशत "घरेलू काम" को मुख्य कारण बताती हैं। इस तरह, शादी पुरुषों की वेतन वाले काम में भागीदारी को सुनिश्चित करती है, जबकि अधिकांश महिलाओं को उससे बाहर कर देती है।

आक्रामक", "बहुत भावुक", "सहयोग न करने वाली" या "काम करने में मुश्किल" कहा जाता है। ये लेबल किसी औपचारिक सजा की तरह सामने नहीं आते, बल्कि अनौपचारिक फीडबैक, परफॉर्मेंस आकलन या बातचीत के जरिए धीरे–धीरे फैलते हैं। लेकिन इनका असर गहरा होता है – पदोन्नति के फैसलों और नेतृत्व के आकलन पर, बिना कहीं दर्ज हुए।

ट्रांसजेंडर और नॉन बाइनरी लोगों के लिए ये दंड और भी तेज, गहरे और संरचनात्मक होते हैं, जो जीवन के लगभग हर हिस्से को प्रभावित करते हैं। जेंडर के तय ढाँचे से अलग बच्चे परिवार के भीतर ही अस्वीकृति या हिंसा का सामना करते हैं। परिवार उनके व्यवहार को "सुधारने" की कोशिश करता है – पाबंदियों, सजा या दबाव के जरिए। इसमें जेंडर अभिव्यक्ति को दबाने का दबाव, या अनचाहे चिकित्सीय या धार्मिक हस्तक्षेप भी शामिल हो सकते हैं। समाज में उन्हें उपहास, बहिष्करण या अलग–थलग किए जाने का सामना करना पड़ता है। उन्हें घर किराए पर नहीं मिलता, सामुदायिक जगहों में प्रवेश नहीं दिया जाता, या परिवार के लिए "शर्म" का कारण माना जाता है।

इनाम और दंड किसी एक रूप में नहीं आते। वे एक विस्तृत दायरे में मौजूद होते हैं – और उनकी ताकत इसी दायरे में छिपी होती है।

एक छोर पर बहुत छोटे, रोजमर्रा के संकेत होते हैं – जैसे नापसंदगी भरी मुस्कान, उठी हुई भौंहें, हल्की टिप्पणी, या चुप्पी। दूसरे छोर पर कठोर दंड होते हैं – जैसे शिक्षा से वंचित कर देना, काम छोड़ने पर मजबूर करना, जल्दी या अनचाही शादी के लिए दबाव डालना, परिवार या समुदाय से अलग कर देना, या निजी और सार्वजनिक दोनों जगहों पर शारीरिक और भावनात्मक हिंसा।

इसी तरह, इनाम भी छोटे हो सकते हैं – जैसे "अच्छी बेटी" या "जिम्मेदार पत्नी" कहकर सराहना करना। लेकिन वे ठोस रूप भी ले सकते हैं – जैसे आर्थिक सहयोग, बच्चों की देखभाल में मदद, पढ़ाई या काम की अनुमति, या मुश्किल समय में भावनात्मक सहारा। कुछ परिवारों में, लंबे समय तक नियमों का पालन करने पर बड़े भौतिक लाभ भी मिल सकते हैं – जैसे घर, संपत्ति में हिस्सा, या घरेलू फैसलों में अधिक भूमिका।

इनाम और दंड इसलिए काम करते हैं क्योंकि वे संदेश देते हैं कि सुरक्षा, अपनापन और स्थिरता उन्हीं को मिलेगी जो नियमों के भीतर रहेंगे। दंड यह याद दिलाते हैं कि इन सीमाओं से बाहर निकलने पर सहारे, सुरक्षा और स्वीकृति खोने का खतरा है। क्योंकि दंड की तीव्रता अलग–अलग हो सकती है, लोग सबसे कठोर परिणाम का इंतजार नहीं करते। वे बहुत पहले ही, छोटे–छोटे संकेतों पर अपने व्यवहार को ढाल लेते हैं। समय के साथ यह एक शक्तिशाली आत्म–नियंत्रण का तंत्र बन जाता है।

महिलाएँ और लड़कियाँ खुद को सीमित करती हैं, इसलिए नहीं कि उन्हें हमेशा सीधे दंड मिलता है, बल्कि इसलिए कि वे जानती हैं कि नियम तोड़ने के क्या परिणाम हो सकते हैं। इसी वजह से, कई महिलाएँ अपनी महत्वाकांक्षाओं को सीमित कर लेती हैं, क्षमता या इच्छा की कमी के कारण नहीं, बल्कि इसलिए कि आगे बढ़ने की कीमत बहुत ज़्यादा है। कार्यस्थल पर भी यही तर्क दिखाई देता है। महिलाओं के श्रम को लचीला और बदला जा सकने वाला माना जाता है, भले ही वह कितना ही आवश्यक क्यों न हो। वहीं सत्ता और नेतृत्व अक्सर स्थिर और सुरक्षित रोजगार से जुड़े रहते हैं, जिन तक महिलाओं की पहुँच बहुत कम होती है। जब तक महिलाएँ कम वेतन और असुरक्षित भूमिकाओं में केंद्रित रहेंगी, तब तक नेतृत्व उनके लिए संरचनात्मक रूप से दूर ही रहेगा – यह उनकी क्षमता या महत्वाकांक्षा की कमी नहीं, बल्कि परिस्थितियों की देन है।

जब घर और कार्यस्थल दोनों जगह महिलाओं को दृश्यता और महत्वाकांक्षा के लिए दंड मिलता है, तो नेतृत्व तक पहुँचना और उसे निभाना एक जोखिम भरा काम बन जाता है। इसीलिए नेतृत्व से जुड़े क्षमता–निर्माण कार्यक्रम यह सवाल उठाते हैं कि संगठन किन चीजों को इनाम देते हैं, किसके श्रम को महत्व मिलता है, और सुरक्षा किस तरह बंटी हुई है। और यही कारण है कि एक जेंडर समता आधारित नेतृत्व कार्यक्रम को यह समझना और चुनौती देना जरूरी है कि पितृसत्ता काम, सुरक्षा, पहचान और नेतृत्व को किस तरह आकार देती है।

## प्रस्तावित अध्ययन सामग्रीः

- Agarwal, B. (1994). A field of one's own: Gender and land rights in South Asia. Cambridge University Press.
- Das, M. K., & Singh, D. (2022). Nurses and midwives human resource for health and their education in India: A situational analysis. Florence Nightingale Journal of Nursing, 30(1), 9–17. https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC8958234/
- Geetha, V. (2002). Gender. Stree.
- Government of India, Ministry of Statistics and Programme Implementation. (2019). Time use in India–2019: Report of the Time Use Survey. National Statistical Office. https://www.mospi.gov.in/sites/default/files/publication_reports/Report%20of%20the%20Time%20Use%20Survey-Final.pdf?utm_source=chatgpt.com
- Government of India, Ministry of Statistics and Programme Implementation. (2023). Periodic Labour Force Survey (PLFS) annual report: July 2022–June 2023. National Statistical Office. https://mospi.gov.in/documents/213904/0/PLFS+Annual+Report+2022-23.pdf
- International Institute for Population Sciences (IIPS), & ICF. (2021). National Family Health Survey (NFHS-5), 2019–21: India. IIPS. https://dhsprogram.com/pubs/pdf/FR375/FR375.pdf
- Mahato, R. K., Kotu, S. C., Singh, K., Das, A., & Reddy, A. B. (2024). Status of women's landownership in India: A comparison of estimates from NFHS and AIDIS. Economic and Political Weekly, 59(16). https://www.epw.in/journal/2024/16/special-articles/status-womens-landownership-india.html
- Menon, N. (2012). Seeing like a feminist. Zubaan.
- Ministry of Health and Family Welfare, Government of India. (2005). Guidelines on Accredited Social Health Activists (ASHA). National Health Mission. https://nhm.gov.in/images/pdf/communitisation/task-group-reports/guidelines-on-asha.pdf
- National Health Mission, Ministry of Health and Family Welfare, Government of India. (n.d.). About Accredited Social Health Activist (ASHA). National Health Mission. https://nhm.gov.in/index1.php?lang=1&level=1&sublinkid=150&lid=226
- Oxfam India. (2022). India discrimination report 2022. Oxfam India. https://www.oxfamindia.org/knowledgehub/workingpaper/india-discrimination-report-2022
- Press Information Bureau, Government of India. (2020, September 29). Time Use Survey in India 2019. PIB. https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=1660028
- Press Information Bureau, Government of India. (2023, October 9). Periodic Labour Force Survey (PLFS) annual report 2022–23 released. PIB. https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=1966154
- Sangari, K. (1999). Politics of the possible: Essays on gender, history, narrative, colonial English. Tulika Books.
- Smith, D. E. (1987). The everyday world as problematic: A feminist sociology. University of Toronto Press.
- Uppal, R., Anwer, S., Verma, R., & Kedia, S. (2024). From barriers to breakthroughs: Women's leadership journeys in Indian healthcare organizations. International Center for Research on Women. https://www.icrw.org/publications/from-barriers-to-breakthroughs-womens-leadership-journeys-in-indian-healthcare-organizations/

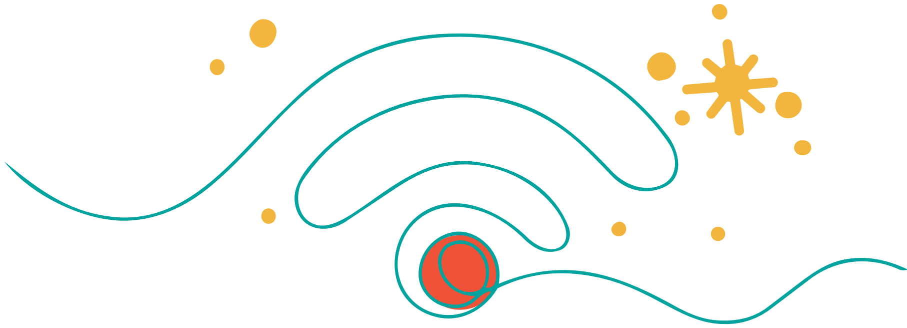

# बिल्डिंग ब्लॉक 2:

# सत्ता

सत्ता को एक केंद्रीय बिल्डिंग ब्लॉक के रूप में इसलिए चुना गया क्योंकि नारीवादी नेतृत्व को समझना, जीना और बनाए रखना तब तक संभव नहीं है, जब तक हम यह गहराई से न समझें कि सत्ता कैसे काम करती है।

चिंगारी के संदर्भ में सत्ता को हर जगह मौजूद एक वास्तविकता के रूप में देखा गया – ऐसा कुछ जो रोजमर्रा के काम, रिश्तों, संस्थाओं, और यहाँ तक कि लोग खुद को और दूसरों को कैसे देखते हैं, उसमें भी गहराई से बसा हुआ है।

अक्सर नेतृत्व के विकास को इस तरह समझा जाता है कि सत्ता एक इनाम है, जो कौशल, आत्मविश्वास या पद के बाद मिलता है। चिंगारी ने इस सोच को चुनौती देने की कोशिश की।

हमारे लिए, एक नारीवादी नेतृत्व निर्माण कार्यक्रम के रूप में, सत्ता के साथ जुड़ना इसलिए भी जरूरी था ताकि सशक्तीकरण को केवल आत्मविश्वास बढ़ाने तक सीमित न किया जाए। चिंगारी ने सत्ता को उस वास्तविकता के रूप में देखा, जिसके भीतर नेतृत्व पहले से ही अभ्यास में है।

नारीवादी दृष्टिकोण से प्रेरित होकर, खासकर उन विचारों से जो सत्ता को केवल नियंत्रण या प्रभुत्व के रूप में नहीं देखते, चिंगारी के पाठ्यक्रम ने सत्ता की समझ को विस्तृत किया – उसके अलग–अलग स्रोतों, रूपों और अभिव्यक्तियों को सामने लाते हुए। इससे सत्ता को सिर्फ सीमित करने वाली चीज के रूप में नहीं, बल्कि एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में समझा गया जिसे इस्तेमाल किया जा सकता है, जिस पर बातचीत की जा सकती है, जिसका विरोध किया जा सकता है और जिसे बदला जा सकता है।

चिंगारी ने उन महिलाओं के साथ काम किया जो संगठनों की दर्जाबंदी में निचले और मध्य स्तरों पर थीं – ऐसी भूमिकाओं में जहाँ जिम्मेदारी बहुत अधिक होती है, काम का बोझ भारी होता है, लेकिन अधिकार सीमित होते हैं। ऐसे संदर्भों में सत्ता अक्सर खुलकर दिखाई नहीं देती। वह अनुबंधों, निगरानी के तरीकों, जानकारी तक पहुँच, प्रदर्शन के मानकों, आवाजाही की सीमाओं, और उन अनकहे नियमों के जरिए काम करती है जो तय करते हैं कि कौन बोल सकता है, सवाल उठा सकता है या मना कर सकता है। कार्यस्थल पर सत्ता से जुड़े सत्रों ने यह माना कि अगर ये गतिशीलताएँ अदृश्य बनी रहती हैं, तो नेतृत्व निर्माण की प्रक्रिया प्रतिभागियों के वास्तविक कामकाजी अनुभवों से कट सकती है।

ज़मीनी स्तर की महिला कामगार लगातार अलग–अलग सत्ता संबंधों के बीच रास्ता बनाती हैं – संस्थाओं और समुदायों के बीच, सुपरवाइजर और फील्ड स्टाफ के बीच, फंड देने वालों और काम लागू करने वालों के बीच, और परिवार व कार्यस्थल के बीच। वे सीमाओं के भीतर फैसले लेती हैं, अलग–अलग पक्षों की अपेक्षाओं को संतुलित करती हैं, और ऐसे जोखिम उठाती हैं जिनका सामना अक्सर संगठन की ऊपरी परतों में बैठे लोग नहीं करते।

ज़मीनी महिला स्वास्थ्य कर्मियों के लिए सत्ता यह भी तय करती है कि किसका ज्ञान गंभीरता से लिया जाएगा, किसका श्रम दिखाई देगा, कौन असुरक्षित काम से इंकार कर सकता है, और संगठन के फैसलों का असर किसे झेलना पड़ेगा।

अगर सत्ता को नाम नहीं दिया जाए और उसका विश्लेषण न किया जाए, तो ये अनुभव अलग–अलग और व्यक्तिगत लगते हैं, जबकि वास्तव में वे पितृसत्ता, जातिगत दर्जाबंदी और धार्मिक पूर्वाग्रहों के बड़े पैटर्न का हिस्सा होते हैं।

सत्ता को शामिल करने का उद्देश्य प्रतिभागियों को एक ऐसी भाषा और ढाँचा देना था, जिससे वे अपने कार्यस्थल के अनुभवों को संरचनात्मक सत्ता संबंधों के रूप में समझ सकें। इससे नेतृत्व की बातचीत व्यक्तित्व से हटकर राजनीति, ढाँचों और जवाबदेही की ओर बढ़ी।

इस प्रक्रिया ने नेतृत्व को व्यक्तिगत उपलब्धि के बजाय सामूहिक रूप से सत्ता के साथ जुड़ने की दिशा में रखा। इसने यह भी दिखाया कि असमानताएँ सिर्फ बाहर नहीं, बल्कि अधिकार आधारित या समुदाय केंद्रित संस्थाओं के भीतर भी मौजूद रहती हैं।

इस दृष्टिकोण ने प्रतिभागियों, पेशेवरों और संगठनों को यह सोचने के लिए प्रेरित किया कि अग्रिम पंक्ति का नेतृत्व कैसे पहचाना जाए, उसका सम्मान कैसे किया जाए, और उसे कैसे समर्थन दिया जाए। साथ ही यह भी समझने के लिए कि जेंडर, जाति, धर्म और क्षमता से जुड़े असमान सत्ता ढाँचे यह तय करते हैं कि कौन नेतृत्व करेगा, किसके नेतृत्व को मान्यता मिलेगी, और किसके नेतृत्व को विकसित किया जाएगा।

महत्वपूर्ण बात यह है कि इस बिल्डिंग ब्लॉक ने नारीवादी नेतृत्व को सत्ता के एक सचेत अभ्यास के रूप में देखने की जमीन तैयार की। चिंगारी में नारीवादी नेतृत्व का मतलब सत्ता से भागना या एक सत्ता को दूसरी से बदल देना नहीं है। इसका मतलब है सत्ता को समझना, उसके इस्तेमाल के लिए जवाबदेह होना, और असमान सत्ता संबंधों को बदलने के लिए सचेत प्रयास करना।

अगर यह समझ न हो, तो नेतृत्व केवल एक आकांक्षा बनकर रह जाता है, परिवर्तन का साधन नहीं बन पाता।

सत्ता पर इस बिल्डिंग ब्लॉक को विकसित करते समय चिंगारी के पाठ्यक्रम ने श्रीलता बटलीवाला के नारीवादी विचारों से गहरी प्रेरणा ली। उनका काम भारत और वैश्विक स्तर पर नारीवादी आंदोलनों, नेतृत्व निर्माण और अधिकार आधारित कार्यप्रणालियों को गहराई से प्रभावित करता रहा है। उनकी लेखनी सिद्धांत, आंदोलन के अनुभव और ज़मीनी वास्तविकताओं को एक साथ जोड़ती है।

इस संदर्भ में एक प्रमुख संसाधन के रूप में उनकी पुस्तक All About Power: Understanding Social Power and Power Structures का उपयोग किया गया, जिसे हिंदी में सभी बातें सत्ता की के रूप में भी जाना जाता है।

इस पुस्तक में सत्ता को एक रिश्तों में बहने वाली और बदलती हुई प्रक्रिया के रूप में समझाया गया है। इसमें यह देखा गया है कि सत्ता कहाँ मौजूद होती है, कैसे काम करती है, और कैसे दिखाई देने वाले, छिपे हुए और अदृश्य रूपों के जरिए बनी रहती है। साथ ही, सत्ता के अलग–अलग रूपों को भी समझाया गया है – जैसे power over] power to] power with] power within और power under।

पद्धति के स्तर पर, इस ढाँचे का इस्तेमाल प्रतिभागियों को अपने कार्यस्थल में सत्ता को पहचानने और समझने में मदद करने के लिए किया गया। उन्होंने यह मैप किया कि सत्ता कहाँ स्थित है, कैसे बहती है, और किस तरह अलग–अलग रूपों में सामने आती है – दिखाई देने वाले, छिपे हुए और अदृश्य रूपों में।

सत्ता के अलग–अलग रूपों का विश्लेषण – जैसे किसी पर सत्ता, कुछ करने की सत्ता, साथ मिलकर सत्ता, अपने भीतर की सत्ता और दबाव में सत्ता – का उपयोग यह समझने के लिए किया गया कि काम के भीतर और उससे बाहर सत्ता कैसे अनुभव की जाती है। इस तरह, नेतृत्व की सीखना–सीखाना की प्रक्रिया आलोचनात्मक सोच और जीवन के अनुभवों से गहराई से जुड़ पाई।

## सत्ता केवल पदों में नहीं, बल्कि संबंधों में होती है

सत्ता केवल औपचारिक पदों या उपाधियों वाले लोगों तक सीमित नहीं होती। यह संबंधों में मौजूद होती है और परिस्थितियों के अनुसार लोगों के बीच बहती रहती है। एक व्यक्ति एक स्थिति में प्रभावशाली हो सकता है, और दूसरी स्थिति में बहुत कमजोर। इस तरह सत्ता को समझना यह स्पष्ट करता है कि महिलाएँ कार्यस्थल पर परिणामों की जिम्मेदारी तो महसूस करती हैं, लेकिन निर्णयों को प्रभावित करने में खुद को असमर्थ क्यों पाती हैं।

उदाहरण के लिए, एक सामुदायिक मोबिलाइजर के रूप में काम करने वाली महिला के पास औपचारिक नेतृत्व की भूमिका नहीं हो सकती, लेकिन वह काम के तरीके को गहराई से प्रभावित करती है। वह कार्यक्रम की रूपरेखा बनाने में शामिल न हो, फिर भी उसके क्रियान्वयन में उसकी केंद्रीय भूमिका होती है। वह तय करती है कि परिवारों से कैसे जुड़ना है, स्वास्थ्य से जुड़े संदेश कैसे समझाने हैं, विरोध का कैसे सामना करना है, और टकराव को कैसे संभालना है। यह सत्ता का व्यावहारिक रूप है, भले ही इसे इस नाम से पहचाना न जाए।

साथ ही, वही महिला अपने काम के बोझ, समय–सीमाओं या लक्ष्यों पर बहुत कम नियंत्रण रख सकती है। उसे अक्सर निर्णय लिए जाने के बाद ही उनकी जानकारी दी जाती है। वह अतिरिक्त काम या असुरक्षित परिस्थितियों

को मना करने में असमर्थ महसूस कर सकती है। सत्ता को संबंधों के रूप में समझना इस विरोधाभास को समझने में मदद करता है। यह दिखाता है कि औपचारिक अधिकार के बिना भी रोजमर्रा के काम में सत्ता और नेतृत्व मौजूद होते हैं।

सत्ता परिवारों के भीतर भी काम करती है। एक महिला कब यात्रा कर सकती है, बैठकों में शामिल हो सकती है या नई जिम्मेदारियाँ ले सकती है – ये निर्णय अक्सर परिवार के सदस्य लेते हैं। इन्हें चिंता या परंपरा के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है, लेकिन ये विकल्पों और अवसरों को सीमित करते हैं। संबंधों में सत्ता को समझना इन अनुभवों को व्यक्तिगत समस्या नहीं, बल्कि सामाजिक मानदंडों और दर्जाबंदी से जुड़े मुद्दों के रूप में देखने में मदद करता है।

## सत्ता संरचनाओं और व्यवस्थाओं में निहित होती है

सत्ता केवल व्यक्तियों के माध्यम से काम नहीं करती, बल्कि यह व्यवस्थाओं और ढाँचों में भी गहराई से बसी होती है। संगठनात्मक नीतियाँ, अनुबंध, कार्य–सारिणी, रिपोर्टिंग के तरीके और कार्य–संस्कृति – ये सभी सत्ता को वहन करते हैं। ये तय करते हैं कि क्या संभव है और क्या जोखिमपूर्ण।

ये व्यवस्थाएँ तय करती हैं कि किसे नौकरी की स्थिरता मिलेगी, कौन अल्पकालिक अनुबंध पर रहेगा, कौन आसानी से अवकाश ले सकता है और कौन नहीं। ज़मीनी स्तर की महिला कामगारों के लिए इसका मतलब अक्सर असुरक्षा के साथ जीना होता है। अस्थायी अनुबंध, अस्पष्ट भूमिकाएँ और सुरक्षा की कमी उन्हें निर्णयों पर सवाल उठाने या बेहतर परिस्थितियों की मांग करने से रोकती हैं। इस अर्थ में सत्ता इरादे का नहीं, बल्कि डिजाइन का प्रश्न है।

घर के भीतर भी सत्ता देखभाल के काम से जुड़ी अपेक्षाओं के माध्यम से काम करती है। महिलाओं से अक्सर उम्मीद की जाती है कि वे घरेलू जिम्मेदारियों को वेतन वाले काम के साथ संतुलित करें। यह व्यवस्था तय करती है कि वे अपने काम को कितना समय और ऊर्जा दे सकती हैं। यह सामान्य लग सकता है, लेकिन सत्ता का वितरण असमान बनाता है।

काम की दिनचर्याएँ भी सत्ता को वहन करती हैं। ऐसी कार्य–सारिणी जो यह मानकर चलती है कि कामगार हमेशा उपलब्ध हैं, घर की जिम्मेदारियों को नजरअंदाज करती है। उदाहरण के लिए – बहुत सुबह या देर शाम की फील्ड विजिट, अचानक बुलाई गई बैठकें, या ऐसे डेडलाइन जो काम के वास्तविक समय को ध्यान में रखकर तय नहीं किए गए हों।

महिला कामगारों के लिए ये स्थितियाँ अतिरिक्त दबाव पैदा करती हैं, क्योंकि उनका समय पूरी तरह उनके नियंत्रण में नहीं होता। अधिकांश महिलाएँ घर पर खाना बनाना, सफाई करना, बच्चों और बुजुर्गों की देखभाल जैसे कामों के साथ–साथ वेतन वाला काम भी

करती हैं। जब कार्य–सारिणी इस वास्तविकता को अनदेखा करती है, तो महिलाएँ खुद को खींचने, अधिक घंटे काम करने या व्यक्तिगत त्याग करने के लिए मजबूर होती हैं।

यदि कोई महिला किसी देर शाम की बैठक में शामिल नहीं हो पाती क्योंकि उसे बच्चे या बुजुर्ग की देखभाल करनी है, तो उसे कम प्रतिबद्ध माना जा सकता है – जबकि समस्या उसके प्रयास में नहीं, बल्कि काम के समय के संगठन में होती है। इस तरह, कार्य–सारिणी के माध्यम से सत्ता उन लोगों को पुरस्कृत करती है जो हर समय उपलब्ध रह सकते हैं, और उन लोगों को दंडित करती है जो ऐसा नहीं कर सकते।

इसी तरह, रिपोर्टिंग के तरीके भी सत्ता को आकार देते हैं। रिपोर्ट अक्सर संख्याओं पर केंद्रित होती हैं – कितने घरों का दौरा किया गया, कितनी बैठकें हुईं, कितने लाभार्थियों तक पहुँचा गया। ये आंकड़े महत्वपूर्ण हैं, लेकिन वे रिश्ते बनाने, भरोसा कायम करने, संघर्ष सुलझाने और भावनात्मक श्रम को नहीं पकड़ पाते, जो सामुदायिक काम का महत्वपूर्ण हिस्सा है।

एक महिला सामुदायिक कार्यकर्ता कई घंटे समुदाय के सवालों का जवाब देने, विरोध से निपटने या संकट में परिवारों का साथ देने में लगा सकती है। यह काम कार्यक्रम की सफलता के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, लेकिन रिपोर्टिंग के ढाँचे में आसानी से फिट नहीं बैठता। केवल संख्याओं पर निर्भरता इस संबंध–निर्माण के काम को अदृश्य बना देती है। इस प्रकार सत्ता यह तय करती है कि "वास्तविक काम" क्या माना जाएगा और क्या नहीं।

संगठनात्मक प्रक्रियाएँ मिलकर यह तय करती हैं कि किसके श्रम को मान्यता मिलती है। दफ्तर में किया गया योजना–निर्माण का काम अक्सर रणनीतिक और कुशल माना जाता है, जबकि फील्ड का काम, खासकर जब महिलाएँ करती हैं, साधारण या "स्वाभाविक" समझ लिया जाता है। उनसे देखभाल, समन्वय और भावनात्मक श्रम की अपेक्षा की जाती है, लेकिन उसे मान्यता नहीं मिलती। समय के साथ यह वेतन, पदोन्नति और नेतृत्व के अवसरों को प्रभावित करता है।

**इन प्रक्रियाओं को समझना हमें व्यक्तिगत प्रयास से ध्यान हटाकर संगठनात्मक डिजाइन की ओर ले जाता है। यह महत्वपूर्ण सवाल उठाने की अनुमति देता है: किसके समय को लचीला माना जा रहा है? किसके काम को मापा और महत्व दिया जा रहा है? और किससे बार–बार बिना मान्यता के समायोजन की उम्मीद की जा रही है?**

## सत्ता के कई स्रोत होते हैं

सत्ता किसी एक स्रोत से नहीं आती, बल्कि कई स्रोतों से मिलकर बनती है, जो अक्सर एक–दूसरे को मजबूत करते हैं। इनमें शामिल हैं – संसाधनों और धन पर नियंत्रण, जानकारी और प्रशिक्षण तक पहुँच, कार्यभूमिका से जुड़ा अधिकार, और सामाजिक पहचान जैसे जाति, जेंडर, धर्म, उम्र, भाषा और शिक्षा।

सत्ता का एक प्रमुख स्रोत है संसाधनों और धन पर नियंत्रण। इसमें यह शामिल है कि बजट कौन तय करता है, खर्चों को कौन मंजूरी देता है, परिवहन, फोन या कार्यालय स्थान पर किसका नियंत्रण है, और संसाधनों का वितरण कैसे होता है।

उदाहरण के लिए, एक प्रबंधक जिसके पास बजट का नियंत्रण है, यह तय कर सकता है कि किन क्षेत्रों को अधिक फंड मिलेगा या किन गतिविधियों को प्राथमिकता दी जाएगी। दूसरी ओर, एक फील्ड कार्यकर्ता से काम की अपेक्षा तो की जाती है, लेकिन संसाधनों के आवंटन में उसकी भूमिका सीमित होती है।

जब महिला कामगारों के पास संसाधनों पर नियंत्रण नहीं होता, तो उन्हें अक्सर व्यक्तिगत समायोजन या बिना भुगतान वाले श्रम के माध्यम से काम संभालना पड़ता है। कई बार उन्हें प्रशिक्षण या कार्यक्रमों में शामिल होने के लिए कहा जाता है, लेकिन उनकी अनुपस्थिति में घर पर क्या होगा, इसके लिए कोई समर्थन नहीं दिया जाता। यदि बाल–देखभाल या लचीली व्यवस्था पर विचार नहीं किया जाता, तो महिलाएँ बच्चों को पड़ोसियों, बड़ी बेटियों या बुजुर्ग रिश्तेदारों के पास छोड़ने को मजबूर होती हैं। यह व्यवस्था उनकी भागीदारी संभव तो बनाती है, लेकिन इसकी व्यक्तिगत कीमत को "काम" से जुड़ा नहीं माना जाता।

"पेशेवर," "कुशल," या "महत्वपूर्ण" माने जाने के विचार भी सत्ता पैदा करते हैं। उदाहरण के लिए, जो कर्मचारी अंग्रेजी में बोल सकता है, उसे बैठकों में अधिक गंभीरता से लिया जा सकता है, भले ही उसका समुदाय से सीमित जुड़ाव हो। एक प्रबंधक का अधिकार केवल उसके पद से नहीं, बल्कि जातिगत विशेषाधिकार या दाता संस्थाओं तक पहुँच से भी आता है। इसके विपरीत, एक महिला जिसने वर्षों तक समुदाय में काम किया है, उसके पास गहरा अनुभव और ज्ञान हो सकता है, लेकिन उसकी विशेषज्ञता को अनौपचारिक या द्वितीयक समझा जा सकता है।

ये अंतर संयोग नहीं हैं। सत्ता की असमानताएँ इसलिए बनी रहती हैं क्योंकि कई तरह के विशेषाधिकार एक साथ मिलकर एक–दूसरे को मजबूत करते हैं। जब ये विशेषाधिकार एक साथ आते हैं, तो वे एक मजबूत अधिकार की स्थिति बनाते हैं, जिस पर सवाल उठाना मुश्किल हो जाता है। और जब ऐसा नहीं होता, तो लोग – खासकर ज़मीनी स्तर की महिला कामगार – कई स्तरों पर वंचना का सामना करते हैं।

सत्ता के प्रमुख स्रोतों में जाति, जेंडर, शिक्षा, भाषा, स्थान और कार्यभूमिका शामिल हैं। इनमें से जाति और जेंडर विशेष रूप से यह तय करने में प्रभावशाली होते हैं कि किस पर भरोसा किया जाएगा, किसकी आवाज सुनी जाएगी और किसे आगे बढ़ने के अवसर मिलेंगे।

कार्यस्थल पर सत्ता की असमानताएँ व्यापक सामाजिक ढाँचों से जुड़ी होती हैं – जैसे पितृसत्ता, जातिगत दर्जाबंदी, धर्म और शहरी–ग्रामीण असमानता। ये ढाँचे यह तय करते हैं कि किसका अधिकार स्वीकार किया जाएगा, कौन किन स्थानों पर सुरक्षित महसूस करेगा, और किसे नेटवर्क और अवसरों तक पहुँच मिलेगी। नेतृत्व निर्माण तब परिवर्तनकारी बनता है, जब वह इन सभी परतों को साथ में समझता है। यह पहचानना कि जाति और जेंडर अन्य विशेषाधिकारों के साथ कैसे जुड़ते हैं, नारीवादी नेतृत्व के निर्माण के लिए बेहद आवश्यक है।

किसी ऐसे कार्यस्थल की कल्पना कीजिए जहाँ एक वरिष्ठ कर्मचारी एक ऊँची जाति का पुरुष है, जो अंग्रेजी बोलता है, उसके पास औपचारिक डिग्री है, और वह शहर के मुख्य कार्यालय से काम करता है। उसका अधिकार केवल उसके पद से नहीं आता। उसे जातिगत विशेषाधिकार भी मजबूत करते हैं, जिसने ऐतिहासिक रूप से उसके जैसे लोगों को सत्ता के करीब रखा है। उसका जेंडर उसे आत्मविश्वास के साथ बोलने की अनुमति देता है। उसकी भाषा और शिक्षा वही है जिसे संगठन अक्सर "पेशेवर" मानते हैं। शहर में होने के कारण उसे नेटवर्क, दाता संस्थाओं और दृश्यता तक अधिक पहुँच मिलती है। ये सभी फायदे मिलकर उसके अधिकार को स्वाभाविक और बिना सवाल के स्वीकार्य बना देते हैं।

अब इसकी तुलना एक दलित समुदाय से आने वाली महिला सामुदायिक कार्यकर्ता से कीजिए, जो ग्रामीण क्षेत्र में काम करती है। उसके पास वर्षों का अनुभव हो सकता है, समुदाय की गहरी समझ हो सकती है, और स्थानीय परिवारों के साथ मजबूत संबंध हो सकते हैं। फिर भी, उसकी जाति के कारण उसकी विश्वसनीयता पर सवाल उठाया जा सकता है। यदि वह अंग्रेजी के बजाय स्थानीय भाषा में बोलती है, तो उसकी बातों को कम "परिष्कृत" या कम "रणनीतिक" माना जा सकता है। फील्ड कार्यकर्ता की भूमिका उसे संगठनात्मक दर्जाबंदी में नीचे रखती है।

इनमें से कोई एक कारण अकेले उसकी सीमित सत्ता को पूरी तरह नहीं समझा सकता, लेकिन जब ये सभी एक साथ आते हैं, तो एक ऐसी स्थिति बनती है जहाँ उसके नेतृत्व को लगातार कम आंका जाता है।

## सत्ता के अलग–अलग रूप और अभिव्यक्तियाँ होती हैं

सत्ता को अक्सर केवल नियंत्रण या प्रभुत्व के रूप में समझा जाता है, लेकिन सत्ता कई रूपों में मौजूद होती है। कुछ सत्ता विकल्पों को सीमित करती है। कुछ सत्ता कार्रवाई को संभव बनाती है। कुछ सत्ता सामूहिक प्रयासों से विकसित होती है। कुछ सत्ता व्यक्ति के भीतर आत्मविश्वास या स्पष्टता के रूप में मौजूद होती है। और कुछ सत्ता अनुचित परिस्थितियों में टिके रहने की रणनीतियों के रूप में सामने आती है।

उदाहरण के लिए:

- "power over" तब दिखाई देता है जब एक कामगार अतिरिक्त काम को बिना किसी डर के मना नहीं कर सकता।
- "power to" तब दिखाई देता है जब एक महिला सीमित संसाधनों के बावजूद समस्याओं का समाधान खोज लेती है।
- "power with" तब दिखाई देता है जब कामगार एक–दूसरे का साथ देते हैं, जानकारी साझा करते हैं या मिलकर अपनी चिंताएँ उठाते हैं।

- "power within" तब दिखाई देता है जब एक महिला अपने निर्णयों पर भरोसा करना शुरू करती है।
- "power under" तब दिखाई देता है जब कोई व्यक्ति खुद को सुरक्षित रखने के लिए चुप रहना या समझौता करना चुनता है।

इन रूपों को पहचानना महत्वपूर्ण है, क्योंकि इससे महिलाओं के व्यवहार को केवल आत्मविश्वास या साहस के सीमित नजरिए से आँकने से बचा जा सकता है। यह रोजमर्रा की उन रणनीतियों को, जिनके जरिए महिलाएँ खुद को सुरक्षित रखती हैं और देखभाल करती हैं, व्यक्तिगत कमजोरी नहीं, बल्कि सत्ता के साथ उनके जटिल संबंधों की प्रतिक्रिया के रूप में समझने में मदद करता है।

## प्रस्तावित अध्ययन सामग्रीः

- Batliwala, S. (2007). Taking the power out of empowerment—An experiential account. Development in Practice, 17(4–5), 557–565. https://www.tandfonline.com/doi/abs/10.1080/09614520701469559
- Batliwala, S. (2010). All about power: Understanding social power and power structures. CREA. https://www.creaworld.org/media/pdf/resources/publications/all-about-power_en.pdf
- Menon, N. (2012). Seeing like a feminist. Zubaan.

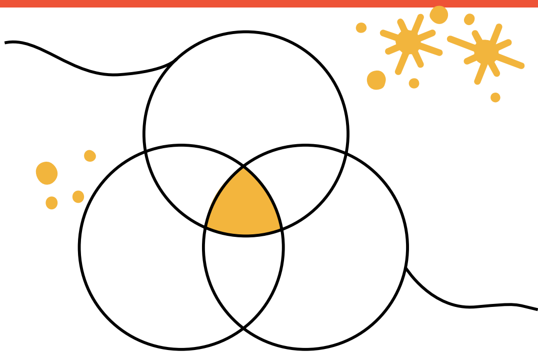

## बिल्डिंग ब्लॉक 3:

# हाशियाकरण और इंटरसेक्शनैलिटी

चिंगारी के पाठ्यक्रम में हाशियाकरण को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में समझा गया, जो जाति, जेंडर, धर्म, मेरिट जैसी व्यवस्थाओं के माध्यम से बनती और बनी रहती है — और जिसका अनुभव रोजमर्रा की जिंदगी में, कार्यस्थलों, संस्थाओं और समुदायों के भीतर होता है। यह समझ इस बात के लिए केंद्रीय थी कि कार्यक्रम के भीतर नारीवादी नेतृत्व को कैसे कल्पित और अभिव्यक्त किया गया।

इस बिल्डिंग ब्लॉक ने हाशियाकरण को एक ऐसी स्थिति के रूप में देखा, जहाँ सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्थाओं द्वारा निर्मित संरचनात्मक परिस्थितियों के कारण लोगों को बाहर रखा जाता है।

हाशियाकरण को इसलिए चुना गया क्योंकि इसे समझे बिना नेतृत्व निर्माण की प्रक्रिया असमानता को एक संरचनात्मक परिणाम के बजाय व्यक्तिगत कमी के रूप में समझने लगती है। कई नेतृत्व कार्यक्रम यह मानकर चलते हैं कि यदि व्यक्तियों को कौशल, आत्मविश्वास या अवसर दिए जाएँ, तो वे आगे बढ़ पाएँगे। लेकिन महिलाओं के नेतृत्व पर शोध यह दिखाता है कि पारंपरिक नेतृत्व और क्षमता निर्माण कार्यक्रम, जो व्यक्तिगत कौशल, आत्मविश्वास और एक्सपोजर पर केंद्रित होते हैं, वे उन संरचनात्मक बाधाओं — जैसे सामाजिक मानदंड, भेदभाव और संस्थागत समर्थन की कमी — को संबोधित नहीं कर पाते, जो महिलाओं को नेतृत्व की भूमिकाओं तक पहुँचने से रोकती हैं। विशेष रूप से ज़मीनी स्तर की महिलाएँ संस्थागत बहिष्करण और सामाजिक—सांस्कृतिक बाधाओं का सामना करती हैं, जिन्हें केवल प्रशिक्षण से दूर नहीं किया जा सकता।

इसीलिए, नारीवादी प्रैक्टिशनर ऐसे नेतृत्व मॉडल की वकालत करते हैं जो जेंडर—संवेदनशील हों और स्पष्ट रूप से सत्ता संबंधों और असमानताओं के साथ काम करें, न कि केवल व्यक्तिगत गुणों पर ध्यान दें।

ज़मीनी स्तर पर काम करने वाली महिलाओं के लिए यह धारणा लागू नहीं होती कि व्यक्तिगत विकास ही पर्याप्त है। उनका सत्ता, मान्यता और अवसरों से बाहर रहना आकस्मिक नहीं है, और न ही यह व्यक्तिगत असफलता का परिणाम है। यह उन गहरे जड़ित ढाँचों से पैदा होता है, जो हमारे समाज की संरचना की नींव हैं। यही ढाँचे तय करते हैं कि कौन केंद्र में रहेगा और कौन हाशिये पर धकेला जाएगा।

चिंगारी के संदर्भ में प्रतिभागी अलग—अलग जाति, धर्म, क्षेत्र और वर्ग पृष्ठभूमियों से आए थे। उनके कार्यस्थल के अनुभव केवल जेंडर से नहीं, बल्कि इस बात से भी तय होते थे कि वे दलित हैं या सवर्ण, मुस्लिम हैं या हिंदू, शहरी हैं या ग्रामीण, अंग्रेजी बोलते हैं या नहीं, औपचारिक रूप से शिक्षित हैं या काम के दौरान सीखे हैं।

ये अंतर उन संगठनात्मक पदों में भी दिखाई देते थे, जिन पर प्रतिभागी कार्यरत थे। जैसे जाति, धर्म, भाषा और स्थान यह तय करते हैं कि किसकी बात सुनी जाएगी और किस पर भरोसा किया जाएगा, वैसे ही वे संगठनात्मक दर्जाबंदी को भी आकार देते हैं। और यही दर्जाबंदी तय करती है कि किसके श्रम को "नेतृत्व" माना जाएगा और किसे "सहयोग" के रूप में देखा जाएगा।

कुछ प्रतिभागी वरिष्ठ या निर्णय लेने वाली भूमिकाओं में थे – जैसे प्रोग्राम लीड, राज्य समन्वयक या तकनीकी एंकर। कई मध्य–स्तरीय प्रबंधन भूमिकाओं में थे – जैसे प्रोग्राम अधिकारी, सुपरवाइजर या टीम लीड। वहीं, एक बड़ी संख्या संगठन के हाशिये पर काम कर रही थी – फील्ड स्टाफ, सामुदायिक कार्यकर्ता, मोबिलाइजर, आउटरीच वर्कर और कम्युनिटी कोऑर्डिनेटर के रूप में। ये वे लोग थे जो समुदायों को जोड़े रखते थे और कार्यक्रमों के क्रियान्वयन को सुनिश्चित करते थे, लेकिन मान्यता, आवाज और औपचारिक सत्ता से सबसे दूर थे।

ये संगठनात्मक दर्जाबंदियाँ चुपचाप यह तय करती हैं कि कौन निर्णयों को आकार दे सकता है और किससे बिना सत्ता के जिम्मेदारी उठाने की अपेक्षा की जाती है, कौन निर्णय–प्रक्रिया के करीब होगा और कौन श्रम की अग्रिम पंक्ति में रहकर भी संस्थागत अधिकार से वंचित रहेगा।

इस बिल्डिंग ब्लॉक को शामिल करने से कार्यक्रम को "कमी आधारित" कथाओं – जैसे "आत्मविश्वास की कमी," "मेरिट की कमी," या "कौशल की कमी" – से हटकर यह समझने का अवसर मिला कि व्यवस्थाएँ संसाधनों, मान्यता और अधिकार को असमान रूप से कैसे वितरित करती हैं। यह बदलाव आवश्यक था ताकि नारीवादी नेतृत्व को व्यक्तिगत उन्नति नहीं, बल्कि न्याय के आधार पर स्थापित किया जा सके।

## इंटरसेक्शनैलिटी और हाशियाकरण की बहुस्तरीय समझ

हाशियाकरण को किसी एक ही आधार से नहीं समझा जा सकता। इसे एक बिल्डिंग ब्लॉक के रूप में केंद्र में रखकर, चिंगारी ने सत्ता और बहिष्करण की एक इंटरसेक्शनल समझ विकसित की – यानी यह समझ कि दमन की कई संरचनाएँ एक साथ कैसे काम करती हैं, कुछ लोगों के लिए बहिष्करण को और गहरा करती हैं, जबकि दूसरों को अपेक्षाकृत अधिक पहुँच देती हैं।

यह दृष्टिकोण यह पहचानने में मदद करता है कि महिलाओं के नेतृत्व में आने वाली बाधाएँ केवल जेंडर से निर्धारित नहीं होतीं, बल्कि इस बात से तय होती हैं कि जेंडर जाति, धर्म, वर्ग, भाषा, क्षमता और स्थान के साथ मिलकर कैसे अनुभव किया जाता है।

एक जेंडर–परिवर्तनकारी नेतृत्व कार्यक्रम के लिए इंटरसेक्शनैलिटी आवश्यक है, क्योंकि यह स्पष्ट करती है कि दमन केवल "जोड़" का मामला नहीं है। नारीवादी नेतृत्व पर किए गए अध्ययन बताते हैं कि नेतृत्व का विकास तभी परिवर्तनकारी बनता है जब वह इन आपस में जुड़ी संरचनाओं का सामना करता है। नेतृत्व केवल कौशलों का सेट नहीं है, यह इस बात से आकार लेता है कि सत्ता संस्थाओं और समाज में कैसे वितरित, वैध और संरक्षित की जाती है।

## हाशियाकरण: एक संरचनात्मक वास्तविकता, न कि व्यक्तिगत कमी

हाशियाकरण को असमान पहुँच की स्थिति के रूप में समझा गया – जहाँ संसाधन, मान्यता, सुरक्षा और अवसर बराबर रूप से उपलब्ध नहीं होते।

अक्सर हाशियाकरण को व्यक्तिगत अनुभव के रूप में देखा जाता है। जैसे कार्यस्थल पर यह कहा जाता है कि कोई व्यक्ति "पर्याप्त आत्मविश्वासी नहीं है," "पर्याप्त शिक्षित नहीं है," "इतना स्मार्ट नहीं है," या "सक्षम नहीं है।" लेकिन यह समझ अधूरी है।

हाशियाकरण एक संरचनात्मक वास्तविकता है, ऐसी स्थिति जो तब बनती है जब समाज, संस्थाएँ और कार्यस्थल इस तरह काम करते हैं कि कुछ लोगों को बार–बार संसाधनों, मान्यता और सत्ता से दूर रखा जाता है।

उदाहरण के लिए, एक ग्रामीण क्षेत्र से आने वाली महिला कामगार को केवल इसलिए कम सक्षम माना जा सकता है क्योंकि वह धाराप्रवाह अंग्रेजी नहीं बोलती, भले ही उसके पास फील्ड का गहरा अनुभव हो। यह उसकी व्यक्तिगत कमी नहीं, बल्कि असमान व्यवस्थाओं का परिणाम है।

समस्या यह नहीं है कि उस कामगार में नेतृत्व क्षमता, बुद्धिमत्ता या मेहनत की कमी है। समस्या यह है कि व्यवस्था ने यह तय कर दिया है कि "योग्यता" कैसी दिखनी चाहिए। उसने ऐसे मानदंड चुने हैं, जिन तक कई ग्रामीण महिलाओं की ऐतिहासिक रूप से पहुँच नहीं रही, जैसे अंग्रेजी माध्यम की शिक्षा, शहरी अनुभव, प्रस्तुति कौशल, और पेशेवर स्थानों में आत्मविश्वास।

ये कौशल तटस्थ नहीं हैं; वे वर्ग, भूगोल और जाति से जुड़ी असमान पहुँच के कारण निर्मित हुए हैं। अंग्रेजी अब केवल एक भाषा नहीं रही। यह मेरिट का संकेतक और हाशियाकरण का औजार बन गई है। जो लोग धाराप्रवाह अंग्रेजी बोलते हैं, उन्हें "तेज" और "पेशेवर" माना जाता है और वे निर्णय लेने वाली जगहों में अधिक उपस्थित होते हैं। वहीं, गैर–अंग्रेजी बोलने वाले ग्रामीण कार्यकर्ताओं से कहा जा सकता है कि वे "सिर्फ फील्ड संभालें।"

ऐसी महिला के पास गहरा अनुभव हो सकता है – उसे पता हो कि गाँव में जाति कैसे काम करती है, किन घरों में टीकाकरण का विरोध होगा, कब महिलाओं पर घरेलू हिंसा होती है, क्यों लड़कियाँ स्कूल छोड़ती हैं, स्थानीय नेतृत्व कब और क्यों विरोध करता है, और सांप्रदायिक तनाव स्वास्थ्य सेवाओं को कैसे प्रभावित करता है। फिर भी, दफ्तर में उसकी योग्यता को अंग्रेजी के आधार पर आँका जाता है – वह ईमेल कैसे लिखती है, बैठकों में कैसे बोलती है, या प्रस्तुति कैसे देती है।

यहाँ हाशियाकरण उस नियम के माध्यम से पैदा होता है कि अंग्रेजी = बुद्धिमत्ता, जबकि अंग्रेजी ऐतिहासिक रूप से वर्ग और जातिगत पहुँच से जुड़ी रही है। "मेरिट" के ये संकेतक तटस्थ दिखते हैं, लेकिन वे गहराई से असमान आर्थिक और सांस्कृतिक संसाधनों तक पहुँच से प्रभावित होते हैं और बहिष्करण की विचारधारा की तरह काम करते हैं।

असमान व्यवस्थाएँ कुछ लोगों की क्षमताओं को दृश्य और मूल्यवान बनाती हैं, जबकि दूसरों के शरीर, श्रम और अनुभव को अदृश्य कर देती हैं। यह अदृश्यता अक्सर जातिगत दर्जाबंदी, पितृसत्ता और अल्पसंख्यकों के प्रति पूर्वाग्रह से जुड़ी होती है। उदाहरण के लिए, जाति यह तय करती है कि किसे संसाधन, शिक्षा और अवसर मिलेंगे, और किसकी आवाज को समाज तथा कार्यस्थल में गंभीरता से लिया जाएगा। यह ज्ञान और अधिकार के असमान वितरण को भी आकार देती है।

दलित महिलाओं के अनुभवों को अक्सर व्यक्तिगत दुख या "कहानियों" के रूप में देखा जाता है, न कि ऐसे ज्ञान के रूप में जो निर्णय लेने और नेतृत्व को दिशा दे सके। दूसरे शब्दों में, वे कमरे में मौजूद तो होती हैं, लेकिन उनके विचारों को इतना महत्व नहीं दिया जाता कि वे काम की दिशा तय कर सकें।

कार्यस्थलों में यह स्थिति अक्सर देखने को मिलती है। एक दलित महिला कार्यकर्ता समुदाय को किसी भी अन्य व्यक्ति से बेहतर समझ सकती है – उसे पता हो सकता है कि किन परिवारों के साथ भेदभाव हो रहा है, किस प्रकार की जातिगत हिंसा हो रही है, और लोग किन बातों को खुलकर कहने से डरते हैं। लेकिन जब वह यह साझा करती है, तो उसकी बातों को नजरअंदाज किया जा सकता है। वहीं, जब एक सवर्ण सहकर्मी वही बात अंग्रेजी या नीतिगत भाषा में कहता है, तो उसे "पेशेवर" और "रणनीतिक" माना जाता है।

समय के साथ यह एक पैटर्न बन जाता है। कुछ लोगों पर बोलने और निर्णय लेने के लिए भरोसा किया जाता है, जबकि दूसरों से केवल जमीन पर काम करने की अपेक्षा की जाती है। इस तरह, एक ही कार्यस्थल अलग–अलग लोगों के लिए बिल्कुल अलग अनुभव बन सकता है। जो दुनिया कुछ लोगों के लिए सामान्य, न्यायपूर्ण और सुलभ लगती है, वही दूसरों के लिए थकाऊ, अपमानजनक और असुरक्षित हो सकती है। यह इसलिए नहीं कि कुछ लोग कम सक्षम हैं, बल्कि इसलिए कि दुनिया उनके लिए बनाई ही नहीं गई।

इस प्रकार, हाशियाकरण व्यक्तिगत असफलता से नहीं, बल्कि उन संस्थागत मानदंडों से उत्पन्न होता है जो कुछ प्रकार के ज्ञान और अभिव्यक्ति को पुरस्कृत करते हैं और दूसरों को दंडित करते हैं। ये मानदंड "मेरिट" और "अच्छे

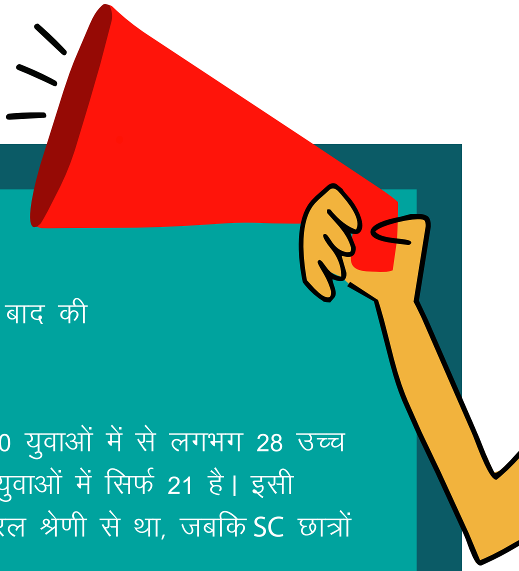

भारत सरकार के शिक्षा से जुड़े आँकड़े साफ दिखाते हैं कि जाति आधारित असमानता आज भी शिक्षा तक पहुँच को प्रभावित करती है, खासकर स्कूल के बाद की पढ़ाई में।

ऑल इंडिया सर्वे ऑन हायर एजुकेशन (AISHE) 2021–22 के अनुसार, हर 100 युवाओं में से लगभग 28 उच्च शिक्षा में दाखिला लेते हैं। लेकिन SC युवाओं में यह संख्या करीब 26 और ST युवाओं में सिर्फ 21 है। इसी रिपोर्ट के मुताबिक, 2021–22 में उच्च शिक्षा में कुल नामांकन का 40.6% जनरल श्रेणी से था, जबकि SC छात्रों का हिस्सा 15.3% और ST छात्रों का 6.3% था।

NFHS–5 के अनुसार, 56.3% महिलाओं ने 10 या उससे अधिक साल की पढ़ाई पूरी की है, जबकि पुरुषों में यह आंकड़ा 62.1% है। यानी लड़कियों और महिलाओं के लिए पढ़ाई जारी रखना ज्यादा मुश्किल होता है।

ये सभी सरकारी आँकड़े मिलकर दिखाते हैं कि जाति और जेंडर की असमानताएँ शिक्षा तक पहुँच को शुरू से ही प्रभावित करती हैं – नौकरी, कौशल या नेतृत्व के सवाल आने से बहुत पहले।

प्रदर्शन" के तटस्थ संकेतक लगते हैं, लेकिन वास्तव में वे असमान पहुँच से गहराई से जुड़े होते हैं और इसलिए जाति, वर्ग, जेंडर, धर्म और क्षमता से भी।

इसी तरह, जब नेतृत्व को दृढ़ (assertive) होना, हमेशा उपलब्ध रहना, स्वतंत्र रूप से यात्रा करना, और बैठकों के लिए देर तक रुकना जैसे गुणों से परिभाषित किया जाता है, तो यह उन लोगों को पुरस्कृत करता है जिन पर कम प्रतिबंध और जिम्मेदारियाँ होती हैं। पितृसत्ता इस असमानता को शुरू से ही बना देती है। कई महिला कार्यकर्ताओं के ऊपर घर में देखभाल की जिम्मेदारियाँ होती हैं और उनकी आवाजाही तथा व्यवहार पर सामाजिक निगरानी रहती है। उनका मूल्यांकन उनके काम की गुणवत्ता के आधार पर नहीं, बल्कि इस आधार पर किया जाता है कि वे "नेतृत्व उपस्थिति" (leadership presence) के उस मॉडल को कितना निभा पाती हैं, जो स्वतंत्रता और निरंतर उपलब्ध समय की ऐसी धारणा पर आधारित है, जिसमें श्रम के लैंगिक विभाजन, समय और संसाधनों की असमानता को ध्यान में नहीं रखा जाता।

एबलिज़्म (ableism) भी इन मानकों को आकार देता है। कार्यस्थल अक्सर यह मानकर चलते हैं कि हर कोई बिना कठिनाई के यात्रा कर सकता है, लंबी बैठकों में लगातार बोल सकता है, बिना ब्रेक के सत्रों में भाग ले सकता है, और बिना किसी विशेष सुविधा (accommodations) के काम कर सकता है। ऐसे में, विकलांग कामगारों को कम प्रतिबद्ध या कम सक्षम समझा जा सकता है – न कि इसलिए कि वे नेतृत्व नहीं कर सकते, बल्कि इसलिए कि कार्यस्थल खुद को अनुकूलित करने से इनकार करता है।

यहीं "अच्छे कर्मचारी" (good employee) की धारणा महत्वपूर्ण हो जाती है। कई संगठनों में एक अच्छे कर्मचारी की कल्पना ऐसे व्यक्ति के रूप में की जाती है जो हमेशा उपलब्ध हो, हमेशा सहमत रहे, कभी भी यात्रा कर सके, बिना शिकायत के काम के घंटे बढ़ा सके, बैठकों में आत्मविश्वास से बोल सके, और "व्यक्तिगत समस्याओं" को पेशेवर स्थानों में न लाए।

जब संस्थाएँ प्रोफेशनलिज़्म और नेतृत्व को पुरस्कृत करती हैं, तो वे केवल मेरिट को नहीं, बल्कि सामाजिक विशेषाधिकार को भी पुरस्कृत करती हैं। क्योंकि ज़मीनी स्तर की महिलाओं के लिए, खासकर हाशिये की जातियों और समुदायों से आने वाली महिलाओं के लिए, ये अपेक्षाएँ यथार्थवादी नहीं होतीं। कई महिलाओं पर घर का देखभाल श्रम होता है, उनकी आवाजाही पर सीमाएँ होती हैं, परिवहन और सुरक्षा तक उनकी पहुँच असमान होती है, और वे ऐसे भेदभाव का सामना करती हैं जिसे वे दफ्तर के बाहर नहीं छोड़ सकतीं।

इस प्रकार "अच्छे कर्मचारी" का मानक एक तरह की संरचनात्मक हिंसा बन जाता है। यह उन लोगों को पुरस्कृत करता है जो पहले से ही संरचनात्मक रूप से समर्थित हैं, और उन लोगों को दंडित करता है जो नहीं हैं।

इसीलिए नारीवादी नेतृत्व निर्माण केवल आत्मविश्वास और कौशल के स्तर पर सीमित नहीं रह सकता। यदि कोई नेतृत्व कार्यक्रम ग्रामीण महिलाओं को "अपनी बात रखने" के लिए कहता है, लेकिन उस व्यवस्था को नहीं बदलता जो उनकी आवाज को दंडित करती है, तो वह क्रूर हो सकता है। यदि वह महिलाओं को "प्रोफेशनल" बनने की ट्रेनिंग देता है, बिना यह सवाल किए कि किस संस्कृति को प्रोफेशनल माना जाता है, तो वह पितृसत्तात्मक और ब्राह्मणवादी ढाँचों को दोहरा सकता है। यदि वह मेरिट को केवल व्यक्तिगत उत्कृष्टता के रूप में सिखाता है, बिना जाति–वर्ग आधारित विशेषाधिकार को उजागर किए, तो वह असमानता को वैध ठहरा सकता है।

इसलिए ज़मीनी स्तर की महिला कार्यकर्ताओं के लिए एक नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम में यह आवश्यक है कि हाशियाकरण को संस्था के भीतर पहचाना, समझा और स्थित किया जाए: किसे सक्षम माना जाता है, किसकी गलतियों को माफ किया जाता है, किसे आमंत्रित किया जाता है, किसे मेंटरशिप मिलती है, किसके आत्मविश्वास को सराहा जाता है और किसके आत्मविश्वास को दंडित किया जाता है।

यदि हाशियाकरण को जाति, वर्ग और धर्म से जोड़कर नहीं समझा जाएगा, तो नेतृत्व की बाधाओं को व्यक्तिगत कमियों के रूप में गलत तरीके से देखा जाएगा। और जब समस्याओं को गलत समझा जाता है, तो समाधान भी अप्रभावी हो जाते हैं – जैसे और प्रशिक्षण, और एक्सपोजर, और आत्मविश्वास पर काम।

लेकिन यदि व्यवस्था लगातार जाति और वर्ग के संकेतकों को "योग्यता" के रूप में पुरस्कृत करती रहे, तो ऐसे हस्तक्षेप नेतृत्व को परिवर्तित नहीं करेंगे। वे केवल कुछ महिलाओं को असमान संस्थाओं के भीतर टिके रहने के लिए तैयार करेंगे। परिवर्तनकारी नेतृत्व इससे अधिक की माँग करता है – यह संस्थाओं से अपेक्षा करता है कि वे अपने बहिष्कारी मानकों को मूल रूप से बदलें। यही कारण है कि इंटरसेक्शनल विश्लेषण आवश्यक हो जाता है।

## हाशियाकरण किन–किन रूपों में दिखाई देता है?

हाशियाकरण हमेशा प्रत्यक्ष या खुली हिंसा के रूप में नहीं दिखता। अक्सर यह रोजमर्रा की उन व्यवस्थाओं के माध्यम से काम करता है, जो यह तय करती हैं कि किसे संसाधन, सम्मान, सुरक्षा और सत्ता मिलेगी। कार्यस्थलों और समुदायों में हाशियाकरण कई रूपों में प्रकट होता है, और यह अक्सर जाति, धर्म, वर्ग, जेंडर, विकलांगता और स्थान से आकार लेता है:

- **वेतन और लाभ में असमानता:** महिलाएँ और हाशिये के कामगार समान काम करने के बावजूद कम वेतन पा सकते हैं, कमजोर अनुबंधों पर रखे जा सकते हैं, या लाभों से वंचित रह सकते हैं।
- **नौकरी की असुरक्षा:** दलित, आदिवासी, अल्पसंख्यक और श्रमिक वर्ग की महिलाएँ अधिकतर अनौपचारिक, अस्थायी या फ्रंटलाइन भूमिकाओं में धकेली जाती हैं, जबकि स्थायी पद अधिक विशेषाधिकार प्राप्त समूहों के पास रहते हैं।
- **निर्णय लेने की शक्ति का अभाव:** महिलाओं से परिणाम की जिम्मेदारी तो अपेक्षित होती है, लेकिन उन्हें योजना, बजट और रणनीति से जुड़े स्थानों से बाहर रखा जाता है।
- **पदोन्नति में बाधाएँ:** कुछ कामगार वर्षों तक "फील्ड रोल" में ही रह जाते हैं, जबकि अन्य तेजी से नेतृत्व पदों पर पहुँच जाते हैं – जो अक्सर जाति/वर्ग नेटवर्क और इस धारणा से प्रभावित होता है कि "नेतृत्व क्षमता" किसमें है।
- **प्रशिक्षण और अवसरों तक असमान पहुँच:** यात्राएँ, कार्यशालाएँ, दाता बैठकों और नेतृत्व के अवसर अक्सर कुछ ही लोगों तक सीमित रहते हैं, जबकि हाशिये के कामगार अदृश्य बने रहते हैं।
- **अनसुना या अनदेखा किया जाना:** दलित, अल्पसंख्यक, ग्रामीण या कम औपचारिक शिक्षा वाली महिलाओं के विचारों को कम विश्वसनीय मानकर नजरअंदाज किया जा सकता है।
- **असमान निगरानी:** कुछ कामगारों पर अधिक कड़ी निगरानी रखी जाती है, उन्हें अधिक कठोर प्रतिक्रिया मिलती है, और समान गलतियों के लिए उन्हें कम मौके दिए जाते हैं।
- **रोजमर्रा का अनादर:** जाति और धर्म आधारित पूर्वाग्रह मजाक, रूढ़ियों, भोजन से जुड़ी प्रथाओं, बोलने के तरीके या अनौपचारिक बहिष्करण के रूप में सामने आते हैं, जिससे कुछ लोगों को यह महसूस होता है कि वे पूरी तरह से इस कार्यस्थल का हिस्सा नहीं हैं।
- **असुरक्षित कार्य परिस्थितियाँ:** महिला कामगारों को उत्पीड़न, असुरक्षित यात्रा और कार्यस्थल हिंसा का जोखिम रहता है, लेकिन उनकी सुरक्षा से जुड़ी चिंताओं को संस्थाएँ गंभीरता से नहीं लेतीं।
- **डिजाइन के स्तर पर बहिष्करण:** कार्यस्थल अक्सर विकलांगता, देखभाल की जिम्मेदारियों या ग्रामीण परिस्थितियों को ध्यान में रखकर नहीं बनाए जाते, जिससे कुछ लोगों के लिए भागीदारी और कठिन हो जाती है।

## इंटरसेक्शनैलिटीः हाशियाकरण के कई और आपस में जुड़े रूप

हाशियाकरण को आगे इंटरसेक्शनैलिटी के माध्यम से समझा गया, जो यह मान्यता देता है कि सामाजिक श्रेणियाँ (hierarchies) अलग–अलग नहीं, बल्कि आपस में जुड़ी हुई तरीके से काम करती हैं। सभी महिलाएँ हाशियाकरण को एक ही तरह से अनुभव नहीं करतीं। जेंडर, जाति, धर्म, वर्ग, क्षमता (ability), भाषा और भूगोल के साथ मिलकर काम करता है और बहिष्करण के जटिल और असमान अनुभव पैदा करता है।

एक सवर्ण महिला और एक दलित महिला, भले ही एक ही कार्यस्थल पर समान पद पर हों, उनकी स्थितियाँ बहुत अलग हो सकती हैं। उदाहरण के लिए, दोनों को "प्रोग्राम ऑफिसर" कहा जा सकता है, लेकिन संगठन के भीतर उनकी वास्तविक सत्ता और प्रभाव अलग–अलग हो सकते हैं।

कई दफ्तरों में ऐसा कोई लिखित नियम नहीं होता कि जाति तय करती है कि कौन चाय परोसेगा या बर्तन साफ करेगा। फिर भी एक पैटर्न बार–बार दिखता हैः फील्ड स्टाफ या "सपोर्ट स्टाफ" – जो अक्सर दलित/आदिवासी या श्रमिक वर्ग से होते हैं और अक्सर महिलाएँ होती हैं – उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे चाय लाएँ, कप धोएँ या मीटिंग के बाद सफाई करें, जबकि बाकी लोग बैठे रहते हैं और चर्चा जारी रखते हैं। कोई यह नहीं कहता कि यह जाति है। इसे "मदद करना" या "उनकी भूमिका" कहकर पेश किया जाता है। लेकिन यह चुपचाप पेशेवर स्थानों के भीतर जाति की उस सोच को दोहराता है, जिसमें कुछ शरीर सेवा के लिए और कुछ निर्णय लेने के लिए निर्धारित किए जाते हैं।

साझा भोजन के स्थानों में भी जाति बिना कहे काम कर सकती है। कोई किसी के खाने पर नाक–भौं सिकोड़ता है, "गंध" को लेकर मजाक करता है, या बर्तन साझा करने से मना कर देता है। ऐसी घटनाओं के बाद कोई दलित सहकर्मी चुपचाप साझा स्थानों पर खाना खाने से बच सकता है। यह छोटी बात लग सकती है, लेकिन यह एक गहरा संदेश देती हैः तुम्हारा शरीर, तुम्हारा खाना, तुम्हारी आदतें यहाँ स्वीकार्य नहीं हैं। यह रोजमर्रा की जातिगत हिंसा का एक रूप है।

इसका मतलब यह भी है कि महिलाएँ केवल इसलिए बाधाओं का सामना नहीं करतीं क्योंकि वे महिलाएँ हैं। वे बाधाओं का सामना इसलिए करती हैं क्योंकि वे एक विशेष सामाजिक स्थिति में स्थित महिलाएँ हैं – जैसे एक दलित महिला, एक मुस्लिम महिला, एक ग्रामीण महिला, एक विकलांग महिला, या एक ऐसी महिला जिसकी औपचारिक शिक्षा सीमित है। ये स्थितियाँ यह तय करती हैं कि वे किस तरह के भेदभाव का सामना करेंगी, और उनके रोजमर्रा के कामकाजी जीवन में किस तरह के जोखिम, प्रतिबंध और अपेक्षाएँ उनका पीछा करेंगी।

महत्वपूर्ण बात यह है कि इंटरसेक्शनैलिटी कोई तैयार समाधान या कार्यक्रम का टूल नहीं है। यह एक ऐसा फ्रेमवर्क है जो समस्या को स्पष्ट रूप से पहचानने और नाम देने में मदद करता है। यह हमें यह समझने में मदद करता है कि समाज में सत्ता कैसे काम करती है – यह दिखाकर कि जेंडर को जाति, वर्ग, समुदाय, क्षेत्र और अन्य प्रभुत्व के संबंधों से अलग करके नहीं समझा जा सकता।

इस प्रकार, इंटरसेक्शनैलिटी यह स्पष्ट करती है कि संसाधनों, अवसरों और पहुँच में असमानता जाति, जेंडर, धर्म और क्षमता जैसी आपस में जुड़ी श्रेणियों के माध्यम से काम करती है। यह यह भी समझने में मदद करती है कि एक ही कार्यस्थल अलग–अलग लोगों के लिए अलग–अलग तरह का हाशियाकरण कैसे पैदा करता है।

जैसा कि मैरी ई. जॉन कहती हैं, इंटरसेक्शनैलिटी "हमें समस्या को सही ढंग से व्यक्त करने का उपकरण देती है" (John, 2015)। यह केवल कई पहचानों की पहचान करने के बारे में नहीं है; यह असमानता के संरचनात्मक आधार को समझने के बारे में है – यह समझने के लिए कि दमन कैसे आपस में जुड़ी सामाजिक व्यवस्थाओं के माध्यम से उत्पन्न होता है।

दूसरे शब्दों में, इंटरसेक्शनैलिटी एक ऐसे लेंस की तरह काम करती है, जो यह दिखाती है कि जो समस्या केवल "जेंडर समस्या" लगती है, वह अक्सर केवल जेंडर की नहीं होती। वह जाति, धर्म, वर्ग, भाषा, भूगोल और क्षमता के साथ मिलकर निर्मित और तीव्र होती है।

मान लीजिए एक एनजीओ महिला फील्ड वर्कर्स के लिए एक नेतृत्व कार्यक्रम चला रहा है। सभी महिलाओं को एक जैसी ट्रेनिंग दी जाती है। लेकिन सत्रों के दौरान कुछ महिलाएँ लगातार चुप रहती हैं या कम बोलती हैं, भले ही फसिलिटेटर उन्हें बोलने के लिए प्रोत्साहित करे। यदि हम इसे केवल जेंडर का मुद्दा मानें, तो हम कह सकते हैंः "महिलाएँ पर्याप्त आत्मविश्वासी नहीं हैं" या "उन्हें और बोलने की ट्रेनिंग चाहिए।"

इंटरसेक्शनैलिटी यह पहचानने में मदद करती है कि वास्तव में क्या हो रहा है। उदाहरण के लिए, एक दलित महिला बोलने में हिचकिचा सकती है क्योंकि उसने पहले ऐसे स्थानों पर अपने ज्ञान को बार–बार नजरअंदाज होते देखा है। एक मुस्लिम महिला कुछ स्थानों से बच सकती है क्योंकि उसे अपने 'यहाँ होने' पर असुरक्षा महसूस होती है, या उसे लगता है कि उसे लगातार यह साबित करना पड़ता है कि उसकी आस्था कोई समस्या नहीं है। एक दिव्यांग महिला "कम सक्रिय" दिख सकती है, न कि इसलिए कि उसमें नेतृत्व क्षमता नहीं है, बल्कि इसलिए कि सत्र ऐसे बनाए गए हैं जो सक्षम शरीर (able-bodied) मानकों पर आधारित हैं – जैसे लंबे समय तक बिना ब्रेक के बैठना।

यहाँ इंटरसेक्शनैलिटी अपने आप कोई समाधान नहीं देती। लेकिन यह बाधा की वास्तविक संरचना को देखने में मदद करती है। यह दिखाती है कि केवल महिलाएँ ही बाहर नहीं की जा रही हैं, बल्कि अलग–अलग महिलाएँ अलग–अलग तरीकों से बाहर की जा रही हैं – और यह भी कि स्वयं सत्र जाति, समुदाय आधारित पूर्वाग्रह, भाषा विशेषाधिकार और सक्षम शरीर के मानकों को दोहरा रहा हो सकता है।

इससे समस्या की समझ बदल जाती है — ”महिलाओं को आत्मविश्वास चाहिए” से ”यह सत्र कुछ विशेष पहचानों और अभिव्यक्ति के तरीकों को पुरस्कृत करता है।” यही इंटरसेक्शनैलिटी को एक शक्तिशाली दृष्टिकोण बनाता है: यह यह उजागर करता है कि आवाज, वैधता, सुरक्षा और मान्यता कैसे असमान रूप से वितरित होती हैं — यहाँ तक कि महिलाओं के बीच भी।

इस प्रकार, इंटरसेक्शनैलिटी असमानता की गहराई को समझने का एक माध्यम बनती है, न कि केवल ”विविधता प्रबंधन” का एक सतही ढांचा। यह कार्यक्रम को नेतृत्व की बाधाओं को अधिक स्पष्ट रूप से समझने में मदद करती है — यह दिखाकर कि महिलाओं के सामने आने वाली चुनौतियाँ केवल जेंडर से नहीं, बल्कि जाति, धर्म, वर्ग, क्षमता, भाषा और स्थान के संयुक्त प्रभाव से आकार लेती हैं।

## प्रस्तावित अध्ययन सामग्रीः

- Adaptation Fund Board. (2022). A study on intersectional approaches to gender mainstreaming in adaptation. Adaptation Fund. https://www.adaptation-fund.org/wp-content/uploads/2022/02/AF-Final-Version_clean16Feb2022.pdf
- Batliwala, S. (2010). All about power: Understanding social power and power structures. CREA. https://www.creaworld.org/media/pdf/resources/publications/all-about-power_en.pdf
- Deshpande, S. (2006). Exclusive inequalities: Merit, caste and discrimination in Indian higher education today. Economic and Political Weekly, 41(24), 2438–2444. https://www.epw.in/journal/2006/24/special-articles/exclusive-inequalities
- Hoare, J., & Gell, F. (2009). Women's leadership and participation: Case studies on learning for empowerment. Oxfam GB. https://oxfamilibrary.openrepository.com/bitstream/10546/115530/5/bk-womens-leadership-091109-en.pdf
- International Center for Research on Women. (2023). ICRW annual report 2023: Celebrating progress, charting the future. International Center for Research on Women. https://www.icrw.org/wp-content/uploads/2024/01/FINAL_2023-ICRW-Annual-Reportpage.pdf
- John, M. E. (2015). Intersectionality: Rejection or critical dialogue? Economic and Political Weekly, 50(33), 72–76. https://www.epw.in/journal/2015/33/discussion/intersectionality-rejection-or-critical-dialogue
- Oxfam. (2013). Oxfam strategic plan, 2013–2019. Oxfam. https://www-cdn.oxfam.org/s3fs-public/file_attachments/story/oxfam-strategic-plan-2013-2019_0.pdf
- Rege, S. (2006). Writing caste/writing gender: Narrating Dalit women's testimonios. Zubaan.
- Riha, J., et al. (2025). Feminist transformative leadership for health equity. [Journal title as per publisher record]. Taylor & Francis Online. https://www.tandfonline.com/doi/full/10.1080/13552074.2025.2511403

## बिल्डिंग ब्लॉक 4:

# महिला कामगार, उनका कार्य संसार और महिला कामगारों के अधिकार

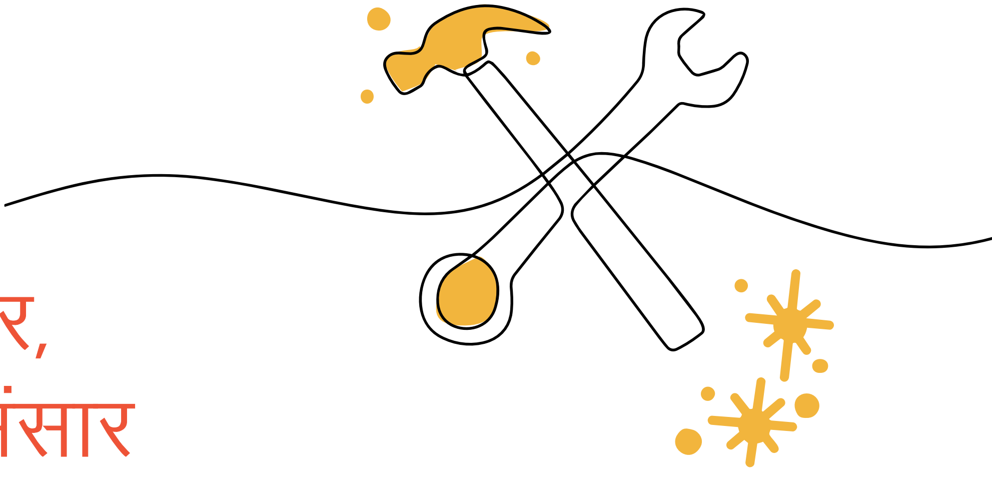

कई हस्तक्षेपों में, चाहे वे नेतृत्व निर्माण कार्यक्रम हों या क्षमता सुदृढ़ीकरण पहल, महिलाओं, विशेषकर ज़मीनी स्तर की महिलाओं, को अक्सर सबसे पहले उनकी जेंडर पहचान के माध्यम से संबोधित किया जाता हैः माँ, पत्नी, बेटी, देखभाल करने वाली। यह सही भी है, क्योंकि यही वह सबसे प्रत्यक्ष और सामाजिक रूप से लागू तरीका है, जिसके माध्यम से पितृसत्ता रोजमर्रा की जिंदगी में अनुभव की जाती है। यह कोई अनुमान नहीं है; यह इस बात में साफ दिखाई देता है कि महिलाएँ अपना समय कैसे इस्तेमाल करती हैं।

चिंगारी में, "महिलाएँ कामगार के रूप में" वाले बिल्डिंग ब्लॉक के माध्यम से हमने यह स्पष्ट किया कि चिंगारी फेलोज केवल महिलाएँ ही नहीं, बल्कि कामगार भी हैं। इस सरल बदलाव ने इन महिलाओं, विशेषकर "कम्युनिटी मोबिलाइजर," "फ्रंटलाइन स्टाफ," या "ग्रासरूट वर्कर्स" – के जीवन अनुभवों को केवल "महिला" के रूप में नहीं, बल्कि "कामगार" के रूप में देखने के लिए एक महत्वपूर्ण स्थान खोला।

यह बदलाव एक सचेत निर्णय था – यह कहने का कि कार्यस्थल केवल एक सामाजिक स्थान नहीं है, जहाँ जेंडर आधारित भेदभाव होता है, बल्कि यह एक श्रम का स्थान (labour space) भी है, जहाँ अधिकारों पर बातचीत होती है, उन्हें नकारा जाता है, उनसे वंचित किया जाता है, या उन्हें रोका जाता है।

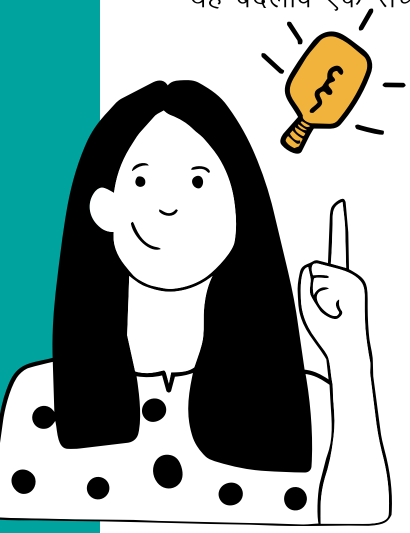

यह दृष्टिकोण यह उजागर करता है कि कार्यस्थल पर जिसे हम अक्सर "जेंडर आधारित अनुभव" के रूप में समझते हैं, वह बहुत बार श्रम से जुड़ा प्रश्न भी होता है। उदाहरण के लिए – बिना मुआवजे के लंबे काम के घंटे, बिना भुगतान के ओवरटाइम, अवास्तविक लक्ष्य, भुगतान में देरी, छुट्टियों की कमी, असुरक्षित स्थानों पर अकेले भेजा जाना, संस्थागत समर्थन के बिना समुदाय के गुस्से को संभालने की अपेक्षा – ये केवल "महिलाओं के काम की कठिनाइयाँ" नहीं हैं। ये उस संरचना के लक्षण हैं, जहाँ महिलाओं के श्रम को अनंत रूप से फैलाया जा सकने वाला और आसानी से बदला जा सकने वाला माना जाता है।

जब फेलोज को कामगार के रूप में देखा गया, तो इन वास्तविकताओं को उनके वास्तविक नाम दिए जा सके: कार्यस्थल उल्लंघन, अधिकारों से वंचित करना, और असुरक्षित कार्य की सामान्यीकरण।

यह एक महत्वपूर्ण बदलाव है, क्योंकि पितृसत्ता महिलाओं के श्रम के शोषण के माध्यम से ही टिकती है। यह शोषण घर से शुरू होता है। महिलाओं का प्रजनन श्रम, जैसे खाना बनाना, सफाई करना, बच्चों और बुजुर्गों की देखभाल, भावनात्मक सहयोग, और घर का दैनिक प्रबंधन, "काम" नहीं, बल्कि "कर्तव्य" और "जिम्मेदारी" के रूप में देखा जाता है।

उदाहरण के लिए, देखभाल को श्रम नहीं, बल्कि प्रेम के रूप में समझा जाता है। क्योंकि घर में महिलाओं को कामगार के रूप में मान्यता नहीं दी जाती, उनके काम से कोई अधिकार उत्पन्न नहीं होते – न कोई अनुबंध, न कार्य घंटे, न छुट्टी, न सुरक्षा, न सामाजिक सुरक्षा, और न ही शोषण के लिए जवाबदेही।

कार्यस्थल भी इसी सामाजिक ढाँचे को दोहराते हैं। महिलाएँ कार्यस्थलों में मौजूद तो होती हैं, लेकिन उनके श्रम को अब भी द्वितीयक, समायोज्य और असीमित रूप से लचीला माना जाता है, क्योंकि व्यवस्था यह मानकर चलती है कि उनकी "मुख्य जिम्मेदारी" कहीं और है।

यहाँ तक कि वेतनभोगी भूमिकाओं में भी महिलाओं के काम को अक्सर सेवा, त्याग या सामुदायिक कर्तव्य के रूप में देखा जाता है, न कि ऐसे श्रम के रूप में जो सुरक्षा और अधिकारों का हकदार है। यही कारण है कि कार्यस्थल ऐसे कामकाजी ढाँचे बनाते हैं, जो महिलाओं को जिम्मेदार तो बनाते हैं, लेकिन उन्हें निर्णय लेने वालों से दूर रखते हैं – उन्हें दृश्य बनाते हैं, लेकिन बिना सुरक्षा के।

यह उसी तर्क पर आधारित है, जो घर में लागू होता है: महिलाओं का श्रम आवश्यक है, लेकिन वे उसके लिए अधिकारों की हकदार नहीं हैं। इस तरह, महिलाओं की "कामगार पहचान" (worker identity) कमजोर और अस्थिर बनी रहती है।

इस बिल्डिंग ब्लॉक का उद्देश्य यह था कि फेलोज खुद को केवल पितृसत्ता के तहत जेंडर आधारित अनुभवों के भीतर ही नहीं, बल्कि काम और श्रम की व्यापक सत्ता संरचना के भीतर भी समझें – जैसे काम कैसे संगठित होता है, वेतन और लाभ कैसे तय होते हैं, किसके काम को मूल्यवान माना जाता है, और क्यों कुछ कामगार अदृश्य और असुरक्षित बने रहते हैं।

यदि महिलाओं की "कामगार" पहचान को स्पष्ट रूप से पुनर्स्थापित नहीं किया जाता, तो कोई भी नेतृत्व कार्यक्रम पितृसत्ता की मुख्य संरचना को चुनौती दिए बिना रह जाता है। महिलाएँ आवाज और दृश्यता तो प्राप्त कर सकती हैं, लेकिन समय की कमी, दोहरी जिम्मेदारी, कम मोलभाव की क्षमता और असुरक्षित कार्य परिस्थितियों में फँसी रह सकती हैं।

## महिला कामगारों की ऐतिहासिक और राजनीतिक समझ

महिलाओं को कामगार के रूप में ऐतिहासिक दृष्टि से समझना आवश्यक है, क्योंकि महिलाओं के श्रम को अक्सर या तो अदृश्य माना जाता है या आकस्मिक – जैसे कि यह कुछ ऐसा है जो महिलाएँ ”हमेशा से करती आई हैं,“ लेकिन जिसे शायद ही कभी काम के रूप में मान्यता मिलती है, और उससे भी कम राजनीतिक रूप में।

इतिहास के बिना, महिलाओं का काम एक व्यक्तिगत संघर्ष और निजी बोझ की तरह दिखाई देता है। तब महिला कामगार शोषण को व्यक्तिगत दुर्भाग्य के रूप में अनुभव करती हैं – ”यह मेरे साथ हो रहा है,“ न कि ”यह हम सबके साथ हो रहा है।“

महिलाओं के श्रम को राष्ट्रीय आंदोलनों, जन आंदोलनों, नारीवादी आंदोलनों और असंगठित क्षेत्र के संगठनों के लंबे इतिहास में स्थापित करना इस अलगाव को तोड़ता है। यह दिखाता है कि महिलाएँ पीढ़ियों से न केवल काम करती आई हैं, बल्कि अपने काम की परिस्थितियों के खिलाफ लगातार प्रतिरोध और मोलभाव भी करती रही हैं – अक्सर बिना औपचारिक रूप से कामगार, नागरिक या नेता के रूप में मान्यता पाए।

इसलिए यह इतिहास केवल अतिरिक्त संदर्भ नहीं है, यह नारीवादी नेतृत्व की नींव है। यह महिलाओं के श्रम को ”श्रम“ के रूप में और उनके प्रतिरोध को ”राजनीतिक कार्रवाई“ के रूप में मान्यता देता है।

यह विशेष रूप से ज़मीनी स्तर की महिलाओं के लिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि उनके काम को अक्सर ”सेवा“ के रूप में देखा जाता है, न कि श्रम के रूप में; और उनके संगठन को ”मदद“ के रूप में, न कि राजनीतिक संघर्ष के रूप में।

जब महिला कामगार इस इतिहास से जुड़ती हैं, तो वे वेतन, सुरक्षा, गरिमा, कार्यभार, उत्पीड़न और भेदभाव से जुड़े अपने रोजमर्रा के अनुभवों को निजी शिकायतों के रूप में नहीं, बल्कि अधिकारों के लिए सामूहिक संघर्ष के हिस्से के रूप में देख पाती हैं।

इस प्रकार, ऐतिहासिक दृष्टिकोण नेतृत्व के लिए एक महत्वपूर्ण बदलाव लाता है – अलगाव से जुड़ाव (lineage) की ओर, और व्यक्तिगत सहनशीलता से सामूहिक अधिकार (collective entitlement) की ओर। और यह एक गहरे नारीवादी प्रश्न की नींव रखता है, जो आज भी प्रासंगिक है: यदि महिलाओं का काम समान है, तो महिलाओं के श्रम को इतना सस्ता, लचीला और आसानी से बदला जा सकने वाला क्यों माना जाता है?

## क्या आप जानते हैं?

भारत में महिलाओं के श्रम अधिकारों के लिए शुरुआती कानूनी प्रतिबद्धताओं में से एक एक सरल लेकिन क्रांतिकारी विचार से शुरू हुई थी: समान काम के लिए महिलाओं और पुरुषों को समान वेतन मिलना चाहिए।

समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 (Equal Remuneration Act, 1976) उस समय लाया गया, जब महिलाओं की कमाई को अक्सर "अतिरिक्त" माना जाता था, इसलिए उन्हें कम पैसे देना आम बात समझी जाती थी।

इस अधिनियम ने यह गैरकानूनी बना दिया कि "समान कार्य या समान प्रकृति के कार्य" के लिए महिलाओं को पुरुषों से कम वेतन दिया जाए। साथ ही, इसने भर्ती और सेवा शर्तों में भेदभाव को भी प्रतिबंधित किया।

दूसरे शब्दों में, यह केवल वेतन की बात नहीं करता था, यह उस व्यापक धारणा को चुनौती देता था कि महिलाओं को केवल इसलिए खराब शर्तों पर काम पर रखा जा सकता है क्योंकि वे महिलाएँ हैं। इस कानून ने महिला कामगारों को यह कहने का कानूनी आधार दिया: मेरा श्रम समान मूल्य रखता है – यह केवल भावनात्मक दावा नहीं, बल्कि एक अधिकार है। इसने नियोक्ताओं को भी यह स्पष्ट किया कि वेतन में भेदभाव कोई "सामान्य प्रथा" नहीं, बल्कि एक उल्लंघन है।

नारीवादी नेतृत्व के लिए यह कानून इसलिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह एक निर्णायक बदलाव को दर्शाता है। यह महिलाओं को केवल सुरक्षा की जरूरत वाले "संवेदनशील समूह" के रूप में नहीं, बल्कि ऐसे कामगारों के रूप में मान्यता देता है जिनका श्रम अधिकार पैदा करता है।

## "काम की दुनिया": कार्यस्थल की समझ को बढ़ाना

"काम की दुनिया" का विचार इसलिए अहम है, क्योंकि ज़मीनी स्तर पर काम करने वाली महिलाओं के लिए कार्यस्थल कोई एक तय या सीमित जगह नहीं होता। अगर हम कार्यस्थल को सिर्फ दफ्तर या किसी संस्था तक सीमित समझेंगे, तो महिलाओं के काम से जुड़ी कई तरह की असमानताएँ नजर ही नहीं आएँगी।

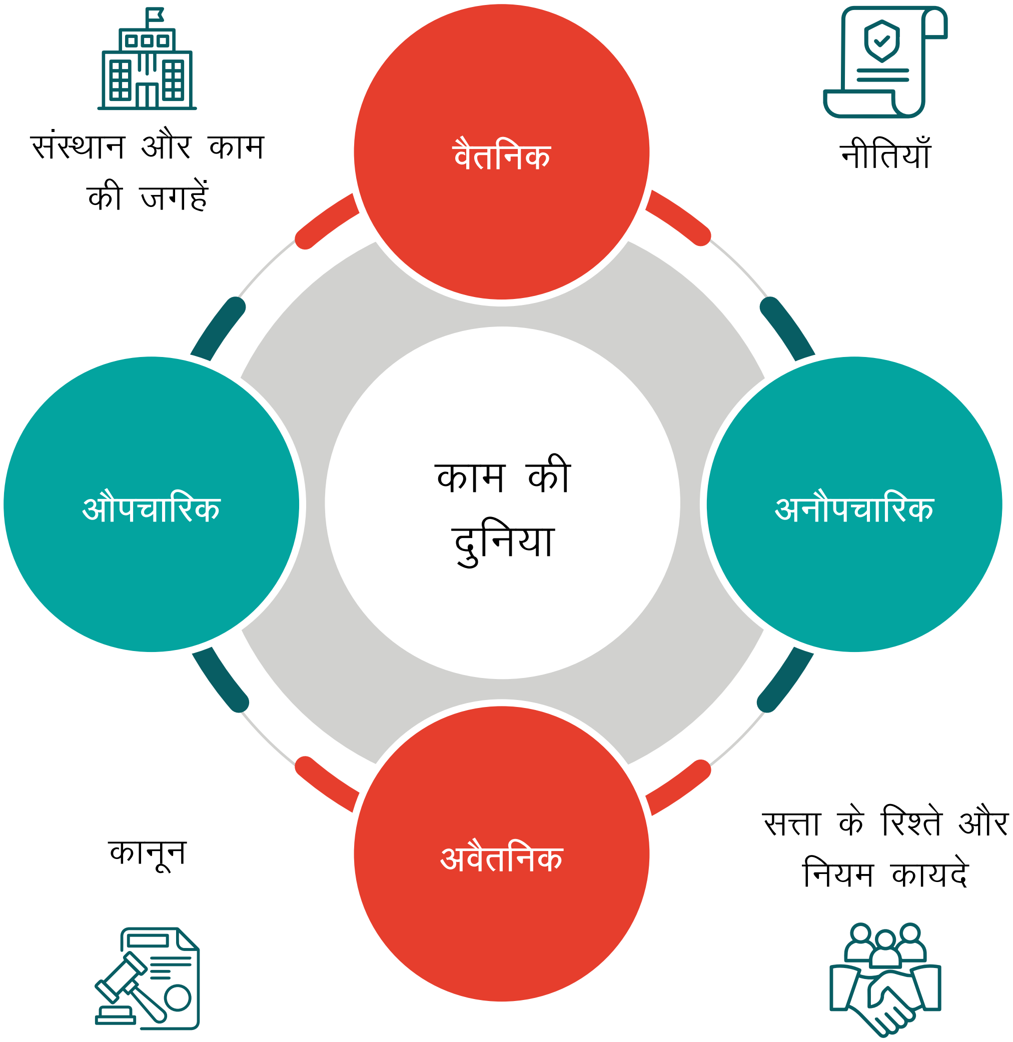
संस्थान और काम की जगहें
वैतनिक
नीतियाँ
औपचारिक
काम की दुनिया
अनौपचारिक
कानून
अवैतनिक
सत्ता के रिश्ते और नियम कायदे

"काम की दुनिया" का नजरिया कार्यस्थल को सिर्फ एक जगह के रूप में नहीं, बल्कि एक पूरे सिस्टम के रूप में देखने की बात करता है। इसमें काम की व्यवस्था, संस्थागत नियम, रिपोर्टिंग की संरचना, सामाजिक मान्यताएँ और ताकत के रिश्ते, ये सब शामिल होते हैं, जो काम के अनुभव को तय करते हैं।

यह खास तौर पर सामुदायिक स्वास्थ्य और ज़मीनी स्तर पर काम करने वाले श्रमिकों के लिए बहुत अहम है, क्योंकि उनका काम कई जगहों और रिश्तों में फैला होता है। जैसे वे जिन समुदायों और घरों में सेवाएँ देती हैं, वे सड़कें और रास्ते

जिनसे वे गुजरती हैं, वे संगठनात्मक सिस्टम जो उनके काम और लक्ष्यों को ट्रैक करते हैं, संस्थागत ढाँचे जो उन्हें पहचान या मान्यता देते हैं, और उनके अपने परिवार जहाँ घरेलू जिम्मेदारियों की उम्मीदें बनी रहती हैं।

जब हम कार्यस्थल को इस तरह से व्यापक रूप में समझते हैं, तो काम पर होने वाला उत्पीड़न सिर्फ किसी एक व्यक्ति के व्यवहार या कुछ अलग–थलग घटनाओं तक सीमित नहीं रह जाता। तब यह साफ दिखता है कि यह एक ढाँचागत समस्या है, जो इस बात से बनती है कि काम को कैसे डिजाइन किया गया है, और सुरक्षा या अधिकार किसे मिलते हैं और किसे नहीं।

## आईएलओ की "काम की दुनिया" की समझ

अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) "काम की दुनिया" शब्द का इस्तेमाल सिर्फ कार्यस्थल या नौकरी के लिए नहीं करता। यह उस पूरे माहौल को समझाने के लिए है जहाँ काम होता है। इसमें रोजगार के रिश्ते, काम की परिस्थितियाँ, वेतन, सामाजिक सुरक्षा, काम से जुड़े अधिकार, कार्यस्थल की सुरक्षा, औपचारिक और अनौपचारिक काम, बिना वेतन का देखभाल कार्य, प्रवासन, भेदभाव और न्याय तक पहुँच – सब शामिल हैं।

आईएलओ के अनुसार, "काम की दुनिया" में ये बातें आती हैं:

- **हर तरह का काम:** इसमें औपचारिक और अनौपचारिक काम, वेतन वाला और बिना वेतन का काम, ठेके पर काम, स्वयं–रोजगार और घरेलू काम शामिल हैं।
- **काम की शर्तें:** जैसे वेतन, काम के घंटे, नौकरी की सुरक्षा, अनुबंध और अन्य सुविधाएँ।
- **कार्यस्थल में अधिकार और सुरक्षा:** जैसे भेदभाव, हिंसा, उत्पीड़न और असुरक्षित माहौल से मुक्त रहने का अधिकार।
- **सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था:** जैसे मातृत्व लाभ, स्वास्थ्य बीमा, पेंशन और बेरोजगारी भत्ता।
- **काम में सत्ता संबंध:** जैसे नियोक्ता और कर्मचारी के संबंध, सामूहिक सौदेबाजी और संगठित होने का अधिकार।

आईएलओ का "हिंसा और उत्पीड़न पर कन्वेंशन (C190, 2019)" इस समझ को और आगे बढ़ाता है। यह साफ करता है कि "काम की दुनिया" सिर्फ दफ्तर या फैक्ट्री तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें ये जगहें भी शामिल हैं:

- वे जगहें जहाँ काम के लिए भुगतान किया जाता है।
- आराम करने की जगहें और शौचालय जैसी सुविधाएँ।
- काम से जुड़ी यात्रा।
- नियोक्ता द्वारा दी गई रहने की व्यवस्था।
- काम से जुड़ी डिजिटल और ऑनलाइन बातचीत।

स्रोतः अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन (2019), हिंसा और उत्पीड़न पर कन्वेंशन (संख्या 190) अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन, "डिसेंट वर्क" एजेंडा।

## औपचारिक बनाम अनौपचारिक: अस्थिरता को एक संरचना के रूप में समझना

औपचारिक और अनौपचारिक काम को समझना इसलिए आवश्यक है क्योंकि महिलाओं का काम संयोगवश अनौपचारिक रूप से संगठित नहीं होता। महिलाएँ अनौपचारिक और अर्ध–औपचारिक व्यवस्थाओं में इसलिए केंद्रित होती हैं क्योंकि पितृसत्तात्मक श्रम बाजार महिलाओं के श्रम को लचीला, पूरक और अंतहीन रूप से समायोज्य मानते हैं। अनौपचारिकीकरण (informalisation) ऐसी व्यवस्थाओं को संभव बनाता है जहाँ आवश्यक काम तो लिया जाता है, लेकिन अधिकारों को रोका जाता है।

जब महत्वपूर्ण सेवाएँ प्रदान करने वाले कामगार नियमित वेतन, अवकाश, शिकायत निवारण तंत्र और सामाजिक सुरक्षा जैसी औपचारिक सुरक्षा से बाहर रखे जाते हैं, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि अनौपचारिकता केवल एक प्रशासनिक श्रेणी नहीं है – यह एक अधिकार स्थिति है।

इसे पहचानना नारीवादी नेतृत्व के लिए इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह उस हानिकारक धारणा को तोड़ता है कि असुरक्षा कामगार की अपनी गलती है। अस्थिरता न तो व्यक्तिगत असफलता है और न ही योग्यता की कमी; यह एक संरचनात्मक डिजाइन है। अनौपचारिक कामगार "कमतर" कामगार नहीं हैं – वे ऐसे कामगार हैं जिनका श्रम आवश्यक है, लेकिन जिनके अधिकारों को रणनीतिक रूप से नकारा गया है।

स्वास्थ्य प्रणाली के भीतर काम का मानचित्रण (mapping) करना महत्वपूर्ण है, क्योंकि संस्थानों के भीतर असमानता केवल "महिलाएँ बनाम पुरुष" का सवाल नहीं होती। यह इस बात से भी जुड़ी होती है कि श्रम को कैसे क्रमबद्ध, वितरित और मूल्यांकित किया जाता है – जाति, धर्म, वर्ग और जेंडर के आधार पर।

जब कामगार यह मानचित्र बनाते हैं कि कौन कौन सा काम करता है, किसके पास अधिकार है, कौन दृश्य है और कौन अदृश्य रहता है, तब स्तरीकरण (stratification) की गहरी संरचना स्पष्ट होने लगती है। इससे यह सामने आता है कि:

- अवमूल्यित श्रम (विशेषकर सफाई और अन्य कलंकित कार्य) जाति के आधार पर केंद्रित होता है,
- "तकनीकी" काम और "देखभाल/सेवा" के काम के बीच पदानुक्रमित विभाजन बना रहता है, भले ही देखभाल का काम ही प्रणाली को टिकाए रखता हो,
- जोखिम का वितरण असमान होता है – जिनके पास सबसे कम अधिकार होते हैं, उन्हें ही असुरक्षित स्थानों पर भेजा जाता है, अकेले यात्रा करने को कहा जाता है, या संस्थागत समर्थन के बिना समुदाय के विरोध का सामना करने की अपेक्षा की जाती है।

इस स्तरीकरण को देख पाना महत्वपूर्ण है क्योंकि यह विश्लेषण को व्यक्तिगत अनुभव से हटाकर सामूहिक संरचना की ओर ले जाता है। यह महिला कामगारों को यह समझने में सक्षम बनाता है कि उनका संघर्ष एक ऐसी व्यवस्था के भीतर है जो कामगारों को अलग–अलग श्रेणियों में बाँटती है और गरिमा को असमान रूप से वितरित करती है – न कि यह केवल व्यक्तिगत दुर्भाग्य है।

## अधिकार–आधारित ढांचा

अधिकार–आधारित दृष्टिकोण इसलिए आवश्यक है क्योंकि अधिकारों की भाषा के बिना महिलाओं के अनुभव पीड़ा, समायोजन और सहनशीलता तक सीमित रह जाते हैं।

कई ज़मीनी स्तर की महिलाएँ ऐसे सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भों में काम करती हैं जहाँ अधिकारों की माँग करना "घमंड," "अकृतज्ञता," या "समस्या पैदा करना" माना जाता है। यह सांस्कृतिक अनुशासन नारीवादी नेतृत्व के सबसे बड़े अवरोधों में से एक है।

अधिकार–आधारित दृष्टिकोण इसको तोड़ता है। यह स्पष्ट करता है कि गरिमा, उचित और समय पर वेतन, सुरक्षित कार्य परिस्थितियाँ, अवकाश, शिकायत निवारण, सामाजिक सुरक्षा और भेदभाव–रहित वातावरण – ये कोई उपकार या इनाम नहीं हैं। ये कामगार होने से मिलने वाले अधिकार हैं।

यह बदलाव महत्वपूर्ण है क्योंकि नारीवादी नेतृत्व केवल आत्मविश्वास या आवाज पर निर्भर नहीं रह सकता। इसके लिए संस्थागत जवाबदेही और लागू किए जा सकने वाले सुरक्षा तंत्र आवश्यक हैं।

जब महिलाएँ अपने अनुभवों को अधिकारों के दृष्टिकोण से समझती हैं, तो वे अन्याय को केवल बयान करने से आगे बढ़कर अपने अधिकारों की माँग कर पाती हैं – व्यक्तिगत अनुरोध के रूप में नहीं, बल्कि वैध कामगार दावों के रूप में।

## कार्यस्थल हिंसा और यौन उत्पीड़न

इस बिल्डिंग ब्लॉक में कार्यस्थल हिंसा और यौन उत्पीड़न को केंद्र में रखना इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि उत्पीड़न केवल व्यक्तिगत दुर्व्यवहार नहीं है। यह अक्सर वह तंत्र होता है जिसके माध्यम से महिलाओं के श्रम को नियंत्रित और अनुशासित किया जाता है।

उत्पीड़न महिलाओं की आवाजाही को सीमित करता है, उनकी सौदेबाजी की क्षमता को कम करता है, और यह सिखाता है कि सुरक्षा चुप रहने में है।

उत्पीड़न को एक स्पेक्ट्रम के रूप में समझना जरूरी है, क्योंकि महिलाओं की असुरक्षा केवल गंभीर घटनाओं से नहीं, बल्कि रोजमर्रा के सामान्यीकृत व्यवहारों से भी पैदा होती है, जिन्हें कार्यस्थल अक्सर पहचानने और संबोधित करने में विफल रहते हैं।

यह विशेष रूप से अनौपचारिक कामगारों के लिए खतरनाक है, क्योंकि उनकी नौकरी की स्थिति उन्हें अधिक आसानी से बदला जा सकने वाला और कम संरक्षित बनाती है।

हिंसा को व्यक्तिगत दुर्भाग्य के बजाय एक संरचनात्मक समस्या के रूप में देखना जिम्मेदारी को महिलाओं से हटाकर संस्थानों पर डालता है – जिनका दायित्व है सुरक्षित कार्य वातावरण सुनिश्चित करना।

यह शर्म को भी कम करता है, क्योंकि यह स्पष्ट करता है कि महिलाओं के अनुभव उनकी व्यक्तिगत पसंद या व्यवहार का परिणाम नहीं, बल्कि कार्यस्थल की संरचना, सत्ता संबंधों और संस्थागत विफलताओं का परिणाम हैं।

## असुरक्षित श्रम के संदर्भ में नेतृत्व

ऐसे संदर्भों में जहाँ महिलाओं का काम अवमूल्यित, अनौपचारिक और हिंसा के जोखिम से भरा होता है, नेतृत्व को सुरक्षा और जीवित रहने के प्रश्न से अलग नहीं किया जा सकता।

इस संदर्भ में नेतृत्व का अर्थ केवल स्वयं के लिए नहीं, बल्कि दूसरों के लिए भी सुरक्षा की स्थितियाँ बनाना है। इसमें शामिल हैः

- असुरक्षित कार्य स्थितियों की पहचान करना,
- संस्थागत जवाबदेही की माँग करना,
- सामूहिक शक्ति का निर्माण करना,
- उल्लंघनों का दस्तावेज तैयार करना,
- शिकायतों को आगे बढ़ाना,
- सीमाएँ तय करना,
- और भेदभाव या हिंसा का सामना कर रही अन्य महिला कामगारों के साथ खड़ा होना।

इस प्रकार, सेफगार्डिंग (safeguarding) कोई अतिरिक्त कौशल नहीं है – यह नेतृत्व की एक केंद्रीय प्रैक्टिस है। यह नेतृत्व को ठोस बनाता है, उसे प्रेरणा या व्यक्तिगत आकांक्षा से आगे ले जाकर अधिकारों, सुरक्षा और सामूहिक रणनीति से जोड़ता है।

### प्रस्तावित अध्ययन सामग्रीः

- International Labour Organization. World of Work Report 2012: Better Jobs for a Better Economy. Geneva: International Labour Office, International Institute for Labour Studies, 2012. https://www.ilo.org/sites/default/files/wcmsp5/groups/public/%40dgreports/%40dcomm/%40publ/documents/publication/wcms_179453.pdf?utm_source=chatgpt.com
- Kumar, Radha. The History of Doing: An Illustrated Account of Movements for Women's Rights and Feminism in India, 1800–1990. New Delhi: Zubaan (an associate of Kali for Women), 1993.

## बिल्डिंग ब्लॉक 5:

# नारीवादी नेतृत्व और नारीवादी एक्शन

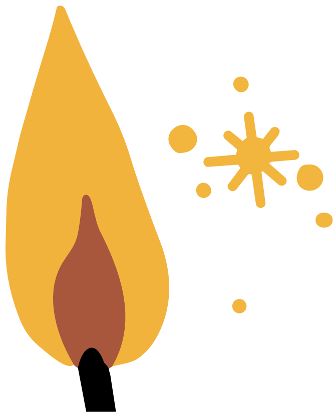

चिंगारी में "नारीवादी नेतृत्व" के "नारीवादी" हिस्से को केवल विचारों के रूप में नहीं, बल्कि उन विचारों से प्रेरित एक रोजमर्रा की प्रैक्टिस के रूप में समझा गया – एक ऐसा तरीका जिससे हम अन्याय और उसके स्रोत को पहचानते और नाम देते हैं, और अपने रोजमर्रा के जीवन में उसके प्रति प्रतिक्रियाएँ गढ़ते हैं।

इसका अर्थ था दमन की संरचनाओं – जैसे ब्राह्मणवाद, पितृसत्ता, धर्म के आधार पर दमन, आर्थिक असमानता – को केवल दूर और अमूर्त अवधारणाओं के रूप में नहीं, बल्कि रोजमर्रा के जीवन में सक्रिय वास्तविकताओं के रूप में पहचानना। जेंडर, जाति, वर्ग और धर्म से निर्मित पदानुक्रम कार्यस्थल के बाहर नहीं रहते। वे रोजमर्रा की संगठनात्मक प्रक्रियाओं के माध्यम से पुनरुत्पादित होते हैं।

इसका मतलब है कि हाशियाकरण अक्सर ऐसे दैनिक पैटर्न में अनुभव होता है जो सामान्य प्रतीत होते हैं: कौन बोलता है और कौन चुप रहता है, किसकी बात सुनी जाती है और किसे अनदेखा किया जाता है, किसे सुरक्षित भूमिकाएँ मिलती हैं और किसे बार–बार असुरक्षित या शत्रुतापूर्ण परिस्थितियों में भेजा जाता है, लक्ष्य पूरे न होने पर किसे दोष दिया जाता है, किसे मान्यता मिलती है और कौन अदृश्य रहता है, किसकी गलतियाँ माफ की जाती हैं और किसकी गलतियाँ उसकी "अयोग्यता" का प्रमाण बन जाती हैं, और कौन निर्णय–प्रक्रिया के करीब होता है बनाम कौन बिना किसी अधिकार के श्रम की अग्रिम पंक्ति में बना रहता है।

बदलाव की ताकत, नेतृत्व का हौसला

इस संदर्भ में अन्याय ठोस अनुभवों में प्रकट होता है – जैसे वेतन असमानता, असुरक्षित अनुबंध, भुगतान में देरी, उत्पीड़न, जाति और धर्म आधारित भेदभाव, असमान कार्यभार, अवकाश से वंचित किया जाना, वरिष्ठों द्वारा अपमान, और महिलाओं के बिना भुगतान वाले भावनात्मक श्रम को "स्वाभाविक" मान लेना।

इसलिए "नारीवादी नेतृत्व" में "नारीवादी" को एक ऐसी प्रैक्टिस के रूप में प्रस्तुत किया गया, जो इन अनुभवों को व्यक्तिगत संघर्ष नहीं, बल्कि पितृसत्ता, जातिगत वर्चस्व और संस्थागत पदानुक्रम द्वारा उत्पन्न पैटर्न के रूप में पहचानती है।

## नारीवादी एक्शन और नारीवादी नेतृत्व

इस बिल्डिंग ब्लॉक ने नारीवादी एक्शन और नारीवादी नेतृत्व को आपस में जुड़े, लेकिन समान नहीं, अवधारणाओं के रूप में प्रस्तुत किया। नारीवादी एक्शन वह है जो तब संभव होती है जब नारीवादी सोच रोजमर्रा के जीवन में प्रवेश करती है। यह उन चुनावों, रिश्तों और प्रतिक्रियाओं में प्रकट होती है जिनके माध्यम से हम अन्याय का सामना करते हैं।

### उदाहरण के लिए

- एक फील्ड वर्कर का किसी सर्वाइवर को दोष देने से इनकार करना और गरिमा के साथ उसका साथ देना,
- एक सुपरवाइजर का यह सुनिश्चित करना कि महिला स्टाफ समूह में और सुरक्षित समय पर यात्रा करें,
- एक सहकर्मी का दफ्तर की संस्कृति में जाति–आधारित अपमान के खिलाफ हस्तक्षेप करना,
- या एक प्रोग्राम टीम का यह सुनिश्चित करना कि कार्य योजना बनाते समय महिलाओं की बिना भुगतान वाली देखभाल जिम्मेदारियों को मान्यता दी जाए।

ये कार्य छोटे दिख सकते हैं, लेकिन वे राजनीतिक हैं क्योंकि वे उस "सामान्यता" को चुनौती देते हैं जिसे स्वीकार्य माना जाता है। साथ ही, नारीवादी एक्शन को भौतिक अधिकारों और सुरक्षा के संघर्ष के रूप में भी समझा गया। ज़मीनी स्तर की महिला कामगारों के लिए गरिमा बिना ठोस सुरक्षा के संभव नहीं है।

**इसलिए नारीवादी एक्शन में शामिल हैः**

- उचित वेतन और वेतन वृद्धि के लिए संघर्ष,
- स्थिर और सुरक्षित अनुबंध,

- समय पर भुगतान,
- अवकाश के अधिकार,
- स्वास्थ्य बीमा और सामाजिक सुरक्षा,
- और ऐसी कार्यस्थल नीतियाँ जो उत्पीड़न, हिंसा या संकट की स्थिति में वास्तव में काम करें।

इन सुरक्षा तंत्रों के बिना महिलाएँ संरचनात्मक रूप से असुरक्षित बनी रहती हैं – लगातार "समायोजन" करने के लिए मजबूर, गरिमा के लिए मोलभाव करने में असमर्थ, और नौकरी खोने के डर से अन्याय को चुनौती देने में असमर्थ।

इस प्रकार, नारीवादी नेतृत्व का निर्माण रोजमर्रा की नारीवादी प्रैक्टिस को अधिकारों, सुरक्षा और सामूहिक सौदेबाजी की लड़ाई से जोड़ने पर आधारित है।

## इस बिल्डिंग ब्लॉक का उद्देश्य

इस बिल्डिंग ब्लॉक का उद्देश्य नारीवादी नेतृत्व और नारीवादी एक्शन को ऐसे रूप में प्रस्तुत करना है जो जीवन के अनुभवों के माध्यम से वास्तविक बनता है। इन्हें ऐसे अवधारणाओं के रूप में प्रस्तुत किया गया जो प्रतिभागियों को अपने रोजमर्रा के संघर्षों और ताकतों का अर्थ समझने में मदद करती हैं। ये अन्याय को नाम देने की भाषा देती हैं, सत्ता को समझने के ढाँचे देती हैं, और चुनावों तथा सामूहिक जिम्मेदारी को दिशा देने वाले मूल्य प्रदान करती हैं।

इसे एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत किया गया जो चिंतन, सीखने और प्रैक्टिस के माध्यम से विकसित होती है – ताकि महिलाएँ अपने व्यक्तिगत अनुभवों को व्यापक दमनकारी संरचनाओं और सामूहिक बदलाव की संभावनाओं से जोड़ सकें।

## इस बिल्डिंग ब्लॉक में हमने क्या समझा?

## 1. नारीवादी नेतृत्व वही है जिसे हम प्रैक्टिस करते हैं

नारीवादी नेतृत्व न तो नारों से वास्तविक होता है और न ही केवल पहचान से – यह रोजमर्रा की प्रैक्टिस से बनता है। यह दुनिया को अलग तरीके से देखने और जीने का तरीका है। यह तब सार्थक होता है जब इसे इस रूप में समझा जाए कि हम असमानता की स्थितियों में कैसे जीते हैं, काम करते हैं, बोलते हैं और दूसरों से संबंध बनाते हैं।

नारीवादी प्रैक्टिस तब शुरू होती है जब हम सत्ता को पहचानते हैं और नुकसान को "सामान्य" मानने से इनकार करते हैं – जब हम महिलाओं के अनुभवों को गंभीरता से लेते हैं, दोषारोपण को चुनौती देते हैं, अधिकार और गरिमा पर जोर देते हैं, और एकजुटता में दूसरों के साथ खड़े होते हैं।

यह समझ एक महत्वपूर्ण बदलाव लाती है – नारीवादी नेतृत्व सुलभ हो जाता है। यह नारीवाद को जीवन से बाहर की चीज नहीं, बल्कि महिलाओं के काम और अनुभवों के भीतर पहले से मौजूद एक शक्ति के रूप में पहचान देता है। यह महिलाओं के साहस, रोजमर्रा के प्रतिरोध और देखभाल के श्रम को मान्यता देता है।

### नारीवाद सिर्फ एक पहचान नहीं, बल्कि रोजमर्रा की एक प्रैक्टिस है।

उदाहरण:

- एक सुपरवाइजर यह सुनिश्चित करती है कि फील्ड में काम करने वाली महिला कर्मियों के पास सुरक्षित शौचालय, पानी और आराम करने की जगह हो।
- एक सुपरवाइजर यह देखती है कि पंचायत नेताओं के साथ बैठकों में केवल पुरुष ही बोलते हैं, तो वह जानबूझकर महिलाओं के लिए पहले बोलने की जगह बनाती है।
- चिंगारी की एक फेलो ने बताया कि शादी के बाद अपनी पढ़ाई जारी रखने के लिए उन्हें अपने पति से बार–बार बहस करनी पड़ी। विरोध के बावजूद उन्होंने डिस्टेंस लर्निंग से अपनी डिग्री पूरी की। आज वे अपने मोहल्ले में एक छोटी पहल चला रही हैं, जहाँ वे किशोर लड़कियों को स्कूल में बने रहने और अपने परिवारों से पढ़ाई जारी रखने के लिए बात करने के लिए प्रेरित करती हैं।
- वे हमेशा "नारीवादी" शब्द का इस्तेमाल नहीं करतीं, लेकिन अपने लिए शिक्षा का हक लेना और दूसरों के लिए भी रास्ता खोलना – नारीवाद को जीने का एक रूप है।

## 2. रोजमर्रा के फैसले अन्याय को चुनौती दे सकते हैं

अन्याय इसलिए टिकता है क्योंकि वह रोजमर्रा की आदत बन जाता है। अक्सर लोग खुलकर दमन का समर्थन नहीं करते, लेकिन चुपचाप अन्याय को स्वीकार कर लेते हैं – जैसे नुकसान पहुँचाने वाले मजाक पर हँसना, अपमान को नजरअंदाज करना, बेइज़्जती को "अनुशासन" मान लेना, या महिलाओं से हर समय समायोजन की उम्मीद करना।

नारीवादी पहल इन साधारण दिखने वाले अन्यायों को रोज के छोटे–छोटे फैसलों के जरिए चुनौती देती है। यह उन पैटर्न्स को तोड़ती है जो असमानता को बनाए रखते हैं, चाहे वे कितने ही छोटे क्यों न लगें। एक न्यायपूर्ण कार्यस्थल और एक सामान्य कार्यस्थल के बीच का अंतर अक्सर बड़े–बड़े बयानों में नहीं, बल्कि रोज दोहराए जाने वाले छोटे व्यवहारों में होता है – जैसे क्या भेदभाव को चुनौती दी जाती है, क्या महिलाओं की सुरक्षा को गंभीरता से लिया जाता है।

समय के साथ, ये छोटे कदम एक ऐसी नई संस्कृति बनाते हैं जहाँ अन्याय को आसानी से सहन नहीं किया जाता।

### रोजमर्रा के फैसले ही कार्यस्थल की संस्कृति और न्याय को तय करते हैं।

उदाहरणः

- टीम यह तय करती है कि महिलाओं को देर रात असुरक्षित यात्रा पर अकेले नहीं भेजा जाएगा, चाहे इससे काम के लक्ष्य प्रभावित ही क्यों न हों।
- चिंगारी की एक फेलो ने बताया कि वे जिला स्तर के एक हेल्थ बूट कैंप में जाना चाहती थीं, जिसमें रात रुकना पड़ता। उनके पति ने यात्रा की वजह से इसका कड़ा विरोध किया। उनसे नाम वापस लेने को कहने के बजाय, कार्यक्रम की अन्य महिलाएँ मिलकर उनके घर गईं और उनके पति से उनकी भागीदारी के महत्व पर बात की। अंततः वे मान गए। वह कैंप में गईं और बाद में अपने ब्लॉक की सबसे आत्मविश्वासी फैसिलिटेटरों में से एक बन गईं।
- सामूहिक प्रयास ने यह बदल दिया कि क्या संभव माना जाता है।

## 3. गरिमा के लिए वेतन, सुरक्षा और सहारा जरूरी है

नारीवादी पहल सिर्फ सम्मानजनक व्यवहार तक सीमित नहीं है। ज़मीनी स्तर पर काम करने वाली महिला कर्मियों के लिए गरिमा उनकी भौतिक स्थितियों पर निर्भर करती है – क्या उन्हें उचित मजदूरी मिलती है, क्या वेतन समय पर मिलता है, क्या काम के अनुबंध स्थिर हैं, क्या छुट्टी के अधिकार हैं, और क्या सामाजिक सुरक्षा उपलब्ध है।

जब काम असुरक्षित होता है, तो महिला खुलकर बोल नहीं पाती। जब वेतन देर से मिलता है, तो वह कर्ज पर निर्भर हो जाती है। जब काम अनौपचारिक होता है, तो उत्पीड़न के खिलाफ आवाज उठाना और कठिन हो जाता है। बिना सुरक्षा के सहारे के, महिलाओं को हर दिन अपनी गरिमा के लिए समझौता करना पड़ता है – कभी चुप रहकर, कभी झुककर। क्योंकि विरोध की कीमत नौकरी खोना हो सकती है।

इसीलिए नारीवादी अभ्यास में आर्थिक अधिकारों, संस्थागत सुरक्षा और कामगारों की सुरक्षा के लिए संघर्ष शामिल होना जरूरी है। ये कोई "सुविधाएँ" नहीं हैं – ये वे बुनियादी शर्तें हैं जो नेतृत्व को संभव बनाती हैं।

**अधिकार, हकदारी और ठोस सुरक्षा ही गरिमा की बुनियाद हैं।**

उदाहरण:

- महिलाएँ समय पर वेतन और वेतन बढ़ोतरी में पारदर्शिता की मांग करती हैं।
- स्टाफ स्थायी अनुबंध, बीमा और मातृत्व लाभ के लिए आवाज उठाता है।
- संस्था सिर्फ कागज पर नहीं, बल्कि सच में यात्रा सुरक्षा के नियम लागू करती है।
- चिंगारी की एक फेलो ने बताया कि कई साल काम करने के बाद भी उनका अनुबंध हर साल नवीनीकृत होता था, जबकि उनसे कम अनुभव वाले एक सहकर्मी को, सिर्फ बेहतर अंग्रेजी के कारण, लंबी अवधि का अनुबंध दिया गया। इसकी वजह किसी ने नहीं बताई। उस समय उन्होंने कुछ नहीं कहा। लेकिन इस असुरक्षा का असर उनके व्यवहार पर पड़ा। वे बैठकों में कम बोलने लगीं, काम के बोझ पर सवाल उठाने से बचने लगीं, और हर समय खुद को "साबित" करने की कोशिश करती रहीं। सुरक्षा की कमी ने उनकी आवाज को सीमित कर दिया।

## 4. नारीवादी नेतृत्व के लिए राजनीतिक समझ जरूरी है

कार्यस्थल समाज से अलग नहीं होते। जाति और पितृसत्ता चुपचाप संगठनों में अपने नियमों के जरिए दाखिल हो जाती हैं – किस पर भरोसा किया जाता है, किसे नेतृत्व के लायक माना जाता है, किससे "सहयोग" की उम्मीद की जाती है, किसे अदृश्य रखा जाता है, और किसे जोखिम भरे कामों में धकेला जाता है।

ये असमानताएँ अक्सर कहीं लिखी नहीं होतीं, इसलिए इन्हें नकारना आसान होता है। लेकिन रोजमर्रा के अनुभव में ये साफ महसूस होती हैं – कौन बिना डर के बोल पाता है, किस पर ज़्यादा नजर रखी जाती है, किसकी गलतियों पर ज़्यादा सख्ती होती है, किसकी मौजूदगी को सामान्य माना जाता है, और किसे हर समय खुद को साबित करना पड़ता है।

इस संदर्भ में, नेतृत्व सिर्फ कौशल नहीं है, यह राजनीति भी है। एक नारीवादी नेता के लिए यह समझ जरूरी है कि दमन कैसे काम करता है और संस्थाएँ उसे कैसे दोहराती हैं। बिना इस समझ के, नेतृत्व सिर्फ प्रबंधन बनकर रह जाता है – लक्ष्य पूरे करना, पदानुक्रम बनाए रखना, पहले से विशेषाधिकार प्राप्त लोगों को आगे बढ़ाना, और इसे "कुशलता" कहना।

नारीवादी नेतृत्व अलग है क्योंकि यह लगातार सवाल उठाता है: कौन बाहर छूट रहा है, कौन जोखिम उठा रहा है, किसकी आवाज नहीं सुनी जा रही, किसका शोषण हो रहा है, और ये सब किन संरचनाओं से पैदा हो रहा है? इसमें जाति–आधारित सत्ता, पितृसत्तात्मक मान्यताएँ, अल्पसंख्यकों के खिलाफ भेदभाव, और दिव्यांग कामगारों के बहिष्कार को पहचानने और नाम देने की क्षमता शामिल है।

राजनीतिक समझ का मतलब यह भी है कि अन्याय को सामान्य या अनिवार्य मानने से इंकार किया जाए। इसका मतलब है अपने मूल्यों पर टिके रहना, भले ही सिस्टम इसके उलट चीजों को बढ़ावा देता हो।

**नारीवादी नेतृत्व के लिए जरूरी है कि हम उत्पीड़न को संरचनात्मक रूप में समझें और मूल्यों के आधार पर फैसले लें।**

उदाहरण:

- प्रशिक्षण के अवसरों को इस तरह बदला जाता है कि ग्रामीण और हाशिए पर मौजूद लोग भी शामिल हो सकें।
- बजट बनाते समय सिर्फ कार्यक्रम की दिखावट नहीं, बल्कि स्टाफ की भलाई और सुरक्षा को प्राथमिकता दी जाती है।
- एक चिंगारी फेलो ने बताया कि जब वे ब्लॉक स्तर की सरकारी बैठकों में अपना परिचय देती थीं, तो अधिकारी अक्सर पूछते, "आपके ऑफिस से सीनियर कौन है?", जबकि वही आधिकारिक प्रतिनिधि थीं। बाद में उन्होंने देखा कि जब उनके उच्च जाति के पुरुष सहकर्मी उन्हीं बैठकों में जाते, तो उनसे यह सवाल नहीं पूछा जाता। इसके बाद उन्होंने अपनी भूमिका को ज़्यादा स्पष्ट और मजबूती से रखना शुरू किया और हर बार पीछे हटना बंद किया। धीरे–धीरे उन्हें समझ आया कि जिसे वे अपनी "कम आत्मविश्वास" समझती थीं, वह दरअसल जाति और जेंडर के आधार पर अधिकार को देखने का एक सामाजिक पैटर्न था।
- एक और फेलो ने बताया कि उन्होंने बार–बार दूर–दराज गाँवों में अकेले यात्रा करने की सुरक्षा को लेकर चिंता जताई। उन्हें जवाब मिला, "फील्ड का काम कठिन होता है, आपको एडजस्ट करना होगा।" बाद में जब लक्ष्य पूरे नहीं हुए, तो उनसे कहा गया कि उन्हें "टाइम मैनेजमेंट सुधारने" की जरूरत है। उन्होंने बताया कि वे जोखिम और प्रदर्शन के दबाव के बीच फँसी हुई महसूस करती थीं।

## 5. नेतृत्व सामूहिक होता है, व्यक्तिगत नहीं

नारीवादी नेतृत्व, नेतृत्व को सामूहिक रूप में देखता है – जहाँ साझा जिम्मेदारी बनती है, कई महिलाएँ आगे बढ़ती हैं, आवाज और संसाधन बाँटे जाते हैं, जानकारी साझा की जाती है, और ऐसे ढाँचे बनते हैं जहाँ नेतृत्व किसी एक व्यक्ति पर निर्भर नहीं रहता।

सामूहिक नेतृत्व इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह कमी की सोच को चुनौती देता है – यह विचार कि सिर्फ एक ही महिला आगे बढ़ सकती है। यह स्थायित्व भी बनाता है – अगर एक नेता चली भी जाए, तो काम जारी रहता है, क्योंकि नेतृत्व बाँटा गया होता है, केंद्रित नहीं।

एक प्रतिभागी ने याद किया कि उनके जिले में उन्हें अक्सर "मजबूत" कहकर सराहा जाता था। हर बार जब कोई टकराव होता, उन्हें भेजा जाता। हर मुश्किल परिवार का मामला उन्हें दिया जाता। शुरुआत में उन्हें इस पर गर्व होता था। लेकिन धीरे–धीरे उन्हें महसूस हुआ कि वे थक चुकी हैं, और नए लोगों को सीखने का मौका ही नहीं मिल रहा। नेतृत्व धीरे–धीरे एक बोझ बन गया था। उन्होंने माना कि पीछे हटना भी जोखिम भरा लगता था, क्योंकि अगर कुछ गलत होता, तो जिम्मेदारी फिर भी उन्हीं पर आती। हमेशा "भरोसेमंद" बने रहने का दबाव उन्हें यह सोचने पर मजबूर करने लगा कि क्या नेतृत्व सच में सशक्तीकरण है या सिर्फ अधिक काम का बोझ।

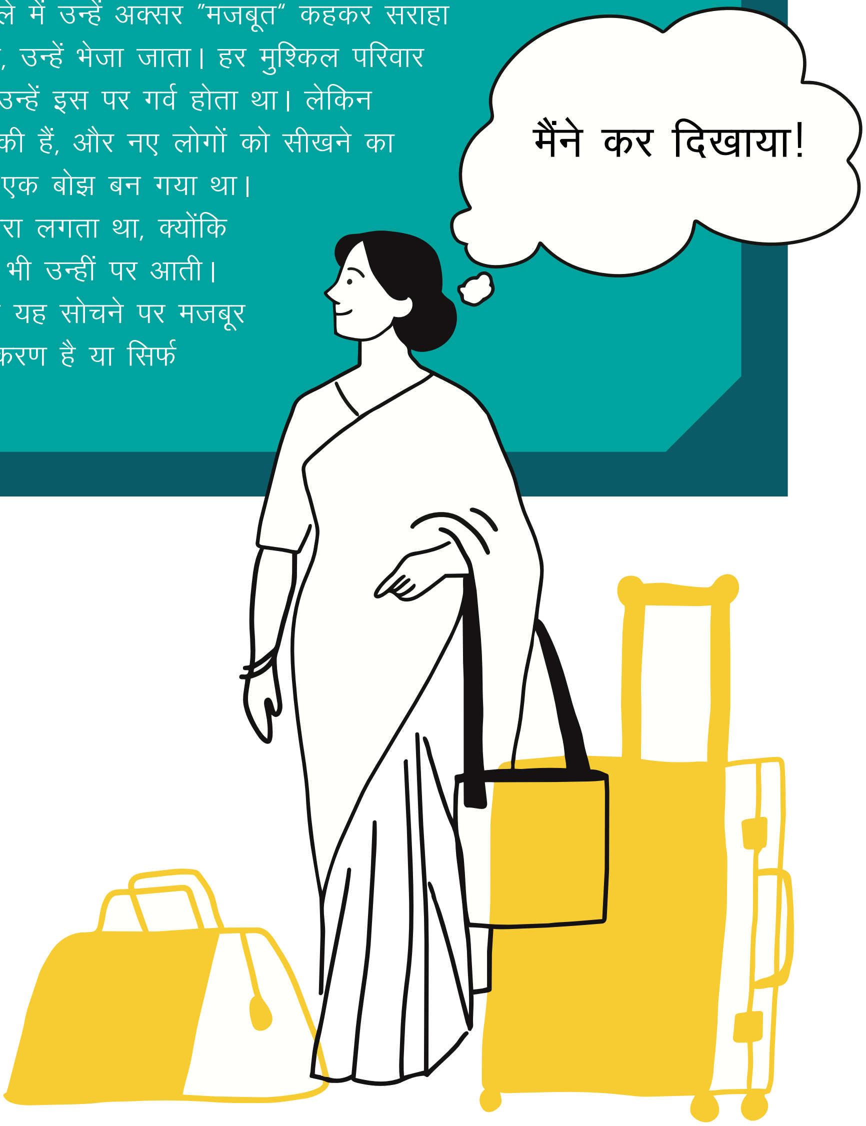

# अध्याय 2:

# नारीवादी पद्धति को आगे बढ़ाना – सीखने–सीखाने को राजनीति, अभ्यास और संभावना की तरह थामना

> “इतिहास का विषय होना, अपनी ही वास्तविकता को नाम दे पाने की क्षमता है।”
>
> पाउलो फ्रेरे

महिलाएँ सीखने की जगहों में खाली हाथ नहीं आतीं। वे एक खास तरह की चुप्पी लेकर आती हैं। यह चुप्पी सालों में बनी होती है, कभी–कभी दशकों में। निर्देशों के बीच, इनाम और सजा के बीच।

यह हमेशा झिझक की चुप्पी नहीं होती। यह सिर्फ आत्मविश्वास की कमी भी नहीं होती। यह अक्सर जीने के लिए सीखी गई चुप्पी होती है। यह वह चुप्पी है जो जानती है कि कब बोलना पलटवार बुला सकता है। यह वह चुप्पी है जो समझती है कि बातचीत कितनी जल्दी बदल सकता है। यह वह चुप्पी है जिसने "गलत" होने की कीमत तौली है। ज़्यादा दिखने की कीमत। ज़्यादा निश्चित होने की कीमत।

कुछ महिलाएँ शालीनता जैसी दिखने वाली चुप्पी लाती हैं, जो दरअसल सुरक्षा होती है। कुछ उदासीनता जैसी दिखने वाली चुप्पी लाती हैं, जो थकान को ढकती है। कुछ चुप्पी को प्रतिरोध बना लेती हैं। कुछ की चुप्पी उनके श्रम की होती है, क्योंकि उनकी जिंदगी काम में बीती है, अपने काम पर भाषण तैयार करने में नहीं।

और जो महिलाएँ आत्मविश्वास से बोलती भी हैं, वे भी भीतर एक सतर्कता के साथ बोलती हैं। जैसे बोलते हुए भी यह देख रही हों कि कौन सुन रहा है और वह क्या अर्थ निकालेगा।

टियर 2 और टियर 3 शहरों की 46 महिलाएँ, जो समुदाय आधारित संगठनों में काम करती थीं, जब पहली बार चिंगारी के आवासीय वर्कशॉप में आईं, तो वे सिर्फ अपनी पेशेवर पहचान लेकर नहीं आईं। वे अपनी पूरी सामाजिक इतिहास लेकर आईं।

उनके कपड़े, उनकी बोली, उनकी भाषा – सब अपने साथ जाति, धर्म, विशेषाधिकार और उत्पीड़न के अलग–अलग अनुभव लेकर आए। कोई गाँव से आई थी, कोई छोटे शहर से, कोई बड़े शहर से। किसी ने उच्च शिक्षा के रास्ते सहजता से पार किए थे। किसी ने मैदान में काम करते हुए, संघर्ष के बीच अपनी समझ बनाई थी।

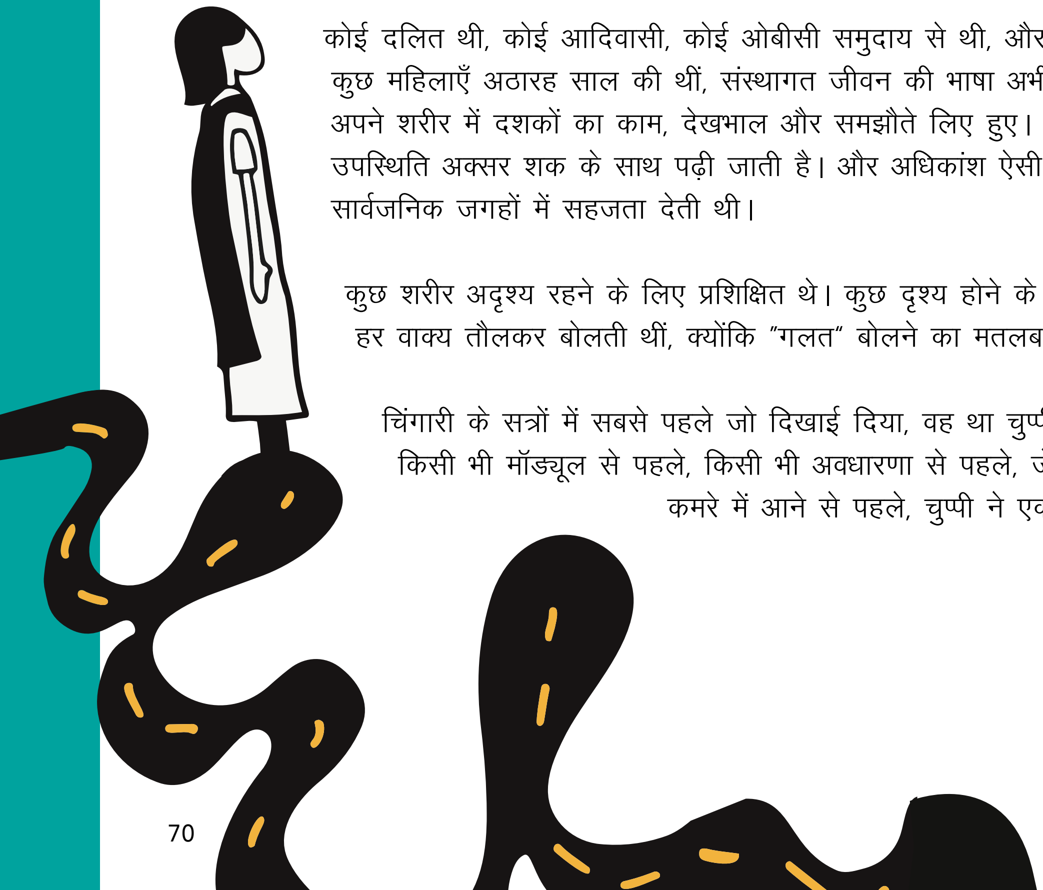

कोई दलित थी, कोई आदिवासी, कोई ओबीसी समुदाय से थी, और कई प्रभुत्वशाली जातियों से थीं। कुछ महिलाएँ अठारह साल की थीं, संस्थागत जीवन की भाषा अभी सीख रही थीं। कुछ पचास की थीं, अपने शरीर में दशकों का काम, देखभाल और समझौते लिए हुए। कुछ मुस्लिम महिलाएँ थीं, जिनकी उपस्थिति अक्सर शक के साथ पढ़ी जाती है। और अधिकांश ऐसी थीं जिनकी धार्मिक पहचान उन्हें सार्वजनिक जगहों में सहजता देती थी।

कुछ शरीर अदृश्य रहने के लिए प्रशिक्षित थे। कुछ दृश्य होने के लिए। कुछ सहज बोलती थीं। कुछ हर वाक्य तौलकर बोलती थीं, क्योंकि "गलत" बोलने का मतलब अपमान हो सकता था।

चिंगारी के सत्रों में सबसे पहले जो दिखाई दिया, वह था चुप्पी। चुप्पी ही पहला पाठ्यक्रम थी। किसी भी मॉड्यूल से पहले, किसी भी अवधारणा से पहले, जेंडर, पितृसत्ता और सत्ता की भाषा कमरे में आने से पहले, चुप्पी ने एक बात साफ कर दी थी।

## सीखने की जगहें तटस्थ नहीं होतीं

वे दुनिया को अपने साथ लाती हैं। पितृसत्ता दरवाजे पर रुकती नहीं। जाति बाहर इंतजार नहीं करती। संस्थागत या उम्र आधारित दर्जाबंदी सीखने की जगह में खुद–ब–खुद खत्म नहीं होती। कमरे में बैठी महिलाएँ भले ही एक ही पहचान रखती हों – चिंगारी फेलो – पर सत्ता उनके साथ कमरे में प्रवेश करती है। भाषा के जरिए। जातिगत स्थिति के जरिए। वर्गीय सहजता के जरिए। शहर के अनुभव के जरिए। उम्र के जरिए। आत्मविश्वास के जरिए, या उसकी कमी के जरिए।

एक कार्यक्रम टीम के रूप में हमने वही किया जो कोई भी गंभीर क्षमता–निर्माण पहल करती है। हम तैयारी के साथ आए। एजेंडा तैयार था। सत्रों की रूपरेखा बनी थी। फ्रेमवर्क स्पष्ट था। यह तैयारी जरूरी थी। यही सीखने की जगह बनाने का हिस्सा है। लेकिन शुरू करने से पहले ही, चुप्पी मौजूद थी। गाढ़ी, राजनीतिक, परतदार।

इन महिलाओं के पास ज्ञान की कमी नहीं थी। वे समुदाय संभालती थीं। अस्पतालों के साथ काम करती थीं। स्थानीय सत्ता से निपटती थीं। संस्थागत समयसीमाओं को पूरा करती थीं। चुप्पी इसलिए थी क्योंकि दुनिया ने हर महिला को बोलने की अलग–अलग कीमत सिखाई थी। और यहीं से एक गहरा सवाल सामने आया।

हम किस तरह की पद्धति लेकर इस कमरे में आए हैं? क्या हमारी विधियाँ सिर्फ सहभागिता को संभालेंगी? या वे उन ढाँचों से टकराएँगी जो चुप्पी पैदा करते हैं?

कोई भी नेतृत्व कार्यक्रम जो सीख को तटस्थ मानता है, वह पहले से ही महिलाओं को असफल कर रहा है। इसीलिए पद्धति का सवाल अहम है। पद्धति वह संरचना है जो तय करती है कि एक सत्र में कैसी उपस्थिति संभव है। पद्धति तय करती है कि चुप्पी को असफलता माना जाएगा या सच।

परिवर्तन
की
शक्ति

## नारीवादी पद्धति का मर्म

चतुर गतिविधियाँ, अच्छे मॉड्यूल, सहज फैसिलिटेशन, ऊर्जा बढ़ाने वाले अभ्यास – ये सब उपयोगी हैं। लेकिन ये केंद्र नहीं हैं।

पद्धति यह है कि हम सीख को किस रूप में देखते हैं। यह वह कल्पना है जो सीखने की जगह को थामे रहती है। यह वह खामोशी है जो तय करती है, कौन शिक्षक है, कौन सीखने वाला है, क्या ज्ञान माना जाएगा, और सीख से किस तरह का बदलाव अपेक्षित है।

इसीलिए पद्धति पर बात करना, दरअसल सत्ता पर बात करना है। सीखने की जगहें दुनिया से अलग नहीं होतीं। वे उसी से बनी होती हैं। दुनिया जो लेकर आती है – दर्जाबंदी, बहिष्करण, डर, विशेषाधिकार – वह सीखने की जगहों में भी आता है। दफ्तर, परिवार, समुदाय, सब दर्जाबंदी लेकर चलते हैं। सीखने की जगहें भी वही लेकर आती हैं, जब तक उन्हें अलग तरीके से नहीं थामा जाता। जो पद्धति इसे नाम देने से मना करती है, वह अंततः उसे दोहराती है।

पाउलो फ्रेरे ने इसी पर चेताया था। उन्होंने कहा कि ज़्यादातर शिक्षा एक ”बैंक” की तरह काम करती है। ज्ञान मुद्रा बन जाता है। सीखने वाले खाली खाते। शिक्षक जमा करता है। सीखने वाला चुपचाप ग्रहण करता है। यह सीख आजादी नहीं देती। यह आज्ञाकारिता सिखाती है। यह दुनिया को जैसा है वैसा ही स्वीकार करना सिखाती है, यह नहीं कि दुनिया ऐसी क्यों है। फ्रेरे का कहना था कि शिक्षा को कुछ और करना चाहिए। उसे लोगों को दुनिया पढ़ना सिखाना चाहिए। सिर्फ शब्द नहीं, बल्कि उनके चारों ओर के ढाँचे भी। उसे विकसित करना चाहिए आलोचनात्मक चेतना। ऐसी चेतना जो उत्पीड़न को साफ–साफ देख सके। उसे नाम दे सके। और यह समझ सके कि जो ”किस्मत” लगता है, वह दरअसल बनाया गया है। और जो बनाया गया है, उसे चुनौती दी जा सकती है।

चिंगारी में, नए औजारों के साथ–साथ, एक नजर भी दी गई। एक ऐसी नजर जिससे फेलो अपनी रोजमर्रा की जिंदगी और काम को देखें और उसके भीतर काम कर रहे ढाँचों को पहचानें। घर के भीतर पितृसत्ता। संस्थाओं के भीतर जाति। संगठनात्मक संस्कृति के भीतर वर्गीय असमानता। तभी महिलाएँ उत्पीड़न को सामान्य मानने से हटकर उसे एक व्यवस्था के रूप में पहचान सकती हैं। क्योंकि जब उत्पीड़न को नाम नहीं दिया जाता, तो महिलाएँ उसे अकेले ढोती हैं। लेकिन जब वह साफ दिखने लगता है, तो वह सोच में आता है। वह बातचीत में आता है। वह राजनीतिक बन जाता है।

नारीवादी नेतृत्व निर्माण में आलोचनात्मक चेतना एक नेतृत्व क्षमता होनी चाहिए। सिर्फ आत्मविश्वास नहीं, स्पष्टता। सिर्फ संप्रेषण कौशल नहीं, बल्कि खुद को सत्ता के भीतर स्थित कर पाने की क्षमता। नेतृत्व सिर्फ व्यक्तिगत उन्नति नहीं है। यह दुनिया को पढ़ने, अन्याय को नाम देने और उसके भीतर सजग होकर काम करने की क्षमता भी है।

मेरी यात्रा,
मेरी शक्ति

## "दुनिया को पढ़ना" आखिर क्या होता है?

सुनीता एक प्रोग्राम कोऑर्डिनेटर है। उसका काम है गाँव–गाँव जाना, फील्ड स्टाफ को सहयोग देना, समुदायों को संगठित करना और यह सुनिश्चित करना कि गतिविधियाँ समय पर चल रही हों। उसका हर दिन, दिन के ठीक से शुरू होने से पहले ही शुरू हो जाता है।

सुबह 6:30 बजे उसका फोन बजता है। उसके सुपरवाइजर का कॉल है, जो पूछ रहे हैं कि कल का डेटा अब तक अपडेट क्यों नहीं हुआ। वह कहती है कि दोपहर तक कर देगी। दस मिनट बाद फिर कॉल आता है। इस बार उसकी एक फील्ड स्टाफ है, जो घबराई हुई आवाज में बता रही है कि गाँव की बैठक को कुछ स्थानीय पुरुषों ने बाधित कर दिया है, वे सवाल उठा रहे हैं कि महिलाएँ इकट्ठा क्यों हो रही हैं। सुनीता ध्यान से सुनती है, उसे शांत करती है और आश्वासन देती है कि वह आएगी। सुबह के आठ बजते–बजते वह काम से जुड़ी तीन बातचीत कर चुकी होती है, लेकिन उसने अभी तक चाय भी नहीं पी है।

वह जल्दी–जल्दी घर से निकलती है। परिवार के लिए खाना तैयार रख देती है, क्योंकि उसे नहीं पता कि वह कब लौटेगी। अगर उसके बच्चे हैं, तो वह उनके स्कूल जाने की व्यवस्था पहले ही कर चुकी होती है। बाहर निकलने से पहले वह अपना दुपट्टा ठीक करती है, फोन की बैटरी देखती है, अपना पहचान पत्र चेक करती है। दरअसल, वह खुद को चेक करती है।

देर सुबह वह गाँव पहुँचती है। धूप तेज है, रास्ता ऊबड़–खाबड़ है। एक बस्ती से दूसरी बस्ती तक उसे पैदल जाना पड़ता है क्योंकि परिवहन सीमित है। चाय की दुकानों पर बैठे पुरुष उसे गुजरते हुए देखते हैं। कुछ खुलकर टिप्पणी करते हैं, कुछ चुपचाप घूरते हैं। एक आदमी हँसते हुए कहता है, "ऐसे क्यों घूम रही हो? कोई तुम्हें कंट्रोल नहीं करता?" दूसरा पूछता है, "तुम्हारा पति कहाँ है?" ये वाक्य सामान्य से लगते हैं, लेकिन सुनीता चलती रहती है। वह नियम जानती है।

बैठक में वह महिलाओं को साथ लाने की कोशिश करती है, लेकिन माहौल तनावपूर्ण है। एक स्थानीय नेता वहाँ आकर खड़ा हो जाता है। वह शालीनता से बात करता है, लेकिन उसकी शालीनता में ही एक तरह की धमकी छिपी होती है। वह कहता है, "काम करो, लेकिन समस्या मत खड़ी करो। महिलाओं को ज़्यादा मत सिखाओ।" सुनीता मुस्कुराती है, क्योंकि उसे मुस्कुराना आता है – ताकि तनाव न बढ़े, ताकि काम चलता रहे, ताकि कोई उसे असम्मानजनक न कह सके।

दोपहर में वह ऑफिस लौटती है, जहाँ समीक्षा बैठक है। कमरा भरा हुआ है। एक पुरुष सहकर्मी आत्मविश्वास से बोल रहा है। वह आज कहीं गया नहीं है, उसने समुदाय का प्रतिरोध नहीं झेला है, न ही उन निगाहों का सामना किया है जो पीछा करती हैं। उसकी भाषा साफ और सधी हुई है, और सभी उसे सुन रहे हैं।

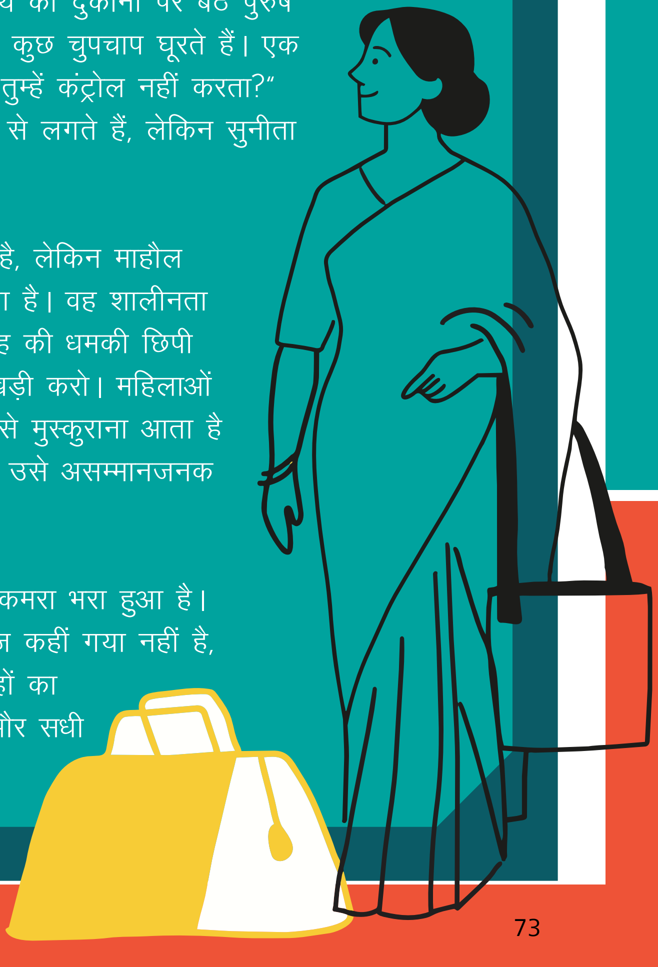

सुनीता कोशिश करती है कि वह बताए कि गाँव में क्या हुआ – कैसे पुरुषों ने बैठक रोकी, कैसे महिलाएँ डर रही हैं, कैसे एक महिला ने हिंसा का अनुभव साझा किया, और कैसे स्थानीय सत्ता उनके काम में रुकावट डाल रही है। लेकिन उसे बीच में ही रोक दिया जाता है।

"बस अपडेट दे दो," कोई कहता है।
"इमोशनल मत बनो," दूसरा जोड़ता है।
"तुम हमेशा बहुत कहानियाँ ले आती हो," कोई हँसते हुए कहता है।

बाद में जब चाय बनाने की बात आती है, तो सबसे पहले उसका नाम लिया जाता है – "तुम अच्छा बनाती हो।" जब नोट्स लेने होते हैं, तो उसकी कॉपी उसकी ओर बढ़ा दी जाती है – "तुम साफ लिखती हो।" जब फॉलो–अप कॉल करने होते हैं, तो उससे कहा जाता है, क्योंकि "महिलाएँ महिलाओं से बेहतर बात करती हैं।"

जब वह हिचकिचाती है, तो उसे "मुश्किल" कहा जाता है। जब वह अपनी बात पर डटती है, तो उसे "ज़्यादा आक्रामक" कहा जाता है। धीरे–धीरे अतिरिक्त काम उसकी जिम्मेदारियों पर ऐसे जमने लगता है जैसे धूल, जो दिखती नहीं, पर भार बढ़ाती जाती है।

वह अंधेरा होने के बाद घर लौटती है। फोन अब भी बजता रहता है। ऑफिस अब भी जवाब की अपेक्षा करता है। घर पहुँचने पर कोई यह नहीं पूछता कि उसका दिन कैसा थाय उससे पूछा जाता है कि वह देर से क्यों आई। उसके चरित्र पर एक टिप्पणी हल्के–से मजाक की तरह की जाती है। वह न हँसती है, न जवाब देती है। वह रसोई की ओर चली जाती है। दूसरी पारी शुरू हो जाती है।

समय के साथ सुनीता अपने भीतर एक भारीपन महसूस करने लगती है। यह सिर्फ थकान नहीं है, बल्कि एक धीमा, शांत आत्म–संदेह है। वह सोचने लगती है – शायद मैं ठीक से काम नहीं कर पा रही हूँ, शायद मैं ज़्यादा संवेदनशील हूँ, शायद मुझे कम बोलना चाहिए, शायद मुझे और समायोजन करना चाहिए। और धीरे–धीरे वह मानने लगती है कि जिंदगी बस ऐसी ही होती है।

**चिंतन के लिए प्रश्न**

- सुनीता के दिन में ऐसे कौन–कौन से क्षण हैं जहाँ सत्ता काम कर रही है?
- उसके अनुभव के कौन से हिस्से "सामान्य" मान लिए गए हैं, जबकि वे दरअसल अन्याय के रूप हैं?
- घर, कार्यस्थल और समुदाय – इन तीनों जगहों पर पितृसत्ता किस तरह दिखाई देती है?
- सुनीता किस तरह का श्रम कर रही है जिसे श्रम के रूप में पहचाना ही नहीं जाता? इस अदृश्यता का लाभ किसे मिलता है?
- अगर सुनीता फ्रेरे के अर्थ में "दुनिया को पढ़ना" शुरू करे, तो वह क्या अलग तरह से देखने लगेगी? जब उसे यह समझ आए कि यह किस्मत नहीं, बल्कि एक रचना है, तो वह कौन से नए सवाल पूछ सकती है?
- और ऐसा कौन सा सामूहिक सहयोग हो सकता है जो सुनीता को अकेले नहीं, बल्कि दूसरों के साथ मिलकर प्रतिरोध करने की ताकत दे सके?

# एक पद्धति को नारीवादी क्या बनाता है?

नारीवादी पद्धति केवल ऐसी पद्धति नहीं है जिसमें नारीवाद से जुड़ा कुछ कंटेंट जोड़ दिया गया हो। यह एक सत्र जेंडर, नारीवाद या सत्ता पर रख देने से तैयार नहीं हो जाती, न ही केवल समावेशी भाषा इस्तेमाल करने से। असल में, नारीवादी पद्धति एक गहरा निर्णय है यह तय करने का कि सीखने की जगह के भीतर हम किस तरह की दुनिया बनाना चाहते हैं।

## यह सिर्फ एक तरीका नहीं, बल्कि एक नैतिकता भी है।

## जीवनानुभव को ज्ञान मानना

> "जीवनानुभव" दो साधारण शब्दों से बना है,
> लेकिन इसका अर्थ गहरा है।

"जीवन" का मतलब है वह जो शरीर से होकर गुजरा है, जो लंबे समय तक भीतर बसा रहा है, जो अपनी छाप छोड़ता है – आवाज में, कंधों पर, कमरे में प्रवेश करने के ढंग में, और इस बात में कि कोई महिला कहाँ बैठना चुनती है। यह वही है जो हम जीते हुए अपने भीतर लेकर चलते हैं।

"अनुभव" वह है जो जीते हुए इकट्ठा होता है। यह केवल घटना नहीं है, बल्कि वह है जो घटना हमारे भीतर जमा कर जाती है, एक याद, एक डर, एक आदत, एक रणनीति। दिन के खत्म हो जाने के बाद जो हमारे साथ रह जाता है, वही अनुभव है। यह वह ज्ञान है जो जीवन से गुजरते हुए बनता है, कभी सहारा पाकर, कभी दबाव में आकर, और कभी क्षण भर की आजादी का आकार पहचानते हुए।

जब ये दोनों मिलते हैं, तो जीवनानुभव एक ऐसे ज्ञान का रूप लेता है जो किताबों से शुरू नहीं होता, बल्कि जीवन से जन्म लेता है। यह वह ज्ञान है जो महिलाएँ अपनी जिंदगी से लेकर आती हैं, जो उन्होंने देखा, सहा, जिया, डरा, किया और पार किया। इसका अर्थ है कि हम सीख की शुरुआत वहीं से करें जहाँ महिलाएँ पहले से खड़ी हैं, क्योंकि जीवन ने उन्हें पहले ही बहुत कुछ सिखाया है।

इसमें घर, सड़क, दफ्तर, कक्षा और फील्ड, सब शामिल हैं। इसमें वे छोटे–छोटे रोजमर्रा के हिसाब भी शामिल हैं, जो महिलाएँ अपनी सुरक्षा, रोजगार, सम्मान या सिर्फ अकेला छोड़े जाने के लिए करती हैं।

नारीवादी पद्धति इस ज्ञान को गंभीरता से लेती है। पहला कारण यह है कि महिलाओं की जिंदगी इस बात का साक्ष्य होती है कि सत्ता जब रोजमर्रा बन जाती है, तो कैसी दिखती है, वह क्या मांगती है, क्या छीनती है, क्या देती है और क्या रोकती है। इस अर्थ में, जीवनानुभव केवल व्यक्तिगत इतिहास नहीं हैय यह सामाजिक ज्ञान है। यह जाति और वर्ग, श्रम और गतिशीलता, धर्म और सम्मान, हिंसा और सहनशीलता का रिकॉर्ड है।

# "आपने पहली बार जेंडर का अनुभव कब किया?"

पहले आवासीय वर्कशॉप में हमने एक सीधा–सा दिखने वाला सवाल पूछा – आपने पहली बार जेंडर का अनुभव कब किया?

हमने परिभाषाएँ नहीं मांगीं, हमने एक स्मृति मांगी। हमने प्रतिभागियों को आमंत्रित किया कि वे अपने जीवन के किसी शुरुआती क्षण में लौटें – घर, स्कूल, सड़क, परिवार या कहीं भी – जहाँ उन्होंने पहली बार अपने जेंडर को महसूस किया।

कमरा, जो पहले से चुप्पी से भरा था, धीरे–धीरे खुलने लगा और फिर पूरी तरह खुल गया। साझा करने की प्रक्रिया लंबी और अप्रत्याशित रूप से गहरी थी। सामने आई कहानियाँ थीं – आवागमन पर नियंत्रण, कपड़ों पर रोक, विवाह के निर्णय में भागीदारी का अभाव, परिवार के भीतर हिंसा, अधूरे सपने।

डर और बंदिशों की कहानियाँ थीं, लेकिन पहली बार प्रतिरोध की भी – पहली बार "ना" कहना, पहली बार "क्यों" पूछना, पहली बार यह समझना कि इस असमान दुनिया ने उनके शरीर के लिए अलग नियम बनाए हैं।

फैसिलिटेटर के रूप में एक बेचैनी भी थी – घड़ी और कमरे के बीच एक खिंचाव। लेकिन जल्दी ही स्पष्ट हो गया कि यह कोई भटकाव नहीं है। उस क्षण की संवेदनशीलता के साथ बने रहना, किसी भी परिचयात्मक लेक्चर से कहीं अधिक गहरा असर कर रहा था।

सबसे पहले, इससे यह स्पष्ट हुआ कि महिलाएँ कभी एकसमान समूह नहीं होतीं। "महिला" एक साझा अनुभव तो बनाता है, लेकिन समान अनुभव नहीं। यादें अलग थीं, सीमाएँ अलग उम्र में आई थीं, दंड बराबर नहीं थे। कुछ ने जेंडर को नियंत्रण के रूप में अनुभव किया, कुछ ने हिंसा के रूप में, कुछ ने उपहास के रूप में, और कुछ ने बोझ के रूप में।

दूसरे, इसने कमरे के भीतर मौजूद असमानताओं को दृश्य बना दिया। जाति, वर्ग, धर्म, भाषा, स्थान और पारिवारिक स्थिति – ये सब पृष्ठभूमि में नहीं रहे, बल्कि स्मृतियों के माध्यम से सामने आए। असमानता को अलग से बताने की जरूरत नहीं पड़ीय वह पहले से मौजूद थी।

और तीसरे, इसने एक महत्वपूर्ण नैतिकता स्थापित की – खुलापन। यह स्वीकारोक्ति का खुलापन नहीं था, बल्कि विश्वास का। जब कोई फैसिलिटेटर महिलाओं से कहता है कि वे अपने अनुभव से शुरू करें, तो यह सिर्फ माहौल बनाने के लिए नहीं होता। यह एक ईमानदार दावा होता है कि आपकी जिंदगी "सिर्फ व्यक्तिगत" नहीं हैय वह पहले से ही राजनीतिक सामग्री है।

इसीलिए यह एक सवाल, "आपने पहली बार जेंडर का अनुभव कब किया?", चिंगारी के कमरे को बदल गया।

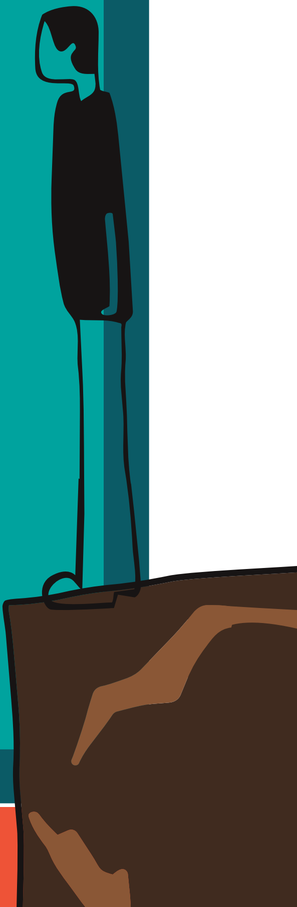

जीवनानुभव को केंद्र में रखना, महिलाओं के शब्दों को अर्थपूर्ण ज्ञान मानना है, और रोजमर्रा को राजनीतिक समझ की शुरुआत बनाना है।

दूसरा कारण यह है कि पितृसत्ता हमेशा से महिलाओं को उनके अपने ज्ञान से दूर करने की कोशिश करती रही है। उसे "व्यक्तिगत", "भावनात्मक" या "छोटा" कहकर उसे कमतर बनाया जाता है। लेकिन महिलाओं का जीवनानुभव दुनिया का वह नक्शा लेकर चलता है जैसा वह वास्तव में है। यह दिखाता है कि असमानता कैसे घर में "परंपरा" बनकर प्रवेश करती है, कार्यस्थल में "काबिलियत" बनकर, और सार्वजनिक जगहों में "सुरक्षा" के नाम पर।

# एक साथ, अधिक सशक्त

इसलिए जीवनानुभव को केंद्र में रखना एक राजनीतिक कदम है – वहीं से शुरुआत करना जहाँ महिलाएँ सच में खड़ी हैं।

हालाँकि, नारीवादी स्थानों में एक जोखिम भी होता है – अनुभव को रोमांटिक बना देने का। उसे पवित्र मान लेना, आलोचना से परे। लेकिन नारीवादी पद्धति केवल अनुभव को मान्यता देने तक सीमित नहीं रहती।

जीवनानुभव को केंद्र में रखने का मतलब उसे पूजनीय बना देना नहीं है। इसका मतलब यह नहीं कि कहानियाँ साझा हों और फिर उन्हें बिना छुए रख दिया जाए। इसका अर्थ है कि कहानियों को इतना सम्मान दिया जाए कि उन्हें गंभीरता से समझा जाए।

यह पूछना जरूरी है – अनुभव क्या उजागर करता है? और क्या छिपाता है? वह किन ढाँचों से आकार लेता है – जाति, आर्थिक व्यवस्था, जेंडर बाइनरी, धर्म, क्षमता? यहीं नारीवादी पद्धति फैसिलिटेटर से एक अनुशासन की मांग करती है – यह समझने का कि अनुभव कभी भी बराबरी से कक्षा में प्रवेश नहीं करता।

कमरा महिलाओं से भरा हो सकता है, लेकिन दुनिया ने इन महिलाओं के साथ समान व्यवहार नहीं किया है। कुछ महिलाएँ सामाजिक संस्थानों तक सहज पहुँच रखती हैं, जबकि कुछ के लिए वह रास्ता कठिन है। कुछ को जाति, वर्ग, शिक्षा, भाषा या उम्र से सुरक्षा मिलती है, जबकि कुछ को अपने शरीर, नाम, धर्म या इतिहास के कारण अधिक असुरक्षा झेलनी पड़ती है।

अगर कक्षा इस फर्क को भूल जाती है, तो जीवनानुभव को केंद्र में रखने का प्रयास एक नई असमानता पैदा कर सकता है – जहाँ पहले से सुरक्षित आवाजें और ऊँची हो जाती हैं, और जो अनुभव "स्वीकार्य महिला" से मेल खाते हैं, वही सबसे विश्वसनीय माने जाते हैं। बाकी महिलाएँ या तो फिर से चुप हो जाती हैं, या सिर्फ दर्द के रूप में सुनी जाती हैं।

इसलिए जीवनानुभव को केंद्र में रखना तभी सार्थक है, जब उसके साथ यह संवेदनशीलता और सतर्कता भी हो। यह मांग करता है कि फैसिलिटेटर कमरे को ध्यान से सुने, और सतह के पार जाकर समझे – साझा पीड़ा के आराम से आगे, और इस आसान दावे से आगे कि "सभी महिलाएँ एक जैसी होती हैं।"

रोहिणी सेन का नारीवादी लेखन इस समझ को और आगे बढ़ाता है। वह हमें याद दिलाती हैं कि लोग सीखने की जगहों में केवल "प्रतिभागी" बनकर नहीं आते; वे वैसे आते हैं जैसे दुनिया ने उन्हें बनाया है।

वे अपने साथ अपनी सामाजिक स्थिति लेकर आते हैं – जाति, वर्ग, धर्म, भाषा, क्षेत्र, उम्र – और अपने कार्यस्थल से सीखी हुई आदतें भी – कब बोलना है, कब चुप रहना है, कब सहमत होना है, कब अपनी सच्ची बात को भी नरम करना है।

यह सब असमान जोखिम से भी जुड़ा होता है। इसलिए सीख शुरू होने से पहले ही कमरा असमान जमीन पर खड़ा होता है।

सेन यह भी कहती हैं कि पढ़ाना केवल कंटेंट का हस्तांतरण नहीं है, बल्कि एक राजनीतिक और भावनात्मक अभ्यास है। सीख सिर्फ दिमाग में नहीं होतीय वह शरीर में भी होती है। यह इस बात में होती है कि क्या कहना सुरक्षित लगता है और क्या कहना जोखिम भरा।

कौन सहज होकर बोल सकता है, और कौन सतर्क रहता है। कौन सामान्य तरीके से बोलकर भी सम्मानित रहता है, और कौन हर वाक्य तौलता है क्योंकि उसे पता है कि उसकी गलती माफ नहीं होगी।

इसीलिए नारीवादी पद्धति को एक "भिन्नता की नैतिकता" की जरूरत होती है – अंतर को थामने की प्रतिबद्धता, उसे समतल करने से इनकार, और एकजुटता बनाते हुए भी असमानता को मिटा न देना।

क्योंकि जब अंतर को ईमानदारी से थामा जाता है, तभी कक्षा यह कठिन सवाल पूछने के लिए तैयार होती है – किन कहानियों को सार्वभौमिक सच माना गया है, और किन सच्चाइयों को ज्ञान से बाहर धकेल दिया गया है?

## प्रभुत्वशाली ज्ञान को चुनौती देना

नारीवादी पद्धति का मूल यह मानने से इनकार करता है कि ज्ञान निर्दोष होता है। हर ज्ञान की एक जगह होती है, एक लेखक होता है, और उसके लाभार्थी होते हैं। ज्ञान उत्पीड़न को बनाए भी रख सकता है और उसे तोड़ भी सकता है। इसलिए नारीवादी पद्धति पूछती है: किसकी कहानियाँ ज्ञान से गायब कर दी गई हैं? किन जिंदगियों को "गंभीर" नहीं माना गया? किन अनुभवों को डेटा तो बनाया गया, लेकिन सिद्धांत नहीं?

भारत के संदर्भ में, जहाँ जाति लंबे समय से यह तय करती रही है कि किसका ज्ञान वैध माना जाएगा, यह सवाल और तीखा हो जाता है। यह सिर्फ इस बारे में नहीं है कि कक्षा में कौन आता है, बल्कि इस बारे में भी है कि किसका ज्ञान सीख का केंद्र बनता है।

शर्मिला रेगे ने जोर देकर कहा कि कक्षा को ऐसा स्थान बनना चाहिए जहाँ प्रभुत्वशाली ज्ञान को दलित महिलाओं के अनुभवों और दृष्टिकोणों के माध्यम से चुनौती दी जाए। यह उन्हें "उदाहरण" बनाकर जोड़ने की बात नहीं है, बल्कि मुख्यधारा को ही प्रश्न करने की बात है – वह क्या छिपाती है, क्या सामान्य मानती है, और क्या देखने से इंकार करती है।

बदलाव की ताकत, नेतृत्व का हौसला

## "मेरिट" की धारणा को चुनौती देना

जाति अक्सर "मेरिट" के पीछे छिप जाती है। वह खुद को बुद्धिमत्ता, पेशेवर क्षमता और योग्यता के रूप में प्रस्तुत करती है। विशेषाधिकार को "प्राकृतिक प्रतिभा" बना देती है और विरासत में मिले अवसरों को "मेहनत" का रूप दे देती है।

कई सीखने की जगहों में यह तर्क चुपचाप काम करता है – जो अंग्रेजी में बोलते हैं, उन्हें ज़्यादा बुद्धिमान माना जाता है। जिनके पास डिग्रियाँ हैं, उन्हें नेता माना जाता है। जो आत्मविश्वास से बोलते हैं, उन्हें सक्षम माना जाता है। जो हिचकिचाते हैं, उन्हें अक्षम समझा जाता है।

लेकिन ये संकेतक तटस्थ नहीं हैं। ये पीढ़ियों से चली आ रही असमान पहुँच का परिणाम हैं – शिक्षा, भाषा, नेटवर्क, और उस अनुभव का, जिसमें किसी को बार–बार योग्य माना गया हो।

इसलिए "मेरिट" अक्सर जाति से जुड़ी भाषा बन जाती है।

यह पूछना जरूरी है: कौन बिना डर के आत्मविश्वास से बोल सकता है? किसे बिना दंड के बोलने की सुरक्षा मिली है? किसे बचपन से ही जगह लेने की ट्रेनिंग मिली है?

यह समझना जरूरी है कि आत्मविश्वास और चुप्पी का फर्क सिर्फ व्यक्तित्व का नहीं होता; यह इतिहास और सत्ता का परिणाम होता है। अब इस पर थोड़ा और ठहरकर सोचें। पिछले अध्याय में सत्ता को नारीवादी नेतृत्व निर्माण का एक मूल तत्व बताया गया था। चिंगारी में सत्ता पर बातचीत किसी एक सत्र तक सीमित नहीं रही; वह पूरे कार्यक्रम में बुनी हुई थी। और जैसे–जैसे यह बुनाई खुलती गई, यह स्पष्ट होता गया कि कार्यक्रम का कंटेंट भी उतना ही पद्धति का सवाल है जितना कि फैसिलिटेशन, डिलीवरी और स्पेस बनाना।

जब कोई नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम सत्ता की दृष्टि से नेतृत्व को समझने की कोशिश करता है, और वह उन महिलाओं के साथ काम करता है जो अपने भीतर सत्ता और असहायता के जटिल इतिहास लेकर आती हैं, तो पद्धति पूरे कार्यक्रम का योग बन जाती है।

यहाँ तक कि जिसे हम पद्धति नहीं कहते, वह भी पद्धति ही होता है – कंटेंट का चयन, सत्रों की रणनीति, होमवर्क, संसाधन व्यक्ति, फैसिलिटेशन टीम की संरचना – हर चीज सीख को आकार देती है। पद्धति कार्यक्रम की शुरुआत से पहले ही काम करने लगती है, जब वह यह कल्पना करने लगती है कि सीख क्या मानी जाएगी, कैसे आगे बढ़ेगी, किसे शामिल करेगी और किस आधार पर खड़ी होगी।

इस अर्थ में, पद्धति एक जीवंत शक्ति है।

और नारीवादी पद्धति का केंद्र सिर्फ यह नहीं है कि वह क्या सिखाती है, बल्कि यह भी है कि वह क्या दोहराने से इंकार करती है। वह इस विचार को अस्वीकार करती है कि ज्ञान तटस्थ है। वह सत्ता को नाम न देने की सुविधा को अस्वीकार करती है। वह उस दर्जाबंदी को अस्वीकार करती है जिसमें कुछ आवाजों को "बुद्धिमान" और बाकी को "भावनात्मक" कहा जाता है। वह इस धारणा को अस्वीकार करती है कि सीख को "गंभीर" बनाने के लिए भावनाओं को बाहर करना होगा।

नारीवादी पद्धति समझती है कि महिलाओं के लिए – खासकर दलित, आदिवासी, अल्पसंख्यक और कामकाजी वर्ग की महिलाओं के लिए – भावनाएँ अक्सर वह पहला स्थान होती हैं जहाँ अन्याय दिखने लगता है। गुस्सा, दुख, असहजता, शर्म, उलझन – ये बाधाएँ नहीं हैं; ये संकेत हैं। ये इस बात के प्रमाण हैं कि सत्ता जीवन को कहाँ छू रही है।

चिंगारी में यह दृष्टि केवल सिद्धांत नहीं रही; इसने सीखने की जगह को बनाने और थामने के तरीके को आकार दिया। शुरू से यह स्पष्ट था कि जाति और वर्ग केवल इसलिए गायब नहीं हो जाएंगे क्योंकि कार्यक्रम खुद को नारीवादी कहता है। वे भाषा, आत्मविश्वास, संगठनात्मक पद, शिक्षा, भूगोल और यहाँ तक कि समय लेने के अधिकार के माध्यम से कमरे में आते हैं।

कुछ फेलो सहजता से बोलती थीं, अंग्रेजी शब्दावली और मीटिंग–रूम के आत्मविश्वास के साथ। कुछ ऐसी थीं जिन्हें बार–बार काटा गया था, जिन्हें सहयोगी स्टाफ की तरह देखा गया था, योगदानकर्ता की तरह नहीं। कुछ को अपनी बात सुनी जाने की आदत थी। कुछ को हर बार साबित करना पड़ता था कि वे सुने जाने के लायक हैं। और कुछ ऐसी भी थीं, जिन्होंने शायद बोलना छोड़ दिया था – क्योंकि उन्हें कभी सुना ही नहीं गया था।

इसलिए पद्धति को प्रभुत्वशाली ज्ञान को तोड़ना था। यह टूटन बड़े नाटकीय तरीकों से नहीं, बल्कि छोटे लेकिन निर्णायक तरीकों से आई। पुष्टि जितनी जरूरी है, उतनी ही जरूरी है व्यवधान। मार्जिनलाइजेशन के एक सत्र में यह साफ दिखा।

ऑनलाइन माध्यम से जूझते हुए फैसिलिटेशन टीम थकी हुई और निराश महसूस कर रही थी। आवासीय वर्कशॉप की ऊर्जा अब कम हो रही थी, और यह स्पष्ट हो रहा था कि ऑनलाइन सत्र, चाहे जितने भी अच्छे हों, साथ बैठने के अनुभव को पूरी तरह नहीं दोहरा सकते। फिर भी कार्यक्रम को आगे बढ़ाना था। तीसरा सत्र जेंडर, हाशियाकरण और इंटरसेक्शनलिटी जैसे गहन विषयों पर केंद्रित था।

सत्र का पहला हिस्सा वैसा असर नहीं डाल पाया जैसा हमने सोचा था। लेकिन दूसरे हिस्से में हमने निरंतर ट्रस्ट के एक कॉमिक का नाटकीय पाठ किया, जिसमें फल और सब्जियों के पात्रों के जरिए हाशियाकरण की कहानी कही गई थी। और यहीं कुछ बदला। जो फेलो अब तक चुप थीं, वे बोलने लगीं। उन्होंने खुद को उन पात्रों में देखा, उन्हें नाम दिया, और अपने अनुभवों को भी नाम दिया।

उस क्षण ने हमें यह सिखाया कि पद्धति केवल "क्या काम किया" या "क्या नहीं" का सवाल नहीं है। यह उन तरीकों को खोजने का काम है जिनसे व्यवधान पैदा हो सके – और उस श्रम को करने का जो इसके लिए जरूरी है। कभी योजना पर टिके रहना पड़ता है, कभी उसे छोड़ देना पड़ता है। कभी सबसे सधे हुए सत्र असर नहीं करते, और कभी एक साधारण–सा हस्तक्षेप अप्रत्याशित संभावनाएँ खोल देता है।

नारीवादी पद्धति व्यवधान की मांग करती है, लेकिन साथ ही समय, स्थान और निरंतर श्रम की भी। यह कोई जादुई प्रक्रिया नहीं है। यह तब उभरती है जब वे लोग, जो लंबे समय से चुप कराए गए हैं, एक ऐसा क्षण पाते हैं जहाँ वे अपने अनुभव को नाम दे सकें।

और यह अक्सर समय लेता है – कभी–कभी एक पूरी जिंदगी।

यह भी सच है कि हम हर बार सफल नहीं हुए। कुछ सत्रों में योजना हावी हो गई, कुछ दिनों में समय कम था और लक्ष्य ज़्यादा। कुछ क्षणों में कुछ महिलाएँ आसानी से जगह ले पाईं, जबकि कुछ किनारे पर रह गईं। नारीवादी पद्धति घोषणा से नहीं बनतीय वह अभ्यास और आत्म–आलोचना से बनती है। कार्यक्रम समयसीमाओं, संसाधनों और संस्थागत अपेक्षाओं के भीतर काम कर रहा था, और कई बार ये सीमाएँ भारी पड़ीं।

ब्राह्मणवाद जैसी प्रभुत्वशाली संरचनाओं को चुनौती देना एक बार का काम नहीं है। यह लगातार चलने वाला, मेहनत भरा संघर्ष है, जिसमें बार–बार फैसिलिटेशन को नए सिरे से सोचना पड़ता है – यह देखना पड़ता है कि कौन हावी हो रहा है, किसकी आवाज केंद्र में आ रही है, और सत्ता कैसे नए रूप में लौट रही है।

चिंगारी ने इन विरोधाभासों को पूरी तरह हल नहीं किया, लेकिन उन्हें दिखाने की कोशिश की। क्योंकि एक बार जब पितृसत्ता, ब्राह्मणवाद, धार्मिक भेदभाव या ऐबेलिस्म जैसे ढाँचे सीखने की जगह में नाम ले लिए जाते हैं, तो उन्हें फिर अनदेखा करना संभव नहीं रहता।

शायद यही नारीवादी पद्धति की सबसे सच्ची बात है – यह पूर्ण नहीं होती। यह सीखती है, चूकती है, सुधारती है और फिर भी दोबारा कोशिश करती है।

## ज्ञान के दायरे का विस्तार

"अपनी धार को चाकू जैसी बनाए रखना है,
तो पढ़ते रहना पड़ेगा।"
क्रांति खोड़े

क्रांति ने यह बात हमें कॉफी विद चिंगारी सत्र में कही थी, और वह भी किसी भारी–भरकम सिद्धांत की भाषा में नहीं, बल्कि रोजमर्रा की जिंदगी की सीधी, सादी बोली में। वह एक दलित महिला हैं और जमीन से जुड़े स्तर पर स्वास्थ्य कार्यकर्ता के रूप में जन साहस नामक संगठन के साथ काम करती हैं। उनकी यह पंक्ति सुनने में भले सरल लगे, लेकिन उसके भीतर एक बहुत स्पष्ट राजनीति छिपी हुई थी। क्योंकि क्रांति पढ़ने की बात किसी शौक या फुर्सत की चीज के रूप में नहीं कर रही थीं; वह उसे एक तरह की तैयारी, एक तरह की रक्षा के रूप में रख रही थीं।

### "ज्ञान" पर जाति का नियंत्रण है, ठीक वैसे ही जैसे "जमीन" पर है!

भारत में "ज्ञान" कभी भी सबके लिए बराबर संसाधन नहीं रहा। उसे हमेशा संपत्ति की तरह नियंत्रित किया गया है, ठीक वैसे ही जैसे जमीन, सार्वजनिक जगहें और चलने–फिरने की आजादी नियंत्रित की जाती है। जाति और पितृसत्ता ने केवल काम और सम्मान का बंटवारा नहीं किया है, उन्होंने यह भी तय किया है कि किसे जानने का अधिकार होगा और किसे केवल अनुभव करने के लिए छोड़ दिया जाएगा, बिना उसे विचारक के रूप में मान्यता दिए।

ह्यूमन राइट्स वॉच की रिपोर्ट They Say We're Dirty (2014) यह दिखाती है कि स्कूलों के भीतर जातिगत भेदभाव कैसे काम करता है। यह रिपोर्ट इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह भेदभाव को कुछ बुरे शिक्षकों या इक्का–दुक्का घटनाओं तक सीमित नहीं करती, बल्कि उसे एक संरचनात्मक समस्या के रूप में सामने लाती है। यह हमें बताती है कि जाति तय करती है कि कौन सम्मान के साथ सीख सकता है और किसे अपमान सहते हुए "शिक्षा कमानी" पड़ती है। हाल के वर्षों में UDISE+ के आँकड़े बताते हैं कि औसतन ड्रॉपआउट दर में कुछ सुधार हुआ है – 2024–25 में यह प्रारंभिक स्तर पर 2.3%, मध्य स्तर पर 3.5% और माध्यमिक स्तर पर 8.2% रही। लेकिन औसत आँकड़े यह नहीं बताते कि बच्चे गरिमा के साथ सीख रहे हैं या अपमान के साथ। रिपोर्ट यह भी दिखाती है कि किस तरह एक ही स्कूल में बच्चों को जाति के आधार पर अलग–अलग ढंग से रखा जाता है, जैसे उत्तर प्रदेश के सोनभद्र जिले के एक स्कूल में आदिवासी बच्चों को उम्र की परवाह किए बिना एक ही कक्षा में डाल दिया गया, जबकि अन्य बच्चों को उनकी उम्र के हिसाब से पढ़ाया गया। यानी भेदभाव केवल व्यवहार में नहीं, व्यवस्था की बनावट में ही दर्ज है।

यह नियंत्रण केवल स्कूल या विश्वविद्यालय तक सीमित नहीं रहता, बल्कि वहाँ भी दिखाई देता है जहाँ लोग ज्ञान की दुनिया में प्रवेश कर लेते हैं। हैदराबाद विश्वविद्यालय में रोहित वेमुला की मृत्यु ने यह उजागर किया कि ज्ञान के ये स्थान दलित छात्रों के लिए कितने शत्रुतापूर्ण हो सकते हैं, जहाँ अपमान, अकेलापन और संस्थागत शक्ति

मिलकर किसी को किनारे तक धकेल सकती है। यह नियंत्रण इस बात में भी दिखता है कि व्यवस्था क्या मापती है और क्या नहीं। संसद में यह कहा गया कि एनसीआरबी अनुसूचित जाति और जनजाति के छात्रों की आत्महत्याओं के पीछे "सामाजिक भेदभाव" का अलग से डेटा नहीं रखता। जब किसी अन्याय को आधिकारिक रूप से गिना ही नहीं जाता, तो उसे व्यक्तिगत त्रासदी मान लेना आसान हो जाता है, न कि एक संरचनात्मक संकट।

पितृसत्ता भी ज्ञान को कई तरीकों से नियंत्रित करती है – शरीर के माध्यम से, सुरक्षा के सवालों के माध्यम से, समय और विवाह के जरिए, और इस धारणा के जरिए कि लड़कियों की शिक्षा हमेशा शर्तों के साथ आती है। यह नियंत्रण बहुत शुरुआती उम्र से शुरू हो जाता है। नेशनल फैमिली हेल्थ सर्वे के अनुसार 20–24 वर्ष की 23.3% महिलाओं की शादी 18 साल से पहले हो जाती है। यह केवल विवाह का आँकड़ा नहीं है; यह सीखने के रुक जाने का आँकड़ा है। जल्दी शादी लड़कियों की गतिशीलता सीमित कर देती है, उन्हें घरेलू श्रम में खींच लेती है और भविष्य की संभावनाओं को संकुचित कर देती है। और यहाँ भी पितृसत्ता यह तय करती है कि शिक्षा को स्वायत्तता में बदला जा सकेगा या नहीं।

इसीलिए ज्ञान के दायरे को विस्तृत करना अपने आप में एक नारीवादी कर्म बन जाता है। क्योंकि जब अलग–अलग पृष्ठभूमियों से आई महिलाएँ एक साथ बैठकर नए विचार सीखती हैं, तो वे केवल सीख नहीं रही होतीं, वे उन सीमाओं को पार कर रही होती हैं जिन्हें उनके लिए बंद रखा गया था। वे उस जगह में प्रवेश कर रही होती हैं जिसे समाज ने कुछ लोगों के लिए सुरक्षित रखा और दूसरों से दूर रखा।

उस क्षण क्रांति की बात ने "ज्ञान" को एक अमूर्त शब्द से निकालकर एक धारदार औजार में बदल दिया। वह कुछ ऐसा बन गया जिसे आप अपने पास संभालकर रखते हैं, क्योंकि आप जानते हैं कि दुनिया इस तरह बनाई गई है कि आपको नीचे खींच सके। यह दुनिया महिलाओं को इतना व्यस्त और थका हुआ रखती है कि वे जीवित रहने से आगे सोच ही न सकें। उन्हें लगातार आग बुझाने में उलझाए रखती है ताकि वे यह न देख सकें कि आग लगी कहाँ से है। क्रांति का आशय था – ज्ञान हासिल करना ताकि जीए हुए अनुभव को नाम दिया जा सके; "मैनेज" किए जाने और "मैनेजमेंट" को समझ पाने के बीच का फर्क पहचाना जा सके। जैसे बार–बार यह सुनना कि "ऐसा ही होता है" और उसका जवाब दे पाना कि "ऐसा बनाया गया है।" इसका अर्थ है यह पहचानना कि घर, कार्यस्थल या कहीं भी जो अन्याय या अधिकारों की कमी है, वह किसी प्राकृतिक नियति का परिणाम नहीं, बल्कि उन संरचनाओं का हिस्सा है जिन्हें पहचाना, चुनौती दी और बदला जा सकता है।

क्रांति की यह पंक्ति हमें नारीवादी पद्धति की एक बुनियादी प्रतिबद्धता तक ले जाती है – ज्ञान के आधार का विस्तार। केवल आत्मविश्वास से जो संभव नहीं है, वह ज्ञान कर सकता है। यह दृष्टि को पैना बनाता है, उस अनुभव को भाषा देता है जिसे अब तक केवल जिया गया था, समझा नहीं गया था। नारीवादी पद्धति में अनुभव शुरुआत का बिंदु है, लेकिन सीखने की प्रक्रिया वहीं रुक नहीं सकती। केवल अनुभव के भीतर रह जाने से महिलाएँ अपनी–अपनी कहानियों में अकेली पड़ सकती हैं – हर कहानी सच्ची और भारी, लेकिन बिना किसी साझा नक्शे के कि ये पैटर्न बार–बार क्यों दोहराए जाते हैं। यही वह जगह है जहाँ उत्पीड़न टिकता है – अलगाव में, इस विश्वास में कि "मेरी समस्या सिर्फ मेरी है।"

ज्ञान इस अलगाव को तोड़ता है। यह एक अनुभव को दूसरे से जोड़ता है और उसके भीतर छिपे पैटर्न को सामने लाता है – दोहराव, बनावट, संरचना। तब जो कभी निजी लगता था, वह सार्वजनिक अर्थ लेने लगता है। जो कभी व्यक्तिगत शर्म जैसा महसूस होता था, वह साझा सच्चाई में बदलने लगता है। मन वह पहचानने लगता है जो शरीर हमेशा से जानता था – यह पहले भी हुआ है, और दूसरों के साथ भी हुआ है। और इसी पहचान के साथ कुछ बदलता है। समस्या व्यक्ति से हटकर उस व्यवस्था में लौट जाती है जहाँ वह असल में पैदा हुई थी।

इस तरह ज्ञान नारीवादी पद्धति में एक जिम्मेदारी बन जाता है। इसलिए नहीं कि महिलाओं को अधिक "अकादमिक" बनना है, बल्कि इसलिए कि ज्ञान उन्हें उन भावनाओं और अनुभवों के लिए शब्द और अवधारणाएँ देता है जिन्हें वे अब तक व्यक्त नहीं कर पाई थीं। यह उन्हें बताता है कि उनका गुस्सा, उनकी थकान, उनका इंकार – ये सब अकेले नहीं हैं। यह उन्हें एक लंबी परंपरा से जोड़ता है, उन स्त्रियों की परंपरा से जिन्होंने हमेशा गरिमा के लिए संघर्ष किया, भले ही उनके नाम इतिहास में दर्ज न हुए हों। इसलिए ज्ञान का विस्तार नारीवादी पद्धति का कोई अलग हिस्सा नहीं, बल्कि उसकी सबसे गहरी अभिव्यक्तियों में से एक है – जहाँ बोलने के साथ–साथ सोचने की जगह भी बनती है, और उस सोच की धार को जीवित रखने की जिम्मेदारी भी।

## इतिहास महिलाओं को वंश देता है

चिंगारी की शिक्षण प्रक्रिया में इतिहास को शामिल करना बेहद महत्वपूर्ण था। काम, कार्यस्थल और श्रमिक अधिकारों पर सत्र के दौरान महिलाओं के श्रम अधिकारों के इतिहास को सामने लाना इसलिए जरूरी था क्योंकि उत्पीड़न अक्सर असमानता को सामान्य बनाकर जीवित रहता है। वह महिलाओं को सिखाता है कि कम वेतन "हकीकत" है, अत्यधिक काम "जिम्मेदारी" है, थकान "व्यक्तिगत कमजोरी" है, उत्पीड़न "बदकिस्मती" है और चुप रहना "पेशेवर रवैया" है। धीरे–धीरे अन्याय क्रूरता नहीं, दिनचर्या बन जाता है, और फिर स्थायी सा लगने लगता है।

महिलाओं के श्रम को लंबे समय तक "स्वाभाविक कर्तव्य" कहकर देखा गया है – देखभाल, सफाई, खाना बनाना, सहारा देना। जब श्रम को प्राकृतिक बना दिया जाता है, तो शोषण अदृश्य हो जाता है। जब किसी महिला के काम को प्रेम, त्याग या उसके चरित्र का हिस्सा कह दिया जाता है, तो उसके लिए उसे श्रम के रूप में पहचानना और उससे अधिकार माँगना और भी कठिन हो जाता है।

इसी तरह, महिलाओं का काम अक्सर खुली आँखों के सामने छिपा रहता है। एक सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता घर–घर जाकर सलाह देती है, टीकाकरण का ध्यान रखती है, रजिस्टर भरती है, डेटा रिपोर्ट करती है – बाहर से यह सब "सेवा" या "मदद" जैसा दिखता है। जिसे समाज और व्यवस्था "स्वयंसेवा" कहती है, वह अंतहीन रूप से फैल सकती है, लेकिन वास्तव में यह कुशल श्रम है जो पूरी स्वास्थ्य व्यवस्था को चलाए रखता है।

यहीं इतिहास हस्तक्षेप करता है। इतिहास यह बदलता है कि एक कमरे में बैठे लोग "सामान्य" को कैसे समझते हैं। वह बार–बार यह स्थापित करता है कि महिलाओं का काम हमेशा से मौजूद रहा है, भले ही उसे काम के रूप में सम्मान न मिला हो। वह इस झूठ को तोड़ता है कि "हमेशा से ऐसा ही था।" वह दिखाता है कि अधिकारों का भी एक इतिहास होता है और शोषण कोई आकस्मिक घटना नहीं, बल्कि एक बनाई गई और बनाए रखी गई व्यवस्था है।

जब नारीवादी पद्धति इतिहास को सीखने के दायरे में लाता है, तो वह महिलाओं को एक बड़ा परिप्रेक्ष्य देता है। वे समझने लगती हैं कि उनके अनुभव अलग–थलग घटनाएँ नहीं हैं, बल्कि ऐसे पैटर्न का हिस्सा हैं जो पीढ़ियों से दोहराए जा रहे हैं। और यह बदलाव इसलिए नारीवादी है क्योंकि पितृसत्ता चाहती है कि महिलाएँ अपने दुःख में अकेली रहें।

उदाहरण के लिए, मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 यह बताता है कि प्रजनन केवल "महिला की निजी जिम्मेदारी" नहीं है, बल्कि एक सामाजिक वास्तविकता है जिसकी जिम्मेदारी कार्यस्थलों को भी उठानी होगी। समान वेतन अधिनियम, 1976 यह साबित करता है कि वेतन असमानता कोई गलतफहमी नहीं, बल्कि एक संरचना थी जिसे बदलने के लिए कानूनी दबाव की आवश्यकता पड़ी। कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न से संरक्षण का कानून, 2013 यह दर्शाता है कि सुरक्षा और गरिमा अपने आप नहीं मिलती, बल्कि लंबे संघर्ष, आंदोलन और दबाव से हासिल होती है।

इतिहास यह भी याद दिलाता है कि महिलाएँ केवल पीड़ित नहीं रही हैं; वे संगठित होने वाली, लड़ने वाली भी रही हैं। जैसे स्व–नियोजित महिला संघ (SEWA) की महिलाएँ – रेहड़ी–पटरी विक्रेता, घर–आधारित कामगार, कपड़ा श्रमिक – जिन्होंने यह मानने से इंकार कर दिया कि केवल फैक्ट्री में काम करने वाले ही "असली मजदूर" हैं। उन्होंने अपने संगठन बनाए, अपनी पहचान तय की और श्रम की परिभाषा को ही विस्तृत कर दिया।

कई संस्थानों में महिलाओं की कहानियों को केवल "किस्से" मान लिया जाता है – दिल को छू लेने वाले, पर गंभीर नहीं। उनके दर्द को "भावना" कहा जाता है – सच, पर प्रमाण नहीं। वहीं दूसरी ओर, सत्ता हमेशा संख्याओं, बजट, रिपोर्ट और लक्ष्यों के रूप में सामने आती है। यह ब्राह्मणवाद, पितृसत्ता और प्रभुत्वशाली विचारधाराओं की एक चतुर चाल है कि वे अनुभव को व्यक्तिगत कहकर खारिज कर देती हैं, जबकि सत्ता आँकड़ों के माध्यम से चलती रहती है।

नारीवादी पद्धति को इस असंतुलन को चुनौती देनी होगी। उसे यह स्थापित करना होगा कि आँकड़े भी महिलाओं के हैं, प्रमाण भी उनके जीवन से बन सकते हैं – केवल उनके बारे में नहीं। भारतीय नारीवादी अर्थशास्त्री देवकी जैन ने इसे बहुत स्पष्ट शब्दों में कहा है कि महिलाओं के आर्थिक योगदान को मापने में विफलता उन्हें "आर्थिक लेन–देन में लगभग अदृश्य" बना देती है। सरल शब्दों में कहें तो – जब आप महिलाओं के काम को गिनते हैं, तभी आप उन्हें दृश्य बनाते हैं। और जब अनुभव प्रमाण में बदलता है, तो वह तर्क बन जाता है – ऐसा तर्क जिसे संस्थाएँ आसानी से नजरअंदाज नहीं कर सकतीं।

## चिंगारी ने डेटा को क्यों चुना?

### असमानता की कहानियाँ डेटा के जरिए बताना

नई चीजें सीखना सिर्फ नए विषय जोड़ना नहीं है, बल्कि देखने का नजरिया बदलना भी है। डेटा महिलाओं को अपनी कहानी एक नए तरीके से कहने का मौका देता है – ऐसी कहानी जो नीतियों, संस्थाओं की बैठकों और सार्वजनिक मंचों पर भी असर डालती है। इससे महिलाएँ सिर्फ अपने अनुभव या दर्द से ही नहीं, बल्कि पैटर्न और प्रमाण के साथ भी बात कर पाती हैं। और कहानी कुछ अलग–अलग घटनाओं से आगे बढ़कर एक बड़ी, सामूहिक सच्चाई बन जाती है। यही नारीवादी शिक्षण का हिस्सा है।

इसका एक अच्छा उदाहरण है महिलाओं के नेतृत्व के रास्ते में आने वाली रुकावटों और सहायक तत्वों को अलग–अलग स्तरों पर समझना, जैसे व्यक्तिगत, आपसी, संगठनात्मक और संरचनात्मक स्तर, और उन्हें आँकड़ों में दिखाना। इससे एक बड़ा विरोधाभास सामने आता है: वैश्विक स्वास्थ्य क्षेत्र में 70% काम महिलाएँ करती हैं, लेकिन नेतृत्व की सिर्फ 25% पदों पर ही महिलाएँ हैं। यह महिलाओं की "महत्वाकांक्षा की कमी" का मामला नहीं है, बल्कि ताकत और मौके में एक साफ अंतर है।

अपनी
ताकत
को
पहचानो
और
आगे
बढ़ते
रहो

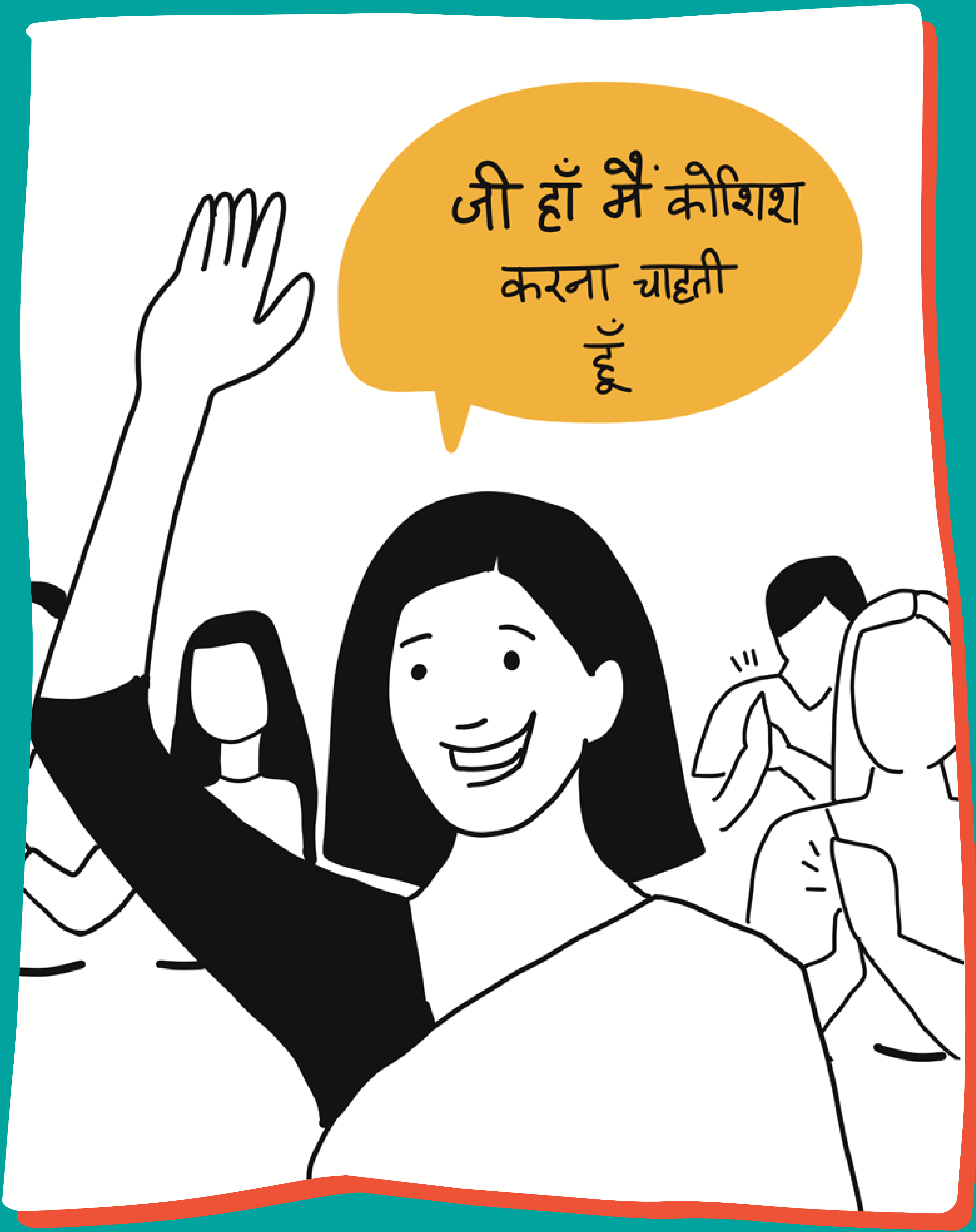
जी हाँ मैं कोशिश करना चाहती हूँ

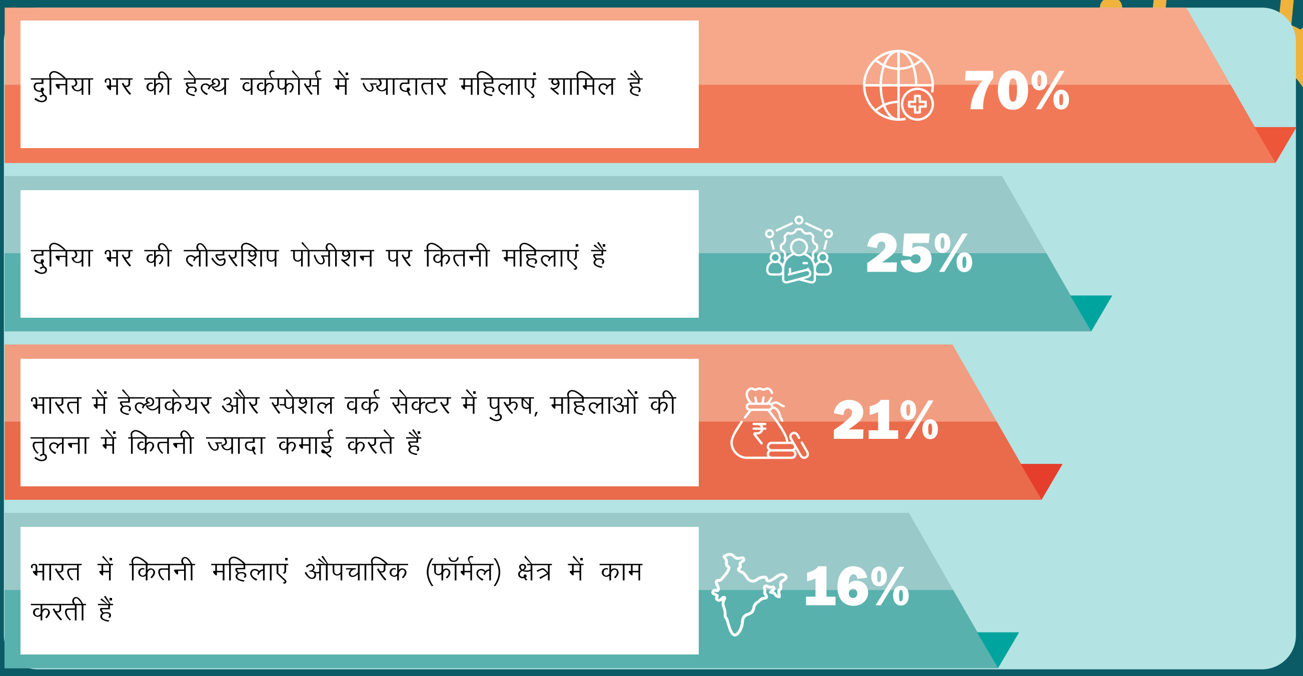

| | |
|---|---|
| दुनिया भर की हेल्थ वर्कफोर्स में ज्यादातर महिलाएं शामिल है | 70% |
| दुनिया भर की लीडरशिप पोजीशन पर कितनी महिलाएं हैं | 25% |
| भारत में हेल्थकेयर और स्पेशल वर्क सेक्टर में पुरुष, महिलाओं की तुलना में कितनी ज्यादा कमाई करते हैं | 21% |
| भारत में कितनी महिलाएं औपचारिक (फॉर्मल) क्षेत्र में काम करती हैं | 16% |

**स्रोत:** WHO, LANCET, BMJ Review, Periodic Labour Force Survey, INDIA, Reuters Poll

डेटा "समय" की राजनीति को भी सामने लाता है। आँकड़े बताते हैं कि भारत में पुरुष रोज लगभग 40 मिनट बिना वेतन वाले घरेलू काम में लगाते हैं, जबकि महिलाएँ 335 मिनट देती हैं। यह फर्क दिखाता है कि नेतृत्व सिर्फ क्षमता का नहीं, बल्कि समय होने का भी सवाल है।

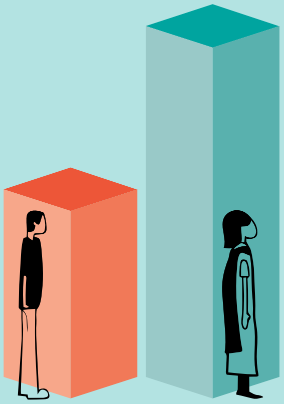

335 मिनट

भारतीय महिलाएं रोजाना बिना वेतन वाले घरेलु काम में कितना समय बिताती हैं

30 मिनट

भारतीय पुरुष रोजाना बिना वेतन वाले घरेलु काम में कितना समय बिताते हैं

**स्रोत:** National Time Use Survey

यह भी सामने आता है कि जेंडर असमानता आर्थिक है। भारत में स्वास्थ्य और सामाजिक कार्य क्षेत्र में पुरुष, महिलाओं से लगभग 21% ज्यादा कमाते हैं। और औपचारिक काम तक पहुँच भी सीमित है – भारत में सिर्फ 16% महिलाएँ औपचारिक क्षेत्र में काम करती हैं। इससे साफ है कि बहुत कम महिलाएँ उन जगहों तक पहुँच पाती हैं जहाँ नेतृत्व के मौके बनते हैं।

इस तरह डेटा एक नारीवादी औजार बन जाता है। यह महिलाओं की सच्चाइयों को मिनटों, प्रतिशतों, अंतर और विरोधाभासों में बदल देता है, जिन्हें नजरअंदाज करना आसान नहीं होता। यह बहस की दिशा बदल देता है। यह ताकत से बातचीत करने का एक तरीका बनता है, क्योंकि अक्सर ताकत आवाजों से ज्यादा आँकड़ों को मानती है।

चिंगारी की नारीवादी शिक्षण की यह एक अहम प्रतिबद्धता है: महिलाएँ प्रमाण की भाषा सीखती हैं, बिना अपनी जीती–जागती सच्चाइयों की भाषा छोड़े। वे कमरे में जगह मांगना बंद करती हैं। वे अपनी बात ऐसे ढंग से रखती हैं जो साफ, समझने योग्य और नजरअंदाज न की जा सके।

# ”आवाज से डेटा, डेटा से बदलाव“

महिलाओं की आवाज अपने आप में ज्ञान रखती है। लेकिन जब तक इसे प्रमाण के रूप में नहीं रखा जाता, संस्थाएँ अक्सर इन आवाजों को नजरअंदाज कर देती हैं। इसलिए नारीवादी शिक्षण में डेटा जरूरी है। यह महिलाओं को अपनी सच्चाई को उन जगहों तक ले जाने में मदद करता है जहाँ सबूत की मांग होती है। यह सोच एक सरल बात से शुरू होती है: जो लोग संघर्ष जीते हैं, वही उसके बारे में ज्ञान भी बना सकते हैं। ”जिसकी लड़ाई, उसकी अगुवाई।“

इसीलिए यह जरूरी है कि महिलाएँ खुद प्रमाण बनाने वाली बनें। इसका मतलब है ऐसे तरीके सीखना, जिनसे अनुभव को साफ और दिखने वाले पैटर्न में बदला जा सके। चिंगारी के सत्र ”आवाज से डेटा, डेटा से बदलाव“ में इसी सोच के साथ कुछ आसान औजारों का इस्तेमाल किया गया।

## डेली एक्टिविटी क्लॉक

यह एक आसान तरीका है समझने का कि एक महिला का पूरा दिन कैसे बीतता है। महिलाएँ अपने दिन का एक घड़ी या समयरेखा बनाती हैं और उसमें हर काम को चिन्हित करती हैं, जैसे खाना बनाना, बच्चों की देखभाल, फील्ड का काम, दफ्तर का काम, यात्रा और आराम। इससे वह काम सामने आता है जो अक्सर दिखता नहीं है। यह थकान को भी ऐसे रूप में दिखाता है जिसे नकारना मुश्किल हो जाता है। जैसे कितना समय बिना वेतन वाले देखभाल के काम में जाता है, और आराम, सीखने या नेतृत्व के लिए कितना कम समय बचता है।

## बॉडी मैपिंग

इस अभ्यास में महिलाएँ शरीर की एक आकृति बनाती हैं और यह दिखाती हैं कि काम का असर शरीर के किस हिस्से में महसूस होता है। इससे वह सच सामने आता है जिसे कार्यस्थल अक्सर छिपा देता है। काम शरीर पर कैसे असर डालता है, जैसे दर्द, थकान, तनाव, खुशी या उत्साह, खासकर देखभाल और फील्ड के काम में। यह काम की स्थितियों को स्वास्थ्य से जोड़ता है और दिखाता है कि काम शरीर और मन दोनों पर असर छोड़ता है, भले ही कार्यस्थल इसे न माने।

## एक्सेस और कंट्रोल मैट्रिक्स

महिलाएँ संसाधनों की सूची बनाती हैं, जैसे पैसा, फोन, परिवहन, प्रशिक्षण, जमीन, समय और जानकारी। फिर यह समझती हैं कि इनका इस्तेमाल कौन कर सकता है और इनके बारे में फैसला कौन लेता है। इससे पता चलता है कि महिलाओं के पास संसाधन तो हो सकते हैं, लेकिन उन पर उनका नियंत्रण नहीं होता। यह सत्ता के छिपे हुए ढांचे को सामने लाता है।

## ट्रांसेक्ट वॉक

यह समुदाय के अंदर एक साथ चलकर देखने का तरीका है, जिससे यह समझा जा सके कि लोगों की जिंदगी को क्या प्रभावित करता है, जैसे सड़कें, पानी के स्रोत, स्वास्थ्य केंद्र, शौचालय, बाजार, सुरक्षा के जोखिम और परिवहन। प्रतिभागी देखते हैं और नोट करते हैं कि यह सब महिलाओं के लिए क्या मायने रखता है। इससे बिखरी हुई समस्याएँ साफ सबूत में बदल जाती हैं, जैसे दूरी, असुरक्षित रास्ते या परिवहन की कमी।

उदाहरण के लिए, अगर इस वॉक से पता चलता है कि महिलाएँ दूरी, परिवहन या असुरक्षित रास्तों के कारण प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र तक नहीं पहुँच पा रही हैं, तो यह समस्या महिलाओं के ”आगे न आने“ की नहीं रह जाती। यह एक संरचनात्मक कमी बन जाती है, जिसे ठीक करने की मांग की जा सकती है, जैसे बेहतर परिवहन, मोबाइल क्लिनिक, तय आउटरीच सेवाएँ या सुरक्षित रास्तों की योजना।

MY VOICE MATTERS

# नारीवादी पद्धति: देखभाल की एक अनंत प्रतिबद्धता

आइए, इस अध्याय की शुरुआत में जिस खामोशी की बात हुई थी, उस पर फिर लौटें – वह खामोशी जो ब्राह्मणवाद, पितृसत्ता और धार्मिक उत्पीड़न का बोझ अपने भीतर समेटे हुए होती है, वह खामोशी जो लगातार देखे जाने, सुधारे जाने और परखे जाने के अनुभव से बनी होती है। चिंगारी के सत्र दर सत्र काम करते हुए हमारे सामने एक सवाल बार–बार लौटकर आया, एक ऐसा सवाल जिसे हर शिक्षण प्रक्रिया को खुद से पूछना चाहिए – क्या वह खामोशी, जो लिंग, जाति, धर्म और आर्थिक असमानता की दमनकारी शक्तियों से गढ़ी गई है, उसे क्या सोच–विचार की एक ठहरी हुई, बिना जल्दबाजी वाली शांति में बदला जा सकता है? क्या वह ऐसी खामोशी बन सकती है जो जानबूझकर विश्लेषण और आत्मचिंतन को जन्म दे?

यह रूपांतरण केवल तकनीकों के सहारे संभव नहीं है, क्योंकि यह खामोशी किसी एक पल में नहीं बनी, बल्कि पूरे जीवन के अनुभवों और उनके परिणामों से आकार ली है। और जो खामोशी परिणामों के डर और हिसाब से बनी हो, उसे केवल एक सधे हुए सत्र, विस्तृत प्रेजेंटेशन, रोचक गतिविधियों, ब्रेकआउट रूम्स या उत्साह और प्रोत्साहन के सहारे नहीं बदला जा सकता। इन सबके साथ–साथ एक अलग तरह की समझ की जरूरत होती है, जो उन प्रस्तुतियों को तोड़ सके जिन्हें संचालक और प्रतिभागी दोनों ही अनजाने में इन जगहों पर लेकर आते हैं। उनकी जगह एक सच्ची उपस्थिति ला सके।

इसके लिए देखभाल की जरूरत होती है – ऐसी देखभाल जो मूल में ही बसी हो, जो सजग हो और लगातार बनी रहे। इसलिए नारीवादी पद्धति के केंद्र में देखभाल उसी तरह बैठती है जैसे एक कमरे में रखा दीपक – जो रोशनी बदल देता है, और उसके साथ खामोशी को देखने और समझने का तरीका भी। यह देखभाल केवल कोमलता का रूप नहीं है, बल्कि वह श्रम है जिसके सहारे एक ऐसा स्थान बनाया जाता है जहाँ महिलाएँ उन भूमिकाओं से बड़ी हो सकें जो उन्हें दी गई हैं – अच्छी लड़की, आज्ञाकारी कर्मचारी, कृतज्ञ लाभार्थी, या बिना खतरे वाली सहकर्मी। यह उस मेहनत का हिस्सा है जो एक ऐसे सीखने के वातावरण को गढ़ती है, जो यह पूछने का साहस रखता है कि शक्ति किसके पास है, उसकी कीमत कौन चुका रहा है, और किसे चुप रहने के लिए कहा जा रहा है ताकि यह व्यवस्था बनी रहे।

नारीवादी पद्धति को ऐसी देखभाल की पेशकश करनी होगी जो यह समझ सके कि व्यक्तिगत कभी केवल व्यक्तिगत नहीं होता, और जो महिलाओं को यह बता सके कि उनके जीवन में ज्ञान छिपा हुआ है। ऐसी देखभाल जो यह माने कि उनके अपमान का भी एक इतिहास है और उनकी खामोशी का भी एक कारण। ऐसी देखभाल जो इस पूरी शिक्षण प्रक्रिया में बुनी हुई हो, जो बार–बार यह दोहराए कि महिलाओं को अपने अनुभवों के लिए भाषा मिलनी चाहिए। उन्हें सुना जाना चाहिए, लेकिन इसके साथ–साथ उन्हें वह सिद्धांत और इतिहास भी मिलना चाहिए जो उनके अनुभवों को समझने का आधार बन सके। उन्हें यह जानने का अधिकार है कि उनके संघर्ष की एक परंपरा है और उनके नेतृत्व का भी एक राजनीतिक घर है।

चिंगारी ने इसी तरह का एक स्थान बनाने की कोशिश की। हमने ऐसी शिक्षण प्रक्रिया गढ़ने की कोशिश की जो यह बदल सके कि महिलाएँ अपने लिए क्या संभव मानती हैं, किस पर अपना अधिकार महसूस करती हैं। बेल हुक्स

ने अपनी किताब Teaching to Transgress: Education as the Practice of Freedom में लिखा है कि कई बार निजी अनुभव हमें उस ऊँचाई तक पहुँचने से रोकते हैं जहाँ हम पहुँचना चाहते हैं, और हम उन्हें छोड़ देते हैं क्योंकि उनका बोझ बहुत भारी होता है। और कभी–कभी वह ऊँचाई हमारे सारे साधनों के बावजूद दूर लगती है, तब हम एक साथ खड़े होकर उस कमी को महसूस करते हैं, उस तक पहुँचने की इच्छा को साझा करते हैं – और यह चाह, यह आकांक्षा भी अपने आप में जानने का एक तरीका बन जाती है। हम चाहते थे कि महिलाएँ केवल आत्मविश्वास ही नहीं, बल्कि यह आकांक्षा भी अपने साथ लेकर जाएँ – भाषा की, विश्लेषण की, इतिहास की, और उसमें अपने होने की एक गहरी अनुभूति की। हम चाहते थे कि वे यह जानें कि यह सब केवल उनके साथ नहीं हो रहा, यह पहले भी हुआ है, दूसरों ने इससे लड़ा है, इसे नाम दिया है, इससे गुजरे हैं – और उन्हें इसे अकेले नहीं ढोना है।

## कभी–कभी हम असफल भी हुए।

ऐसे दिन आए जब संचालक और प्रतिभागियों के बीच की दूरी फिर से सामने आ गई, जब हम बहुत जल्दी में आगे बढ़ गए, जब हमें लगा कि हम "समय का प्रबंधन" कर रहे हैं, लेकिन दरअसल हम उस दरवाजे को बंद कर रहे थे जो अभी–अभी खुलना शुरू हुआ था।

## और कुछ दिन ऐसे भी आए जब हम सफल हुए।

जब कमरा एक खिड़की की तरह खुल गया, जब महिलाएँ एक–दूसरे के सामने इतनी ईमानदारी से खड़ी हुई कि जैसे हवा ही बदल गई हो।

ऐसे क्षणों में खामोशी खत्म नहीं होती, बल्कि उसका स्वरूप बदल जाता है। वह उस ठहराव में बदल जाती है जहाँ एक विचार आकार लेता है, उस सांस में जहाँ भाषा जन्म लेने वाली होती है, उस स्थिरता में जहाँ संभावना धीरे–धीरे बनती है। वह बंद दरवाजा नहीं रह जाती, बल्कि एक दहलीज बन जाती है। वह उस पानी की तरह हो जाती है जिसे आखिरकार बहने का रास्ता मिल गया हो – जो अब डर से ठहरा हुआ नहीं है, सावधानी की दीवारों के पीछे अटका नहीं है, बल्कि बह रहा है, खुलकर।

और शायद यही नारीवादी पद्धति का सबसे गहरा वादा है – यह नहीं कि वह महिलाओं को केवल अधिक मुखर बना देगा, बल्कि यह कि वह उन्हें स्वतंत्र सोचने वाला बनाएगाय उन्हें यह आजादी देगा कि वे अपने अनुभवों को नाम दे सकें, उनका विश्लेषण कर सकें और उन्हें चुनौती दे सकें।

## प्रस्तावित अध्ययन सामग्रीः

- Freire, P. (2000). Pedagogy of the oppressed (30th anniversary ed.; M. B. Ramos, Trans.). Bloomsbury Academic. (Original work published 1970)
- Government of India. (1961). The Maternity Benefit Act, 1961 (Act No. 53 of 1961). India Code. https://www.indiacode.nic.in/bitstream/123456789/17115/1/maternity_benefit.pdf
- Government of India. (2013). The Sexual Harassment of Women at Workplace (Prevention, Prohibition and Redressal) Act, 2013 (Act No. 14 of 2013). India Code. https://www.indiacode.nic.in/bitstream/123456789/2104/1/A2013-14.pdf
- Government of India, Ministry of Education. (2025). UDISE+ report 2024–25 (NEP structure). Department of School Education & Literacy. https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/statistics-new/UDISE%2BReport%202024-25%20-%20NEP%20Structure.pdf
- hooks, b. (1994). Teaching to transgress: Education as the practice of freedom. Routledge.
- Human Rights Watch. (2014). "They say we're dirty": Denying education to India's marginalized. Human Rights Watch. https://www.hrw.org/report/2014/04/22/they-say-were-dirty/denying-education-indias-marginalized
- Jain, D. (1996). Valuing work: Time as a measure. Economic and Political Weekly, 31(43), WS46–WS57.
- Rege, S. (2013). Writing caste/writing gender: Reading Dalit women's testimonios. Zubaan.
- Self-Employed Women's Association. (n.d.). History. SEWA. https://www.sewa.org/about-us/history/
- Sen, R. (2020, September 3). Critical Pedagogy Symposium: The emotional labour of teaching—A feminist critique of teaching critical international law. Opinio Juris.
- Sen, R. (2025, September 2). Feminist pedagogy as a tool to unsettle expertise in legal academia. SLR Forum (Socio-Legal Review, NLSIU).

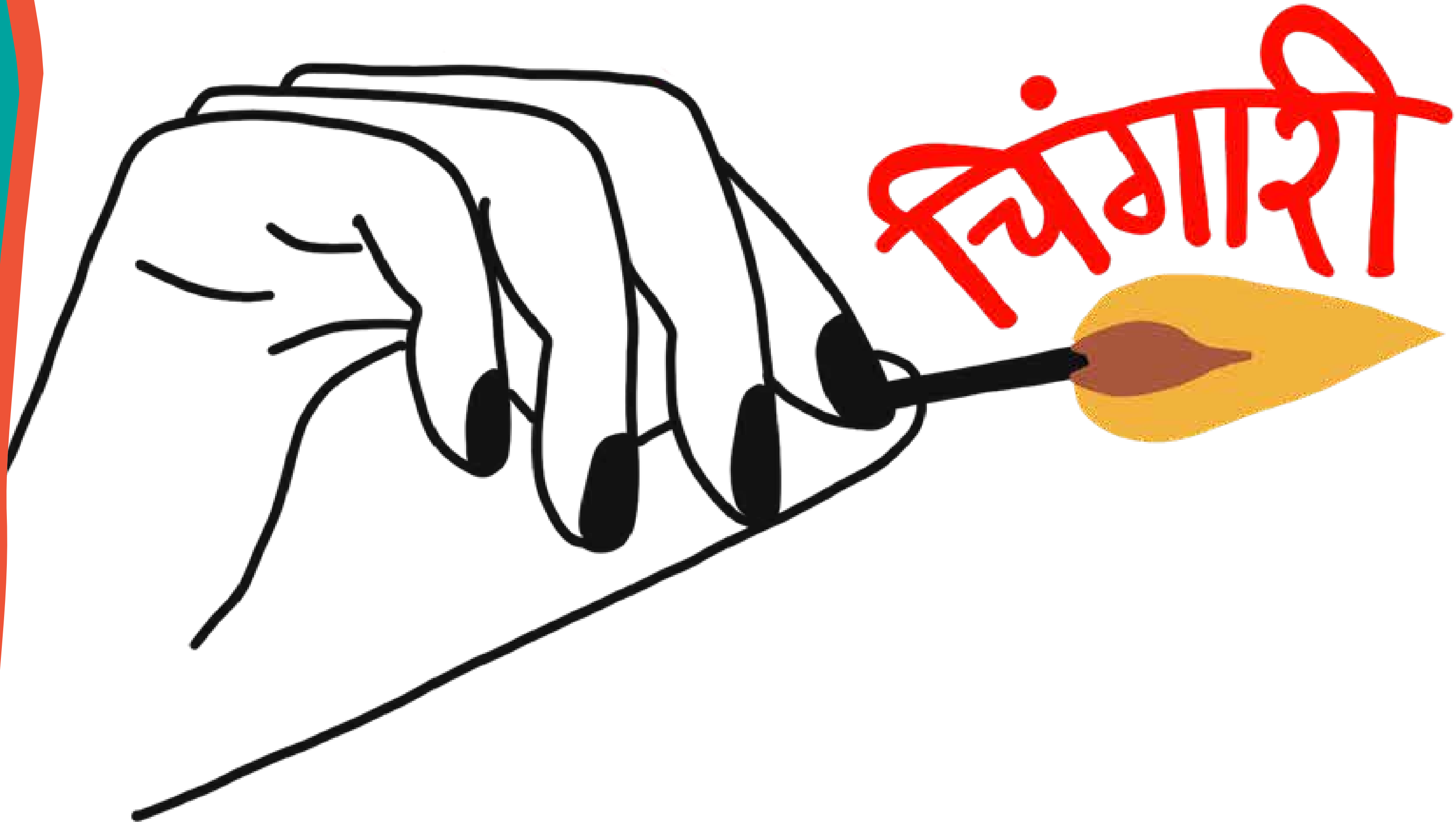
चिंगारी

# अध्याय 3: प्रक्रिया के भीतर की प्रक्रिया: नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम में शोध का समावेश

> आलोचना का अर्थ तोड़ना नहीं, बल्कि उन मान्यताओं को परखना है जिन्हें हम बिना सोचे स्वीकार कर लेते हैं– और जो एक बेहतर दुनिया बनाने की राह में रुकावट बन जाती हैं।
>
> जूडिथ बटलर

नेतृत्व विकास कार्यक्रम अक्सर उन महिलाओं पर गहरा असर डालते हैं जो उनमें भाग लेती हैं। महिलाएँ बताती हैं कि उन्हें अपनी आवाज मिली, आत्मविश्वास बढ़ा, सत्ता को नए तरीके से समझा, और वे खुद को नेतृत्व की भूमिका में देखने लगीं। साथ ही, वे उलझन, द्वंद, बेचैनी और गुस्से की भी बात करती हैं। ये बदलाव मायने रखते हैं। फिर भी, जब ये कार्यक्रम खत्म होते हैं, कुछ सवाल हमेशा उभरते हैं – कार्यक्रम के प्रभाव का प्रमाण कहाँ है? व्यक्तिगत कहानियों से आगे क्या बदला? क्या यह सीख काम की दुनिया, संगठनों या ढाँचों तक पहुँची?

ये सवाल विरोधीध्प्रतिकूल नहीं हैं। ये जरूरी हैं, क्योंकि ये नारीवादी नेतृत्व के काम से पूछते हैं कि वह व्यक्तिगत बदलाव से आगे जवाबदेह और भरोसेमंद बने। फिर भी, नारीवादी नेतृत्व जल्दी या साफ–सुथरे नतीजे नहीं देता।

चिंगारी इसी समझ से शुरू हुई कि नेतृत्व जेंडर, जाति, वर्ग, काम के ढाँचों और घर और काम में महिलाओं द्वारा रोजाना निभाए जाने वाले प्रतिबंधों से आकार लेता है। नेतृत्व, इस दृष्टि से, कोई तटस्थ कौशल नहीं है जिसे अलग से हासिल किया जा सके। यह संबंधों में बनता है, बातचीत में उभरता है, और संदर्भ में गहराई से जड़ा होता है। इसलिए, नारीवादी नेतृत्व असमान रूप से विकसित होता है। बदलाव सीधे रेखा में या तय समय–सारिणी में नहीं चलता। कुछ बदलाव सबसे पहले भीतर उगते हैं, यह बदलते हैं कि महिलाएँ खुद को, अपने काम को और अपनी सीमाओं को कैसे देखती हैं, और यह बदलाव बाद में ही क्रियान्वयन में दिखाई देता है।

कभी–कभी ये बदलाव आत्मविश्वास के बजाय बेचैनी पैदा करते हैं। पितृसत्ता और सत्ता संरचनाओं को चुनौती देना अक्सर केवल बाहरी ढाँचों का सामना नहीं होता, बल्कि आज्ञाकारिता, आभार और आत्म–मूल्य के बारे में भीतर जमी मान्यताओं को भी चुनौती देता है। नारीवादी नेतृत्व लंबे समय से चली आ रही धारणाओं और जीवन–यापन की रणनीतियों को हिला सकता है जो कभी बचने का रास्ता बनाती थीं।

कुछ बदलाव पारंपरिक नेतृत्व की झलक नहीं देते। असहमति, चुप्पी, अनुकूलन, या सीमाएँ तय करना बाहर से नेतृत्व नहीं लगता, लेकिन ये अक्सर सीमित परिस्थितियों में जानबूझकर लिए गए राजनीतिक निर्णय होते हैं। जैसा कि नारीवादी विद्वानों ने कहा है, महिलाओं की क्षमता हमेशा जोरदार या सार्वजनिक प्रतिरोध के रूप में नहीं दिखाई देती; यह अक्सर चुप, रणनीतिक और जोखिम से आकार लेती है (कबीर, 1999)। ऐसे नेतृत्व को पहचानने के लिए हमें सतही परिणामों से आगे देखने की जरूरत होती है।

यह जटिलता चिंगारी के लिए स्पष्ट चुनौती थी। प्रमाण को केवल परिणाम नहीं, बल्कि प्रक्रियाओं को भी पकड़ना था। साथ ही, केवल व्यक्तिगत कहानियों पर भरोसा करने से यह नजरअंदाज किया जा सकता था या कार्यक्रम की सीखने–सीखाने और विकसित होने की क्षमता सीमित हो सकती थी। नारीवादी शोध पद्धति इस तनाव का जवाब देती है। यह अनुभव को महत्व देती है और उसे व्यापक सामाजिक और ढाँचागत विश्लेषण में रखती है। इसलिए, चिंगारी ने शोध को अंत में जोड़ी जाने वाली गतिविधि के बजाय कार्यक्रम का हिस्सा बनाया। शोध ने समय के साथ बदलाव का पता लगाने, विरोधाभास और असमानता को पकड़ने, और नारीवादी अभ्यास को गहरा करने की क्षमता बढ़ाने का काम किया। इस तरह यह नारीवादी सोच के एक मूल विचार से जुड़ारू कि स्थिति–निर्धारित ज्ञान, जब व्यवस्थित रूप से इस्तेमाल किया जाए, तो जटिलता को कम किए बिना राजनीतिक स्पष्टता और भरोसेमंद प्रमाण दे सकता है (डोना हारावे के अनुसार)।

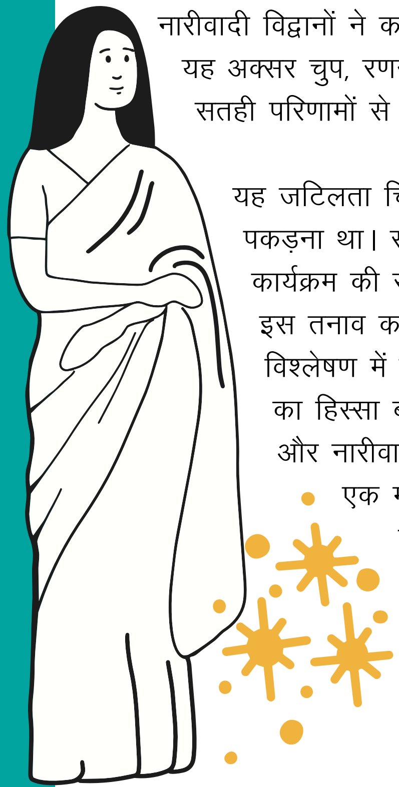

# शोधः नारीवादी अभ्यास, न कि जोड़—तोड़

एक शोध संगठन के रूप में, ICRW का स्पष्ट सिद्धांत हैरू प्रमाण नीति को प्रभावित करे, कार्यक्रमों को मजबूत करे, और सीमित संसाधनों के इस्तेमाल में गरिमा बनाए और जीवन सुधारें। यही सिद्धांत चिंगारी में शोध को शुरू से शामिल करने का कारण बना। शोध बाहरी मूल्यांकन नहीं था। यह सीखने—सीखाने की पद्धति में गहराई से जुड़ा था।

शोध को शामिल करने से कार्यक्रम एक साथ तीन काम कर सकता थाः

- परिवर्तन के ठोस प्रमाण जुटाना
- कार्यक्रम को बेहतर बनाना
- कैसे सामूहिक जगहों में नारीवादी सोच और समझ धीरे—धीरे बनती है, इसे ध्यान से देखना और समझना

बेसलाइन मूल्यांकन, पूर्व और पश्चात बदलाव, चिंतन कार्यशालाएँ, और गहन साक्षात्कार अलग शोध उत्पाद नहीं थे। ये सब मिलकर एक फीडबैक लूप बनाते थे। प्रमाण ने सीखने—सीखाने को आकार दिया, और सीखने—सीखाने ने प्रमाण को फिर से आकार दिया। इससे कार्यक्रम अधिक स्थिर, संवेदनशील और राजनीतिक रूप से ईमानदार बना।

## नारीवादी शोध का दृष्टिकोण

नारीवादी शोध खुद को तटस्थ नहीं मानता। यह लोगों के जीए हुए अनुभवों से शुरू होता है, खासकर उन लोगों के अनुभवों से जो हाशिए पर हैं। इसमें आत्मचिंतन, भागीदारी और जवाबदेही को महत्व दिया जाता है।

जैसा कि सैंड्रा हार्डिंग कहती हैं, नारीवादी शोध सिर्फ यह नहीं पूछता कि हम क्या जानते हैं, बल्कि यह भी पूछता है कि किसका ज्ञान मायने रखता है और वह कैसे बनाया जाता है।

## नारीवादी नेतृत्व की प्रक्रियाओं में सीखने–सीखाने की जटिलताओं के साथ झूझना

अधिकतर नेतृत्व कार्यक्रम मुख्य रूप से व्यक्ति पर ध्यान केंद्रित करते हैं। वे आत्मविश्वास, संचार कौशल, या आत्म–क्षमता को मापते हैं। लेकिन नारीवादी नेतृत्व पूछता है कि काम की दुनिया में संस्कृति कैसी है, अनौपचारिक सत्ता कैसे काम करती है, सुरक्षा कैसी है, भेदभाव और प्रतिशोध कैसे मौजूद हैं, और अवसर तक असमान पहुँच कैसी है। ये वास्तविकताएँ केवल साधारण संकेतकों से नहीं पकड़ी जा सकतीं।

शोध ने चिंगारी को इस जटिलता को समझने में मदद की। इसने कार्यक्रम को एक स्थिर पाठ्यक्रम की बजाय जीवंत प्रक्रिया के रूप में देखा। नारीवादी सीखना शायद ही कभी सीधी रेखा में चलता है। यह तनाव, प्रतिरोध, बेचौनी और स्पष्टता के क्षणों के माध्यम से खुलता है। यह थकावट भरा हो सकता है, कभी–कभी हताश और निराशाजनक भी। जागरूकता अक्सर राहत देने से पहले फ्रस्ट्रेशन बढ़ा देती है, क्योंकि असमानता को नाम देकर उसे नजरअंदाज करना मुश्किल हो जाता है।

बिना शोध के, ऐसे बदलाव आसानी से छूट जाते। शोध के साथ, कार्यक्रम ने सीखने–सीखाने को केवल कहानियों तक सीमित न रखते हुए, उसे दृश्यमान बनाया। यह दिखा कि महिलाओं का नजरिया बदल रहा है – सत्ता, विशेषाधिकार, अधिकार, भेदभाव, समावेशन और बहिष्करण, और असमान काम की दुनिया में नेतृत्व के बारे में। इससे स्पष्ट हुआ कि कार्यक्रम केवल महिलाओं को प्रेरित नहीं करता, बल्कि उन्हें सोच–समझकर निर्णय लेने और समीक्षात्मक चेतना विकसित करने में मदद करता है। जैसा कि पाउलो फ्रेइरे कहते हैं, समीक्षात्मक जागरूकता सिर्फ जानकारी तक सीमित नहीं है; यह दुनिया को समझने और पढ़ने की क्षमता विकसित करने के बारे में है, केवल शब्दों को नहीं।

## ज्ञान सिखाने से ज्ञान बनाने तक

शोध ने चिंगारी में सीखने–सीखाने की संस्कृति को सिर्फ मजबूत ही नहीं किया, बल्कि नारीवादी नेतृत्व के मायने ही बदल दिए। नियमित चिंतन और फीडबैक के चक्रों के जरिए, सीखना अब एक बार की प्रक्रिया नहीं, बल्कि लगातार चलने वाला अनुभव बन गया। महिलाओं को उनके व्यक्तिगत अनुभव को बड़ी तस्वीर से जोड़ने के लिए प्रेरित किया गया, और इस रास्ते में उन्होंने नेतृत्व के पुराने और पारंपरिक विचारों पर सवाल उठाना भी शुरू कर दिया।

नारीवादी नेतृत्व अब सिर्फ एक आदर्श या लक्ष्य नहीं रहा। यह अब जीने वाला, बातचीत में तय होने वाला और रोजमर्रा की कोशिशों में खुद को बदलने वाला बन गया। यह अंतर बहुत अहम था। सीखने–सीखाने के माहौल में नारीवादी नेतृत्व के साथ जुड़कर पता चला कि यह किताबों, नीतियों या प्रशिक्षण पुस्तकों में बताई गई तस्वीर से कितना अलग है।

शोध ने इस बदलाव को स्पष्ट करने का रास्ता बनाया। नारीवादी नेतृत्व हमेशा आत्मविश्वासी, दिखने वाला या बड़े बदलाव करने वाला नहीं लगता। कभी–कभी यह हिचकिचाहट, विरोधाभास, थकान, रणनीतिक चुप्पी या सावधानी से किए गए फैसलों के रूप में दिखता है। शोध ने इस मान्यता को चुनौती देने का मौका दिया कि नेतृत्व का मतलब केवल आवाज उठाना और दिखना है।

महिलाओं को केवल अपनी कहानियां साझा करने की बजाय उनका विश्लेषण करने के लिए कहकर, चिंतन कार्यशालाओं और साक्षात्कारों ने उन्हें उन बातों पर ध्यान देने में मदद किया जिन्हें अक्सर सामान्य माना जाता है। महिलाओं ने समझा कि केवल अपने भीतर असमानता को देखना पितृसत्तात्मक ढाँचों को नहीं बदलता, लेकिन नियमों, काम की संस्कृति और नीतियों को पहचानना नेतृत्व को व्यक्तिगत नहीं बल्कि राजनीतिक बनाता है।

इस तरह, शोध ने नारीवादी नेतृत्व को केवल कौशल और आत्म–सुधार से आगे बढ़ाकर सामूहिक और सक्रिय अभ्यास का रूप दे दिया।

यह बदलाव ज्ञान सिखाने से ज्ञान बनाने की ओर एक कदम था। महिलाएँ अब सिर्फ नारीवादी विचारों को सीख नहीं रही थीं, बल्कि उन्हें खुद आकार दे रही थीं। उनके अनुभवों ने नेतृत्व की सटीक परिभाषाओं को जटिल बनाया और दिखाया कि आदर्श नेतृत्व और असमान परिस्थितियों में अभ्यास किए जाने वाला नेतृत्व अलग होता है।

बेसलाइन और एंडलाइन मूल्यांकनों ने शुरुआत और बदलाव को पकड़ा, लेकिन असली महत्व यह था कि उन्होंने सीखने–सीखाने की जटिलता को मान्यता दी। नारीवादी नेतृत्व को परतदार, संबंधपरक और अधूरा रहने की अनुमति मिली। शोध ने इसे स्वीकारने का और समझने का स्थान दिया, और यह दिखाया कि अधूरी प्रक्रिया कमजोरी नहीं, बल्कि असमान परिस्थितियों में नेतृत्व के बनने की सच्ची तस्वीर है।

## ज्ञान निर्माण क्यों महत्वपूर्ण है?

नारीवादी नेतृत्व का मतलब सिर्फ किसी विशेषज्ञ की बात मानना या पहले से तय ढाँचों में फिट होना नहीं है। इसका मतलब है अपने अनुभवों से अपनी भाषा, अपनी समझ और अपने अर्थ बनाना।

जब महिलाएँ खुद अपनी भूमिका और नेतृत्व को समझने और परिभाषित करने लगती हैं, तो पुराने और स्थापित सोच को चुनौती मिलती है। तब नेतृत्व किसी एक व्यक्ति तक सीमित नहीं रहता, बल्कि सामूहिक बन जाता है।

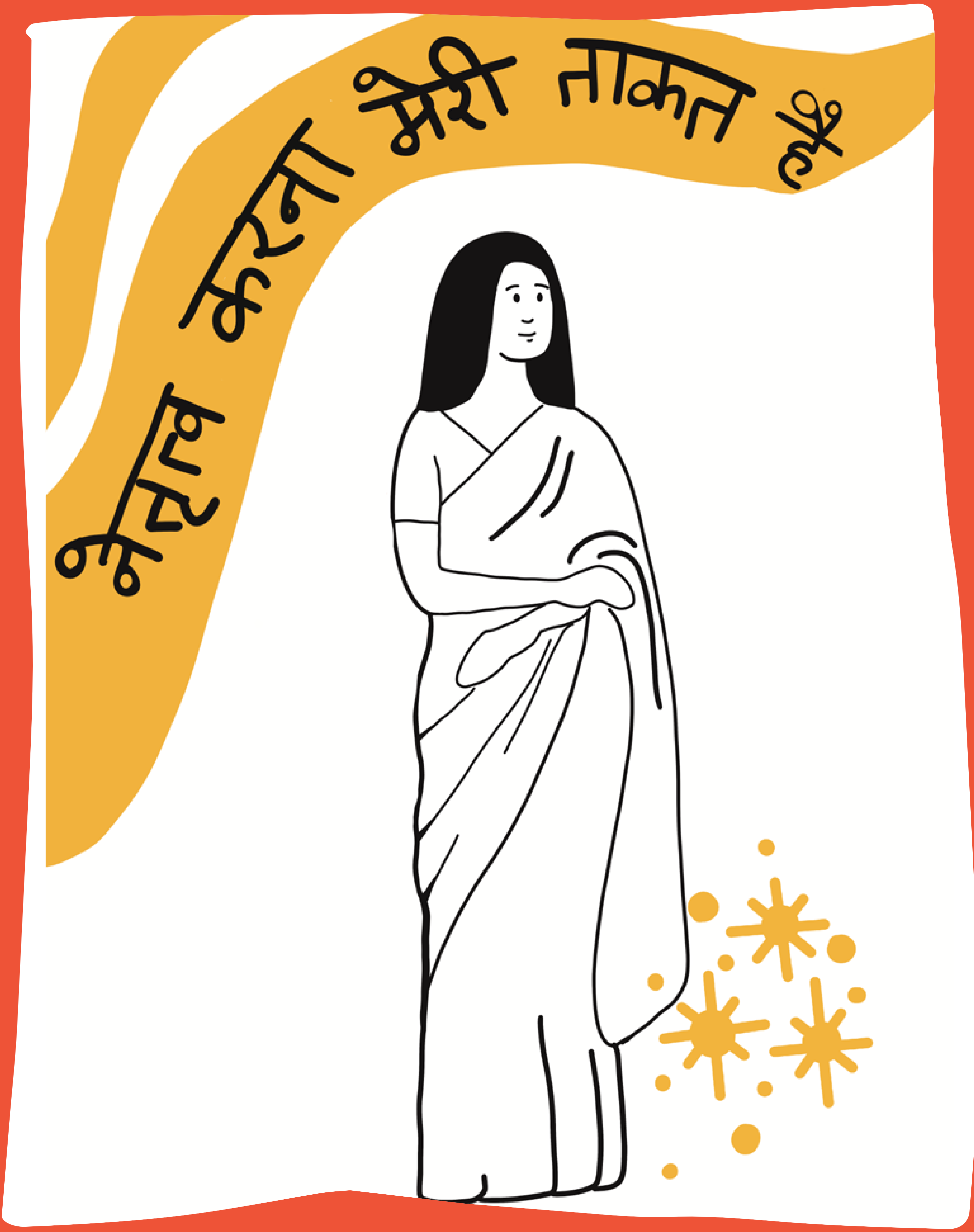
नेतृत्व करना मेरी ताकत है

# शोध ने कार्यक्रम डिजाइन को कैसे मजबूत किया

नारीवादी नेतृत्व का काम कभी कठोर नहीं हो सकता। इसे महिलाओं के जिंदगियों के अस्थिर, सीमित और अक्सर उनके नियंत्रण से बाहर की परिस्थितियों के अनुरूप होना चाहिए। इसलिए, चुप्पी, डर, असमान सहभागिता या पीछे हटना सफलता की कमी नहीं हैं। ये संकेत हैं। परंपरागत निगरानी और मूल्यांकन ढाँचे इन संकेतों को पढ़ने में अक्सर नाकाम रहते हैं, क्योंकि वे सीधे प्रगति, दिखाई देने वाली सहभागिता और स्पष्ट परिणाम खोजने के लिए बनाए गए हैं।

इसके विपरीत, चिंगारी में शोध का तरीका सीखने–सीखाने के ही उतार–चढ़ाव पर ध्यान देता था। इससे कार्यक्रम को केवल दिखाई देने वाली चीजों के पार देखने और यह समझने में मदद मिली कि बदलाव अक्सर स्पष्ट प्रगति की बजाय हिचकिचाहट, विरोधाभास या विराम के रूप में व्यक्त होता है। जैसा कि नारीवादी शोधकर्ता मेरिलिन स्ट्रैथर्न कहती हैं, "हम जो मापने का चुनाव करते हैं, वह पहले से ही यह बताता है कि हम क्या मूल्य देते हैं।" इसी विचार ने कार्यक्रम को जटिलता को 'शोर' मानने से रोकने में मदद की।

चिंतन कार्यशालाएँ इस दृष्टिकोण का केंद्र थीं। वे केवल नियमित फीडबैक का साधन नहीं थीं, बल्कि अपने आप में नारीवादी पद्धति थीं। इनने महिलाओं के लिए सुरक्षित जगह बनाई, जहाँ वे बिना डर या परिणाम की चिंता किए कठिनाइयों के बारे में बोल सकती थीं। इन स्थानों ने उन बाधाओं को सामने लाया, जिन्हें सामान्य मूल्यांकनों में शायद ही देखा जाता है – देखभाल की जिम्मेदारियाँ, समय की कमी, भावनात्मक थकावट, संगठनात्मक दबाव, और हानिकारक या उदासीन कार्यस्थलों को नेविगेट करने का भार। ये अंतर्दृष्टियाँ सफलता या असफलता के मानकों में आसानी से फिट नहीं होतीं, फिर भी ये समझने के लिए अहम हैं कि नेतृत्व असल में कैसे जिया जाता है।

इस तरह, शोध ने मूल्यांकन का उद्देश्य बढ़ाया। यह परिणाम मापने से अर्थ सुनने की दिशा में, प्रदर्शन आंकने से अनुभव समझने की दिशा में ले गया।

शोध ने रीयल–टाइम अनुकूलन को संभव बनाया और कार्यक्रम डिजाइन को ठोस रूप से मजबूत किया। समावेशन केवल लिखित इरादा नहीं रहा, बल्कि एक निरंतर अभ्यास बना, जो छोटी और अक्सर असहज बातों में दिखा – कौन बोलता है, कौन चुप रहता है, कौन समय के साथ पीछे हटता है, कौन लगातार शामिल नहीं हो पाता और क्यों, कौन असुरक्षित, जज या अनदेखा महसूस करता है। इन पैटर्न्स पर ध्यान देने से कार्यक्रम नैतिक रूप से प्रतिक्रिया दे सका, केवल नियमों के अनुसार नहीं। इस तरह, शोध ने केवल कार्यक्रम का मूल्यांकन नहीं किया, उसने इसे सक्रिय रूप से पुनः आकार दिया।

यह नारीवादी प्रभाव मूल्यांकन की आलोचना के साथ मेल खाता है, जो सामाजिक परिवर्तन को संकुचित प्रभावशीलता मापों तक सीमित करने की चेतावनी देता है। जैसा कि नायला कबीयर कहती हैं, सशक्तिकरण की प्रक्रियाएँ "सीधी रेखा में नहीं होतीं, और न ही उन्हें आसानी से पहले और बाद की तुलना में पकड़ा जा सकता है।"

यह मूल्यांकन प्रक्रिया कार्यक्रम को एक कठिन लेकिन जरूरी सच्चाई का सामना करने में भी मदद करती है – नारीवादी सीखना शुरू में बोझ बढ़ा सकता है, इससे पहले कि यह राहत दे। अधिक जागरूकता बेचौनी बढ़ा सकती है, असमानता को तुरंत हल किए बिना अधिक तीव्र बना सकती है। इसलिए नारीवादी नेतृत्व में केवल व्यक्तिगत सहनशीलता नहीं, बल्कि जुड़ाव, एकजुटता और सामूहिक स्थान जरूरी है। शोध ने यह सुनिश्चित किया कि प्रतिभागियों की आवाज लगातार कार्यक्रम डिजाइन को सूचित करे, ताकि काम केवल विशेषज्ञ–संचालित या जीवित परिस्थितियों से अलग न हो।

शोध ने सफलता और असफलता के साफ ढाँचों से आगे जाकर सीखने–सीखाने को एक गतिशील, विवादास्पद और मानव प्रक्रिया के रूप में सम्मानित किया।

## टीम पर शोध का असर

चिंगारी ने शोध को कार्यक्रम अभ्यास का हिस्सा माना, बाहरी ऑडिट नहीं। इसने टीम को भी आकार दिया। फैसिलिटेटर केवल कार्यान्वयनकर्ता नहीं रहे। वे सीखने–सीखाने वाले बने। उन्होंने चिंतन किया, मान्यताओं पर सवाल उठाया और राजनीतिक ईमानदारी की जिम्मेदारी उठाई।

नारीवादी नेतृत्व में यह अहम है। नेतृत्व तब ही सिखाया जा सकता है जब महिलाओं की वास्तविकताएँ राजनीतिक रूप से गहरी हों। शोध ने टीम में चिंतन, जवाबदेही और आलोचनात्मक सोच की संस्कृति मजबूत की।

नैतिक अभ्यास इस समेकन का केंद्र था। सूचित सहमति और गोपनीयता तकनीकी आवश्यकता नहीं, बल्कि नारीवादी प्रतिबद्धताएँ थीं। महिलाओं के कार्यस्थल तटस्थ नहीं होते। बोलने में जोखिम हो सकता है। भागीदारी से उन्हें उजागर होना पड़ सकता है। शोध को केवल परिणामों के लिए नहीं, बल्कि महिलाओं की सुरक्षा और गरिमा के लिए जवाबदेह होना था।

इस नैतिक आधार ने टीम की राजनीतिक स्पष्टता को गहरा किया। नारीवादी नेतृत्व केवल साहस का सवाल नहीं है। यह ढाँचे, संस्कृति, नियम और नीति के बारे में है। यह स्पष्ट और अप्रत्यक्ष भेदभाव के बारे में है। यह औपचारिक और अनौपचारिक सत्ता के बारे में है। यह ऐसे स्थान बनाने के बारे में है, जो अक्सर बहिष्करण को दोहराते हैं, लेकिन उनमें समता, विविधता और समावेशन को बढ़ावा दें।

शोध ने टीम को यह देखने में मदद की। यह उनकी क्षमता को मजबूत करता है कि वे जटिलता को समेट सकें और नेतृत्व को एक दीर्घकालिक, गैर–सीधी प्रक्रिया के रूप में समझ सकें, न कि एक त्वरित परिणाम के रूप में। चिंगारी में शोध का समावेश एक प्रक्रिया के भीतर प्रक्रिया बन गया। इसने सुनिश्चित किया कि नारीवादी नेतृत्व

विकास जवाबदेह, चिंतनशील और जीवन अनुभव में आधारित रहे। इससे प्रमाण और अभ्यास साथ–साथ विकसित हुए। इसने एक मूल नारीवादी सिद्धांत का सम्मान किया – परिवर्तन धीरे–धीरे, संबंधपरक और संदर्भ–निर्मित होता है, लेकिन जब इसे देखा, साझा किया और सामूहिक रूप से समझा जाता है, तो यह शक्तिशाली बन जाता है।

## प्रस्तावित अध्ययन सामग्रीः

- Freire, P. (1970). Pedagogy of the Oppressed. Continuum.
- Harding, S. (1987). Feminism and Methodology. Indiana University Press.
- Kabeer, N. (1999). Resources, Agency, Achievements: Reflections on the Measurement of Women's Empowerment. Development and Change, 30(3).
- Smith, D. E. (1990). The Conceptual Practices of Power. University of Toronto Press.
- Strathern, M. (1997). Improving Ratings: Audit in the British University System. European Review, 5(3).

बदलाव की ताकत, नेतृत्व का हौसला

# अध्याय 4: नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम बनाने और बनाए रखने में क्या–क्या लगता है?

नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम चलाना केवल सत्रों की योजना बनाने या पढ़ाई के लिए सामग्री चुनने तक सीमित नहीं है। इसका मतलब है ऐसे हालात बनाना जहाँ महिलाएँ सोच सकें, बोल सकें, असहमत हो सकें और सीख सकें। यह एक ऐसा जगह बनाने का भी सवाल है, जहाँ प्रतिभागी अपनी कल्पना और राजनीतिक क्षमता का प्रयोग कर सकें, ताकि वे वास्तविक असमानताओं का सामना सिर्फ सहन करके नहीं, बल्कि नई संभावनाओं, रणनीतियों और न्याय की दृष्टि के साथ कर सकें।

यह बात विशेष रूप से ज़मीनी महिला कर्मियों के लिए सच है। उनके रोजमर्रा के जीवन में बिना वेतन का देखभाल का काम, काम के जोखिम, समय की कमी और असमान सत्ता का दबाव हमेशा मौजूद रहता है। अगर हम केवल यह लिख दें कि चिंगारी में क्या पढ़ाया गया, तो हम उस जादू को छोड़ देंगे जिसने इस कार्यक्रम को संभव बनाया।

इसलिए यह अध्याय नारीवादी कार्यक्रम निर्माण के अमूल्य काम पर केंद्रित है। यह उन प्रक्रियाओं को दस्तावेज करता है, जो कार्यक्रम को स्थिर रखती हैं, सहभागिता को आकार देती हैं और सीख को वास्तविक बनाती हैं। यह उन पाठकों के लिए लिखा गया है, जो समावेशी, जिम्मेदार और राजनीतिक रूप से संवेदनशील नेतृत्व कार्यक्रम बनाना चाहते हैं।

अक्सर नेतृत्व पर लिखी जाने वाली सामग्री में एक बड़ा अंतर रहता है। अधिकांश प्रोग्राम केवल परिणामों की बात करते हैं, लेकिन बहुत कम ही यह बताते हैं कि वह जगह बनाने में क्या–क्या लगता है, जो उन परिणामों को जन्म देती है।

हम चिंगारी को किसी आदर्श नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम के रूप में पेश नहीं कर रहे हैं। हमने गलतियाँ कीं। सीमाएँ सामने आईं। कुछ फैसले काम आए, कुछ नहीं। फिर भी हमने इन प्रक्रियाओं के बारे में लिखना चुना, क्योंकि यही वह जगह है जहाँ नारीवादी कार्यक्रम वास्तव में बनते या टूटते हैं। यही रोजमर्रा के फैसलों में हम सीखते हैं कि कौन इस जगह में प्रवेश कर पाता है, कौन बोलने में सुरक्षित महसूस करता है, कौन किनारे पर धकेला जाता है, और किस तरह का नेतृत्व ज़मीनी स्तर की महिला कामगारों के लिए संभव होता है।

# आप दुनिया को क्या

## इन प्रक्रियाओं के बारे में लिखना क्यों महत्वपूर्ण है?

नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम सिर्फ पाठ्यक्रम या शिक्षण पद्धति से नहीं बनते। चाहे अवधारणाएँ कितनी भी मजबूत और सावधानीपूर्वक तैयार की गई हों, असली नारीवादी कोशिश अक्सर उन रोजमर्रा के फैसलों में निहित होती है जो सामग्री के परे चलते हैं। ये निर्णय अक्सर दिखाई नहीं देते, फिर भी निर्णायक होते हैं। कौन कार्यक्रम में प्रवेश कर पाता है, कौन अनजाने में बाहर रह जाता है, और किनकी वास्तविकताएँ बाहर रह जाती हैं – ये उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितना कि भीतर पढ़ाया जाने वाला विषय। इस दृष्टि से समावेशन कोई अमूर्त सिद्धांत नहीं है। यह ठोस निर्णयों के माध्यम से निर्मित होता है, जो पहुँच, भागीदारी और अपनापन तय करते हैं।

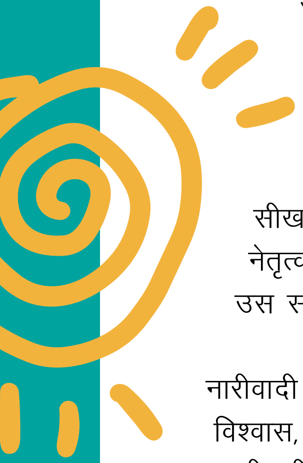

एक कार्यक्रम इससे भी परिभाषित होता है कि वह प्रतिभागियों की असली जरूरतों को कितनी गहराई से समझता है। ये जरूरतें केवल सीखने के उद्देश्य या कौशल तक सीमित नहीं हैं। इसमें पहुँच, सुरक्षा, समय–सारणी, भाषा, सुविधाएँ शामिल हैं। इसके अलावा उन अदृश्य दबावों को भी समझना जरूरी है, जो बिना भुगतान किए गए देखभाल के काम, कार्यस्थल की निगरानी, नौकरी की असुरक्षा और भावनात्मक थकान से पैदा होते हैं। जब ये वास्तविकताएँ शुरुआत में पहचानी नहीं जातीं, तो भागीदारी असमान हो जाती है। कुछ महिलाएँ पीछे हटने लगती हैं, कुछ चुप रह जाती हैं, और स्वयं सीखने की जगह उन बहिष्कारों को दोहराने लगती है जिनसे कार्यक्रम लड़ना चाहता है। इसलिए नारीवादी नेतृत्व का काम महिलाओं के जीवन और कामकाजी परिस्थितियों पर ध्यान देने से शुरू होना चाहिए, सिर्फ उस सामग्री के अध्ययन से नहीं जो उन्हें पढ़ने के लिए दी जाती है।

नारीवादी नेतृत्व केवल सत्रों से नहीं बढ़ता। यह जगह, संबंध और निरंतरता के माध्यम से विकसित होता है। यह विश्वास, सुरक्षा और अपनापन के अनुभव से बढ़ता है। यही कारण है कि महिलाएँ बार–बार लौटती हैं, भले ही भागीदारी उनके लिए कठिन या थकाऊ हो। कई ज़मीनी स्तर की महिलाएँ अस्थिर कामकाजी परिस्थितियों, लंबे समय तक काम, परिवार का दबाव, सामाजिक निगरानी, और कभी–कभी जेंडर आधारित हिंसा के साथ जीती हैं। ऐसे संदर्भों में नेतृत्व कार्यक्रम में शामिल होना कभी भी तटस्थ या आसान काम नहीं होता। यह थकान और जिम्मेदारियों के बावजूद किया गया एक सचेत निर्णय होता है। इसलिए नारीवादी नेतृत्व स्थलों को बनाए रखने में केवल सामग्री की मजबूती नहीं, बल्कि वह भावनात्मक आधार भी जरूरी है जो पूरे जगह को थामे रखता है।

इन प्रक्रियाओं के बारे में लिखना जरूरी है क्योंकि इससे पाठक समझ पाते हैं कि पाठ्यक्रम के परे, असली नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम बनाने और बनाए रखने में क्या–क्या लगता है। यह दिखाने का माध्यम है कि रोजमर्रा के निर्णय कैसे तय करते हैं कि कार्यक्रम ज़मीनी महिला कर्मियों के लिए सार्थक और पहुँच योग्य बनेगा या नहीं। मजबूत अवधारणाएँ आवश्यक हैं, पर अकेले वे काम नहीं चला सकतीं।

नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम को सही नींव पर भी खड़ा करना पड़ता है। इसका मतलब है कि उसे उस विमर्श को समझना होगा जिसमें वह स्थित है, प्रतिभागियों को सावधानी से चुनना होगा, उनकी वास्तविक जरूरतों का जवाब देना होगा, सीखने का समुदाय बनाना होगा, और ऐसी जवाबदेही के तरीके विकसित करने होंगे जो महिलाओं को

# संदेश देना चाहते हैं?

संरचनात्मक बाधाओं के लिए दंडित न करें। ये केवल प्रशासनिक विवरण नहीं हैं। ये नारीवादी प्रथाएँ हैं। यही तय करती हैं कि नेतृत्व केवल व्यक्तिगत प्रदर्शन के रूप में विकसित होता है या सामूहिक और राजनीतिक संभावना के रूप में उभरता है।

## विमर्श को समझना: कार्यक्रम को व्यापक नारीवादी नेतृत्व की समझ में रखना

चिंगारी जैसे कार्यक्रम को यह जानना जरूरी है कि यह किससे बात कर रहा है और किसको जवाब दे रहा है। नारीवादी नेतृत्व अकेले में नहीं होता। यह कोई एक विचार या स्थिर परिभाषा नहीं है। इसका इतिहास महिलाओं की आंदोलनों, श्रमिक संघर्षों, जातिवाद विरोधी राजनीति और शक्ति, प्रतिनिधित्व और न्याय पर बहसों से बना है। समय के साथ नारीवादी नेतृत्व के अलग–अलग रूप उभरे हैं। कुछ व्यक्तिगत महिला नेताओं को बनाने पर ध्यान देते हैं। कुछ सशक्तीकरण और आत्मविश्वास पर जोर देते हैं। कुछ प्रतिनिधित्व, भागीदारी या मौजूदा सिस्टम में समावेशन पर केंद्रित हैं। हर दृष्टिकोण अपने मान्यताओं के साथ आता है कि नेतृत्व कैसा दिखता है और किसके लिए है।

इसलिए किसी कार्यक्रम को व्यापक नारीवादी नेतृत्व विमर्श में रखना केवल सैद्धांतिक अभ्यास नहीं है। यह राजनीतिक काम है। विमर्श को समझना यह दिखाता है कि नारीवादी नेतृत्व हमेशा बहस के लिए खुला मैदान है। इसमें खामियाँ भी हैं और संभावनाएँ भी। ज़मीनी और फ्रंटलाइन महिला कर्मचारियों के लिए ये खामियाँ बहुत मायने रखती हैं। जो नेतृत्व मॉडल सिर्फ दृश्यता, आक्रामकता या ऊँची स्थिति पर जोर देते हैं, वे अक्सर उन महिलाओं की वास्तविकताओं को नहीं दर्शाते जो अस्थिर, कम मूल्यांकित और नियंत्रण वाले माहौल में काम करती हैं। विमर्श को जानने से कार्यक्रम यह मुश्किल सवाल पूछ सकता है कि किसका नेतृत्व केंद्र में है, किसकी मेहनत दिखाई जा रही है, और किनकी अनुभव अभी भी किनारे पर रह जाती हैं।

इसलिए कार्यक्रम डिजाइन का पहला कदम है इस व्यापक बातचीत में खुद को शामिल करना। इसमें नारीवादी नेतृत्व पर साहित्य, मौजूद कार्यक्रम, टूलकिट और पाठ्यक्रम की समीक्षा शामिल है, खासकर उन महिलाओं के लिए जो कामकाजी, अनौपचारिक या जाति, वर्ग और जेंडरके जटिल हिस्सों में हैं। मकसद अकादमिक संदर्भ या सिद्धांत में महारत हासिल करना नहीं है। मकसद है स्पष्टता और समझ। यह प्रक्रिया टीम को यह जानने में मदद करती है कि पहले क्या किया गया, क्या सीखा गया, और कहां महत्वपूर्ण मौन हैं। जैसा कि नारीवादी व्यवहार हमें याद दिलाता है – बिना सोच–विचार के कार्रवाई वही दर्जाबंदी दोहरा सकती है जिसे तोड़ना है।

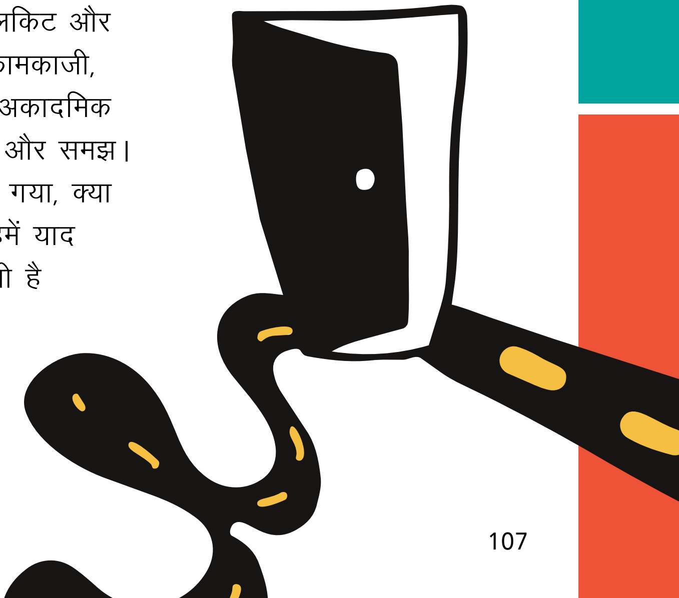

चिंगारी के लिए, विमर्श से जुड़ना कार्यक्रम की अपनी स्थिति स्पष्ट करने में मददगार साबित हुआ। इससे कार्यक्रम यह कह सका कि वह क्या बना रहा है और क्या जानबूझकर दोहराना नहीं चाहता। इससे सामग्री तैयार होने से पहले ही कार्यक्रम के विकल्प स्पष्ट हुए। प्राथमिकताएँ और सीमाएँ स्पष्ट हुईं। इससे यह सुनिश्चित हुआ कि कार्यक्रम बिना सोचे–समझे भाषा न अपनाए या ऐसे मॉडल दोहराए जो महिलाओं की वास्तविकताओं के अनुकूल न हों। इस प्रक्रिया ने मूल्य, डिजाइन और अभ्यास के बीच सामंजस्य को मजबूत किया।

## सामग्री तैयार करने से पहले पूछें:

- क्या हमने अपने संदर्भ के लिए महत्वपूर्ण नारीवादी नेतृत्व बहस और साहित्य की समीक्षा की है?
- क्या हमने समान समूह की महिलाओं के लिए मौजूद कार्यक्रम और पाठ्यक्रम पढ़े हैं?
- क्या हमने साफ–साफ समझा है कि हम किस कमी या चुनौती को संबोधित करने की कोशिश कर रहे हैं?
- क्या हमने यह स्पष्ट किया कि हम किन नेतृत्व के रूपों को दोहराना नहीं चाहते?

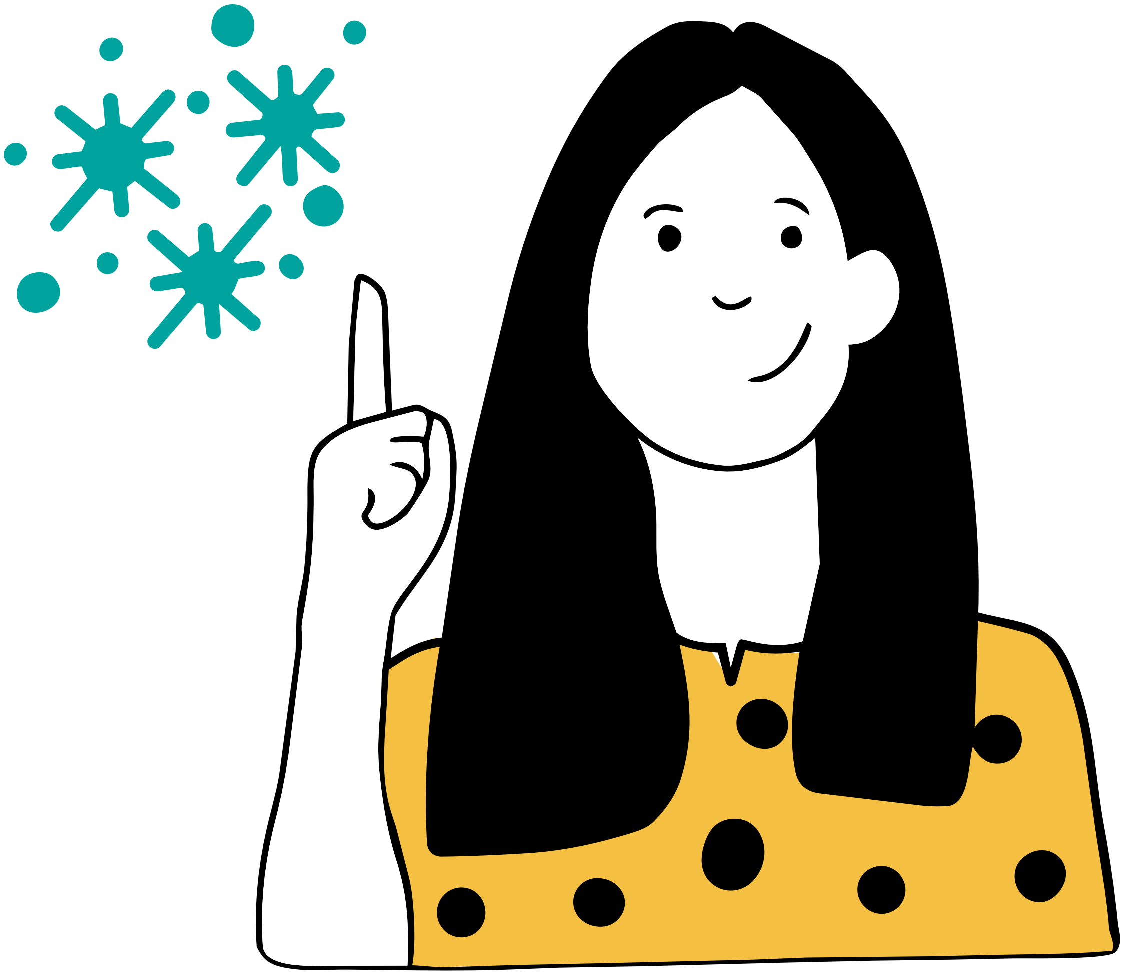

## प्रतिभागियों की पहचान

एक नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम को यह स्पष्ट होना चाहिए कि यह किसके लिए है। यह केवल पात्रता का सवाल नहीं है, यह राजनीति का सवाल है। “नेतृत्व” तक कौन पहुँचता है? कौन बाहर रहता है? किसे बार–बार बताया जाता है कि वह नेता नहीं है? ज़मीनी महिलाओं के लिए पहुँच के अवरोध केवल आत्मविश्वास तक सीमित नहीं हैं। इसमें भाषा, डिजिटल पहुँच, समय, परिवार की अनुमति, संगठनात्मक समर्थन, विकलांगता संबंधी सुविधाएँ और प्रतिक्रिया का डर शामिल हैं।

इसलिए प्रतिभागियों की पहचान का मतलब है यह पहचानना कि किन महिलाओं का नेतृत्व ऐतिहासिक रूप से रोका गया है। इसका मतलब यह भी है कि कार्यक्रम को इस तरह डिजाइन किया जाए कि जिन्हें इसकी सबसे ज्यादा जरूरत है, वे वास्तव में इसमें प्रवेश कर सकें।

यहाँ तक कि जब लक्ष्य समूह प्रस्ताव के चरण में तय हो, आवेदन और चयन प्रक्रिया तय करती है कि कौन कमरे में आता है। कई “प्रशासनिक” दिखने वाले निर्णय वास्तव में पहुँच के निर्णय होते हैं।

### उदाहरण के लिए:

- आवेदन की समय सीमा तय करती है कि किसके पास काम और देखभाल के बीच आवेदन करने का समय है।
- कॉल की भाषा तय करती है कि कौन आमंत्रित महसूस करता है और कौन पहले ही अस्वीकारित।
- प्लेटफॉर्म का चयन, जैसे गूगल फॉर्म, तय करता है कि मदद के बिना कौन आवेदन पूरा कर सकता है।
- फॉर्म के सवालों का स्वरूप भी मायने रखता है। अगर सवाल बहुत औपचारिक या कॉर्पोरेट भाषा में हों, कई महिलाएँ अपने काम को नेतृत्व के रूप में पहचान नहीं पाती। अगर फॉर्म में अनुभवों की बजाय परिष्कृत कथाएँ मांगी जाएँ, तो यह अधिक शिक्षा और एक्सपोजर वाली महिलाओं को प्राथमिकता देता है। अगर फॉर्म बहुत लंबा हो, तो यह उन महिलाओं को ही चुपचाप चुनता है जिनके पास अधिक समय है।

इसलिए प्रतिभागियों की पहचान केवल आवेदन के बाद लोगों का चयन नहीं है। यह आवेदन प्रक्रिया को इस तरह डिजाइन करने के बारे में भी है कि यह उन महिलाओं को बाहर न करे जिनके केंद्र में रहने का दावा किया जा रहा है। सवाल केवल यह नहीं है कि हमारे पास प्रतिभागी हैं, बल्कि यह है कि क्या हमारे पास जीवन के विविध अनुभव हैं, और क्या जगह उस विविधता को गरिमा के साथ समाहित कर सकता है।

इसका मतलब है कि उन महिलाओं की वास्तविकताओं को जानबूझकर जगह दी जाए जिन्हें सबसे ज्यादा बाधाएँ झेलनी पड़ती हैं। इसमें जाति, धर्म, विकलांगता और अन्य संरचनात्मक असमानताओं के खिलाफ लड़ रही महिलाओं का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करना शामिल है, ताकि समूह वही हायरार्की दोबारा न बनाए जो नारीवादी नेतृत्व चुनौती देना चाहता है।

## प्रतिभागियों की पहचान करते समय पूछें:

- क्या हम उन महिलाओं को केंद्र में रख रहे हैं जिनका नेतृत्व लिंग, जाति, धर्म, योग्यता और काम की परिस्थितियों से बाधित है?
- क्या हम अनौपचारिक और अर्ध–औपचारिक भूमिकाओं वाली महिलाओं को भी शामिल कर रहे हैं, सिर्फ औपचारिक पदों वाली नहीं?
- क्या हम विभिन्न क्षेत्रों, भाषाओं और संगठनात्मक जगहों की महिलाओं तक पहुँच रहे हैं?
- क्या हम विकलांगता और सुविधा संबंधी जरूरतों वाली महिलाओं के लिए गरिमापूर्ण पहुँच डिजाइन कर रहे हैं?
- क्या हम जाति और धार्मिक अल्पसंख्यकता की वास्तविकताओं को जानबूझकर शामिल कर रहे हैं, उन्हें डिफॉल्ट रूप से बाहर नहीं छोड़ रहे?
- क्या हम केवल "पहले से आत्मविश्वासी" महिलाओं का चयन नहीं कर रहे, और नेतृत्व को अभिव्यक्ति और अंग्रेजी क्षमता से परे देख रहे हैं?

## आवेदन डिजाइन को पहुँच डिजाइन के रूप में समझना:

- क्या आवेदन की समय सीमा उन महिलाओं के लिए यथार्थपूर्ण है, जो वेतनभोगी काम के साथ अवैतनिक देखभाल का काम भी संभालती हैं?
- क्या आवेदन का संदेश सरल और आम भाषा में है, जो नेतृत्व को डरावना या पेशेवर न दिखाए?
- क्या आवेदन उन भाषाओं में उपलब्ध है, जिनमें लक्षित समूह सहज महसूस करता है?
- क्या आवेदन का फॉर्मेट सुलभ है (संक्षिप्त, स्पष्ट, मोबाइल–फ्रेंडली, कम डेटा)?
- क्या फॉर्म लंबे, जटिल या अत्यधिक औपचारिक सवालों से बचता है?
- क्या सवाल महिलाओं को उनके वास्तविक अनुभव और काम को नेतृत्व के रूप में पहचानने में मदद करते हैं?
- क्या सीमित डिजिटल पहुँच वाली महिलाओं के लिए वैकल्पिक तरीके उपलब्ध हैं (वॉइस नोट, सहायक आवेदन, फोन कॉल समर्थन)?
- क्या हमने यह देखा कि फॉर्म की संरचना या लंबाई चुपचाप उन महिलाओं को बाहर तो नहीं कर रही जिनके पास समय या समर्थन कम है?

## प्रतिभागियों की जरूरतें समझना

एक नारीवादी कार्यक्रम को असली जीवन के अनुसार डिजाइन करना चाहिए। ज़मीनी महिलाएँ कई जिम्मेदारियाँ संभालती हैं। वे काम के लिए यात्रा करती हैं, उत्पीड़न झेलती हैं, परिवार की देखभाल करती हैं और अक्सर उनका निजी समय बहुत कम होता है।

### जरूरतों का मूल्यांकन कार्यक्रम को इन वास्तविकताओं को शुरू होने से पहले समझने में मदद करता है। इसमें शामिल होना चाहिए:

- भाषा का समर्थन
- समय और यात्रा संबंधी बाधाएँ
- देखभाल की जिम्मेदारियाँ
- विकलांगता के लिए सुविधा
- डिजिटल पहुँच

जरूरतों का मूल्यांकन यह भी बताता है कि महिलाएँ कार्यक्रम से क्या चाहती हैं और किस बात का डर रखती हैं। इससे अनावश्यक बहिष्कार रोका जा सकता है और भरोसा बनाया जा सकता है।

साथ ही, मूल्यांकन सीखने की वास्तविकताओं को भी समझना चाहिए। यह जानना जरूरी है कि प्रतिभागियों को विषय के बारे में पहले से क्या समझ है और कौन–सी भाषा या तरीका उनके लिए सुलभ है। इससे सत्र सही स्तर पर रखा जा सकता है। यह कार्यक्रम को बहुत जटिल या बहुत साधारण बनने से रोकता है। साथ ही यह सुनिश्चित करता है कि शक्ति, अधिकार, अंतरसंबंध, भेदभाव और नेतृत्व जैसे नारीवादी विचार महिलाओं के वास्तविक अनुभवों और मौजूदा ज्ञान से जुड़े रहें।

### जरूरतों के मूल्यांकन का उद्देश्य:

- प्रतिभागी कौन हैं, और कौन–से मुख्य विवरण उनके संदर्भ को समझने में मदद करेंगे (आयु समूह, जगह, भाषा, कार्य भूमिका, अनुभव का वर्ष)?
- वे किस तरह का काम करते हैं, और उनकी नौकरी का स्वरूप क्या है (औपचारिक, अनौपचारिक, संविदात्मक, स्वयंसेवी/आंशिक समय)?

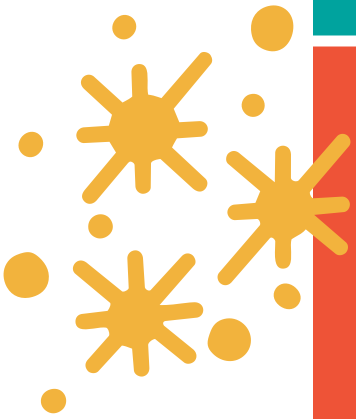

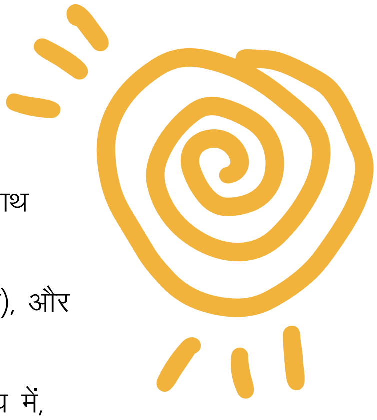

- क्या कोई सामाजिक पहचान या वास्तविकता है जिसे प्रतिभागी साझा करने में सुरक्षित महसूस करते हैं, जो उनके कार्य अनुभव को प्रभावित करती है (जैसे जाति, धर्म, विकलांगता, प्रवास, वर्ग)? यह हमेशा स्वैच्छिक होना चाहिए और स्पष्ट उद्देश्य के साथ फ्रेम होना चाहिए।
- उनका संगठनात्मक जगह क्या है (फील्ड स्टाफ, मोबिलाइजर, कोऑर्डिनेटर, सुपरवाइजर), और उस भूमिका के साथ कौन–सी सत्ता या संवेदनशीलता जुड़ी है?
- क्या प्रतिभागियों को कार्यक्रम में शामिल होने पर कोई जोखिम लगता है (घर में, समुदाय में, कार्यस्थल में), और कौन–सी सुरक्षा उपाय उन्हें सुरक्षित बनाते हैं?
- प्रतिभागी किस भाषा में सहज हैं, और कौन–सी भाषा पढ़ने और बोलने में आसान लगती है?
- प्रतिभागियों की डिजिटल पहुँच कैसी है (स्मार्टफोन/लैपटॉप), और किन उपकरण या कनेक्टिविटी सीमाओं का सामना करना पड़ता है?
- वैतनिक काम, अवैतनिक देखभाल, यात्रा या घरेलू जिम्मेदारियों के कारण समय की कौन–सी बाधाएँ हैं?
- सुरक्षा संबंधी कौन–सी चिंताएँ भागीदारी को प्रभावित कर सकती हैं (यात्रा, घर में प्रतिक्रिया, कार्यस्थल का जोखिम, उत्पीड़न, निगरानी)?
- प्रतिभागियों की कौन–सी सुविधा और सुलभता संबंधी जरूरतें हैं (विकलांगता की सुविधा, देखभाल सहायता, स्वास्थ्य संबंधी आवश्यकताएँ)?
- प्रतिभागी कार्यक्रम से क्या उम्मीद कर रहे हैं, और शामिल होने को लेकर कौन–से डर या हिचकिचाहट हैं?
- प्रतिभागियों की जेंडर, सत्ता, अधिकार, भेदभाव और नेतृत्व जैसे विषयों की मौजूदा समझ क्या है?
- वे कौन–से फॉर्मेट में सहज हैं (पढ़ना, लिखना, बोलना, समूह कार्य, चिंतन), और कौन–से फॉर्मेट उनके लिए चिंता या बहिष्कार पैदा करते हैं?

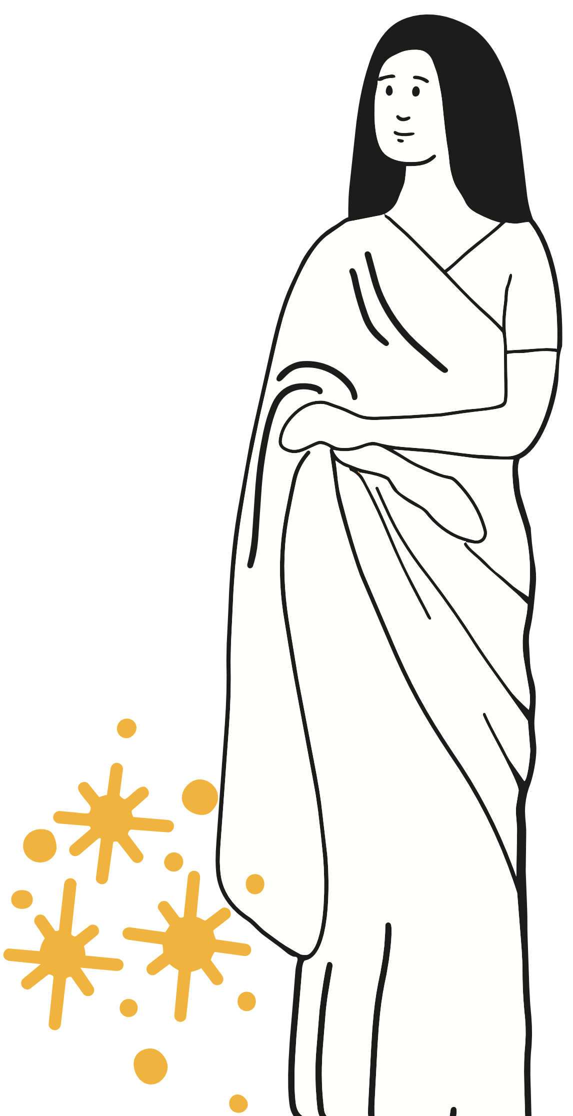

## प्रतिक्रिया/फीडबैक और चिंतन कार्यशालाओं को प्रक्रिया में शामिल करना

नेतृत्व कार्यक्रम केवल अंत मूल्यांकन के लिए नहीं रुक सकते। इन्हें लगातार फीडबैक चाहिए, क्योंकि सत्ता के रिश्ते

सीखने–सीखाने की प्रक्रियाओं में भी निहित होते हैं। कुछ महिलाएँ अधिक बोलती हैं। कुछ चुप रहती हैं। कुछ असुरक्षित महसूस करती हैं। कुछ भारी महसूस करती हैं। कुछ जवाब देने से मना कर देती हैं।

फीडबैक और चिंतन कार्यशालाएँ नारीवादी उपकरण हैं क्योंकि ये उस चीज को सामने लाती हैं जो अभी कहा नहीं जा रहा। ये कार्यक्रम को कठोर बनने से भी रोकती हैं। चिंतन कार्यशालाएँ ऐसी संस्कृति बनाती हैं, जहाँ महिलाएँ बिना डर के अपनी जरूरतें बता सकें। ये प्रशिक्षकों को अपनी पद्धति को समायोजित करने में भी मदद करती हैं। इससे कार्यक्रम ज्यादा सहभागी, उत्तरदायी और समावेशी बनता है।

लेकिन नारीवादी फीडबैक केवल विषय–वस्तु तक सीमित नहीं होना चाहिए। यह केवल यह नहीं पूछ सकता: "सत्र उपयोगी था या नहीं?" इसे यह भी पूछना चाहिए: "आप इस जगह पर एक व्यक्ति के रूप में कैसा महसूस कर रही हैं?"

क्योंकि भागीदारी केवल सीखने की जरूरतों से नहीं, बल्कि भावनाओं, आराम और सुरक्षा से भी प्रभावित होती है। एक महिला सामग्री को मूल्यवान पाकर भी पीछे हट सकती है क्योंकि उसे लगता है कि उसके भाषा, अभिव्यक्ति या मौजूदा ज्ञान के स्तर के लिए उसका मूल्यांकन किया जा रहा है। दूसरी महिला अवधारणाओं से सहमत हो सकती है लेकिन चुप रहती है क्योंकि उसे डर है कि उसके कार्यस्थल की कहानी बाहर जा सकती है। कोई महिला इसलिए उपस्थित होना बंद कर सकती है क्योंकि जगह बहुत तेज, भारी या उसकी देखभाल की जिम्मेदारियों के साथ मांगपूर्ण महसूस होता है।

परिवर्तन
की
शक्ति

इसलिए फीडबैक में सीखने और भावनाओं दोनों को शामिल करना जरूरी है। इसमें यह पूछना चाहिए कि महिलाएँ:

- यहाँ सुरक्षित महसूस करती हैं या नहीं
- क्या उन्हें सम्मान मिलता है
- क्या उन्हें लगता है कि कार्यक्रम उनकी वास्तविकताओं को समझता है
- क्या उन्हें इस जगह में अपनापन महसूस होता है

केवल तब फीडबैक वास्तव में कार्यक्रम को आकार दे सकता है और नारीवादी सीखने की सुरक्षा सुनिश्चित कर सकता है।

## फीडबैक और चिंतन के लिए सवालः क्या पूछें और क्यों:

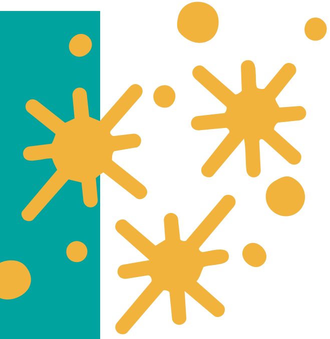

| क्या पूछें<br>(फीडबैक + चिंतन सवाल) | क्यों जरूरी है<br>(क्या पता चलता है/मदद करता है) |
|---|---|
| अब तक कार्यक्रम में आप कैसा महसूस कर रही हैं (ऊर्जावान, थकी हुई, अलग–थलग, उत्सुक, प्रतिरोधी)? यह भावना क्यों है? | भावनात्मक वास्तविकता सामने आती है। प्रशिक्षकों को पता चलता है कि जगह सहायक है या थकाने वाली। ड्रॉपआउट को "रुचि की कमी" समझने से रोकता है। |
| क्या आप सत्रों में एक व्यक्ति के रूप में सहज महसूस कर रही हैं? क्या आपको सहज या असहज बनाता है? | सुविधा और सम्मान को समझना जरूरी है, केवल सामग्री नहीं। शर्म, बहिष्कार, डर, या भय की पहचान होती है। |
| अब तक आपके लिए सबसे उपयोगी क्या रहा? सबसे कम उपयोगी क्या रहा? | पता चलता है क्या असर कर रहा है और क्या नहीं। पाठ्यक्रम और पद्धति को बेहतर बनाने में मदद करता है बिना प्रतिभागियों को दोषी ठहराए। |
| कौन–सी चर्चाएँ सत्र खत्म होने के बाद भी आपके साथ बनी रहीं? क्यों? | गहरी सीख, भावनात्मक जुड़ाव और वास्तविक अनुभव से कनेक्शन दिखाता है। कार्यक्रम को जमीन पर, जीवंत और आनंददायक रखता है। |
| कौन–सी अवधारणाएँ स्पष्ट लगीं, और कौन–सी बहुत जटिल या तेज लगीं? | गति, समायोजन और बेहतर उदाहरण बनाने में मदद करता है। अलग शिक्षा और ज्ञान स्तर वाली महिलाओं की समावेशिता सुरक्षित रखता है। |
| जब आपने सत्र में नहीं बोला, तो क्यों? (भाषा बाधा, मूल्यांकन का डर, सोचने के लिए समय नहीं, अनसुना महसूस करना) | मौन बहिष्कार सामने आता है। प्रशिक्षक तरीकों को बदल सकते हैं ताकि कुछ ही आवाजें हावी न हों। |

| | |
|---|---|
| क्या आप यहाँ कार्यस्थल या परिवार के अनुभव साझा करने में सुरक्षित महसूस करती हैं? अगर नहीं, तो क्या असुरक्षित बनाता है? | सुरक्षा को मजबूत करता है। प्रतिशोध, खुलासे या गोपनीयता जोखिम सामने लाता है। |
| क्या ऐसे विषय हैं जिन पर आप डर, शर्म या जोखिम के कारण नहीं बोलती (हिंसा, जातिगत भेदभाव, उत्पीड़न, परिवार का नियंत्रण)? क्या इससे सुरक्षित कैसे बना जा सकता है? | बोलने की लागत को समझने में मदद करता है। पुनः–आघात से रोकता है। सुरक्षित संचालन प्रोटोकॉल बनाता है। |
| पूरी तरह भाग लेने में क्या मुश्किल है (काम का बोझ, देखभाल, समय, यात्रा, स्वास्थ्य, कार्यस्थल दबाव)? | भागीदारी को संरचनात्मक बाधाओं से जोड़ता है। समय और कार्यभार को नैतिक रूप से फिर से डिजाइन करने में मदद करता है। |
| भागीदारी आसान बनाने के लिए क्या किया जा सकता है (समय बदलना, भाषा समर्थन, अधिक ब्रेक, छोटे समूह, धीमी गति)? | व्यावहारिक सुधार के सुझाव देता है। कार्यक्रम को कठोर न बनाकर लचीला बनाता है। |
| क्या जगह विभिन्न प्रतिभागियों की अलग–अलग जरूरतों को पहचानती है? | कार्यक्रम को विभिन्न और बदलती पहुँच और सुविधा की जरूरतों को समझने और संबोधित करने में मदद करता है। ये जरूरतें प्रतिभागियों के वर्तमान कार्यभार (भुगतान और अवैतनिक) और उनके इकोसिस्टम के अनुसार बदल सकती हैं। |

# जगह, जुड़ाव और जवाबदेही

नेतृत्व केवल सत्रों या संरचित सीखने से नहीं पनपता। यह रिश्तों में पनपता है। यह अपनापन और धीरे–धीरे यह महसूस होने से पनपता है कि आप अकेली नहीं हैं। फ्रंटलाइन महिला कामगारों के लिए, जिनकी जिंदगी अक्सर अलगाव, दबाव और अदृश्यता से भरी होती है, यह जुड़ाव का अनुभव कोई सजावटी चीज नहीं है। यह नेतृत्व के उभरने की राजनीतिक आवश्यकता है। इसलिए, जगह बनाना सिर्फ एक लॉजिस्टिक काम नहीं है। यह एक मूल नारीवादी प्रक्रिया है।

हर रोज के जुड़ाव वाले छोटे–छोटे जगह मायने रखते हैं। एक साधारण WhatsApp ग्रुप भी सामूहिक जीवन का शक्तिशाली मंच बन सकता है। यह महिलाओं को सत्रों के बीच जुड़े रहने, रिमाइंडर साझा करने, सवाल पूछने और सहकर्मी सहायता देने की अनुमति देता है। समय के साथ, यह देखभाल, हँसी और राजनीतिक बातचीत का भी जगह बन सकता है, जहाँ महिलाएँ भाषा आजमाती हैं, छोटी जीत साझा करती हैं और अन्याय का नाम लेती हैं।

साथ ही, ऐसे जगहों में स्पष्टता और सीमाएँ जरूरी हैं। इनके बिना जुड़ाव दबाव बन सकता है और भागीदारी थकाऊ हो सकती है। नारीवादी जगह –निर्माण में लय, सहमति और भावनात्मक श्रम पर ध्यान देना जरूरी है, ताकि महिलाएँ थकी नहीं, बल्कि सम्हाली जाएँ।

फेमिनिस्ट लीडरशिप प्रोग्रामों में जवाबदेही को भी अलग तरह से समझना जरूरी है। होमवर्क, रिफ्लेक्शन के काम और प्रैक्टिस एक्सरसाइज महत्वपूर्ण हैं, लेकिन इन्हें किसी संस्थागत नियम–कानून की तरह कड़ाई से लागू नहीं किया जा सकता। महिलाओं की जिंदगियाँ बहुत असमान हैं। कुछ महिलाएँ सेशन्स या काम मिस कर देंगी क्योंकि उन्हें देखभाल की जिम्मेदारी निभानी है, बीमारी है, या कार्यस्थल में निगरानी और हिंसा का सामना करना पड़ता है।

इसलिए, फेमिनिस्ट जवाबदेही साझा और लचीली होनी चाहिए। इसका मकसद सिर्फ अनुपालन की निगरानी करना नहीं है, बल्कि सीखने को नया बोझ बनाए बिना प्रतिबद्धता को सपोर्ट करना है। इस काम में अभियान समूह और सामूहिक परियोजनाएँ बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। ये ये व्यक्तिगत कामयाबी पर ध्यान देने के बजाय, सामूहिक प्रयास की ओर ले जाती है। ये महिलाओं को एक साथ नेतृत्व का अभ्यास करने, भूमिकाओं पर बातचीत करने, और प्रोग्राम के प्रति साझा जिम्मेदारी और स्वामित्व महसूस कराने का अवसर देती हैं।

**नारीवादी जवाबदेही का व्यवहारिक रूप:**

- असमान क्षमताओं और सीमाओं को पहचानना
- दंड के बिना भागीदारी को प्रोत्साहित करना
- व्यक्तिगत कामयाबी से ज़्यादा सामूहिक प्रयास को महत्व देना
- बिना शर्म के विराम, लौटने और फिर से शामिल होने की अनुमति देना

प्रशिक्षक की जवाबदेही भी इसी प्रक्रिया का अहम हिस्सा है। एक नारीवादी नेतृत्व कार्यक्रम प्रतिभागियों से संवेदनशीलता की उम्मीद नहीं कर सकता, जबकि प्रशिक्षकों को सवाल से बाहर रखे। प्रशिक्षक सत्ता रखते हैं, भले ही वे सहायक और नेक इरादों वाले हों। नारीवादी अभ्यास मांगता है कि यह सत्ता ध्यान और प्रतिबिंब के साथ इस्तेमाल हो।

प्रशिक्षकों को अपने आप को उन मूल्यों के प्रति जवाबदेह बनाना चाहिए, जिन्हें वे विकसित करना चाहते हैं। इसमें गहराई से सुनना, राजनीतिक स्पष्टता बनाए रखना और समावेश एवं देखभाल के लिए प्रतिबद्ध रहना शामिल है। प्रशिक्षकों को देखना होगा कि कौन आसानी से बोलता है और कौन हिचकिचाता है। उन्हें यह पूछना होगा कि क्यों कुछ आवाजें हावी हैं और कुछ पीछे हट रही हैं। उन्हें शांत प्रतिभागियों को सक्रिय रूप से आमंत्रित करना होगा, बिना उन्हें अपनी निजी जानकारी साझा करने के लिए मजबूर किए। उन्हें आलोचना के लिए खुला रहना होगा और जरूरत पड़ने पर रास्ता बदलने के लिए तैयार रहना होगा। जैसे कि नारीवादी विचारकों ने कहा है, नेतृत्व केवल यह नहीं है कि क्या सिखाया जा रहा है, बल्कि यह भी है कि सत्ता रोजमर्रा की बातचीत में कैसे प्रयोग की जा रही है।

इस तरह जगह, जुड़ाव और जवाबदेही का निर्माण नेतृत्व को व्यक्तिगत उपलब्धि नहीं बल्कि सामूहिक प्रक्रिया के रूप में पनपाता है। यह एक मूल नारीवादी अंतर्दृष्टि को दर्शाता है कि परिवर्तन संबंधों में होता है। फ्रंटलाइन महिला कामगारों के लिए, नेतृत्व तब संभव होता है जब उनसे अकेले अधिक करने की उम्मीद नहीं की जाती, बल्कि जब उन्हें ऐसे जगहों में सम्हाला जाता है जो उनकी सीमाओं को पहचानते हैं, प्रयास का सम्मान करते हैं और सामूहिक प्रक्रिया के लिए जगह बनाते हैं।

## प्रस्तावित अध्ययन सामग्री:

- Hooks, b. (2000). Feminist Theory From Margin to Center. Pluto Press.
- Batliwala, S. (2010). Feminist Leadership for Social Transformation. CREA.

# एक साथ, अधिक सशक्त

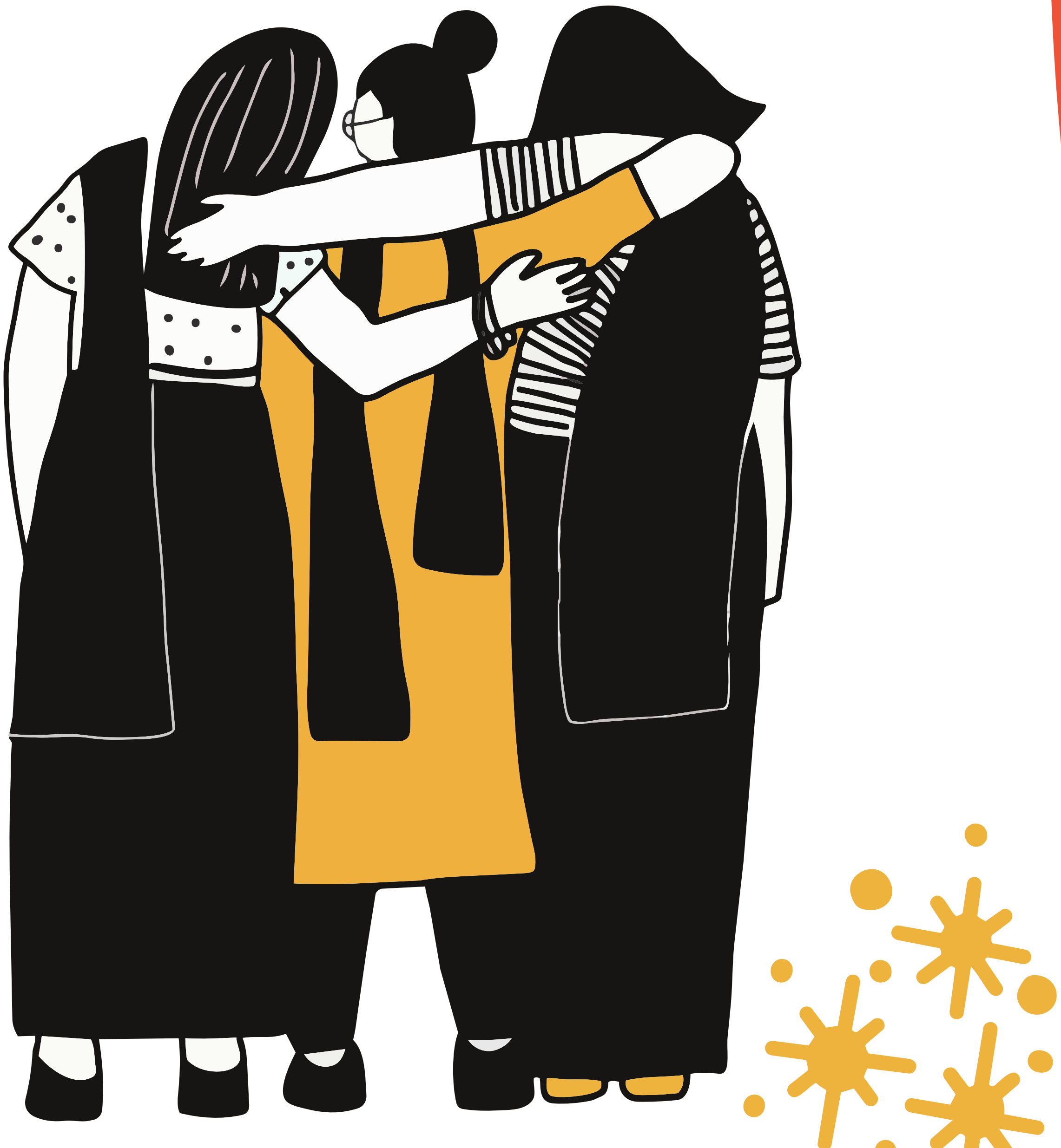

# अध्याय 5:

# अनुभव और समझ: हमारी यात्रा के सबक

यह संसाधन पुस्तक एक सवाल के साथ शुरू हुई। वह सवाल जिसने पूरी चिंगारी यात्रा को दिशा दी, ऊर्जा दी और उसे कायम रखा। नारीवादी नेतृत्व के केंद्र में क्या है? जैसे–जैसे चिंगारी अपने लिए कई और रास्ते तह कर रही है, जिनकी हम अभी कल्पना नहीं कर सकते, यह बताना जरूरी है कि यह सवाल कभी पूरी तरह हल करने या निश्चित उत्तर देने के लिए नहीं रखा गया था। इसका उद्देश्य किसी अंतिम मंजिल तक पहुँचना या एक तयशुदा मॉडल प्रस्तुत करना नहीं था।

यह किसी निश्चित गंतव्य पर खत्म होने वाली प्रक्रिया नहीं है, और ऐसे सवाल का कोई आखिरी जवाब भी नहीं हो सकता। यह यात्रा जानबूझकर सृजनात्मक रही। जैसा कि यह पुस्तक दिखाती है, इस सवाल ने चिंतन, अभ्यास और सीखने के कई रास्ते खोले। इसने कई उत्तर दिए और साथ ही और भी सवाल जन्म दिए – सवाल जो हमारी समझ को खींचते हैं, चुनौती देते हैं और गहराई में ले जाते हैं। इसने हमें निश्चितता नहीं दी, लेकिन इरादे की स्पष्टता जरूर दी।

हमने यह पुस्तक इसलिए लिखी है ताकि हमारी यात्रा आपके पास पहुंचे, आपके साथ रहे – एक साथी की तरह, एक सहयोगी की तरह, या एक ऐसा सन्दर्भ जिस पर आप अपने रास्ते पर सोचते समय भरोसा कर सकें। हम चाहते हैं कि वे सवाल जो हमारे लिए मायने रखते थे, जिन्होंने हमें आगे बढ़ाया और हिलाया, आपके सवाल भी बनें। आपकी परेशानी। आपकी आधारशिला। अगर ये सवाल पहले से ही आपके रास्ते का हिस्सा हैं, तो हमें उम्मीद है कि आप यहां कुछ प्रतिध्वनि पाएंगे। और अगर आप हमसे असहमत हैं, तो हमें उम्मीद है कि यह असहमति आपको ईमानदारी, गहराई और नए नजरिए के लिए प्रेरित करे, न कि दूरी, झुकाव या संदेह के लिए।

यह पुस्तक कभी चीजों को व्यवस्थित करने के लिए नहीं बनी। इसका मकसद यह दिखाना था कि चिंगारी में हमने क्या पैदा किया, हमने जो अनुभव किया, उसे सच के रूप में कैसे देखा, और उसे आपके पास देखभाल, इरादा और विस्तार के साथ पहुँचाया। इसलिए, जैसे ही हम इस पुस्तक के अंत की ओर बढ़ते हैं, हम वही भावना बनाए रखते हैं। हम कोई साफ–सुथरा निष्कर्ष देने नहीं आए हैं। एक कार्यक्रम के रूप में, चिंगारी खत्म हुआ, जैसे सभी कार्यक्रम खत्म होते हैं। यह खत्म हुआ गहन सीख, तेज अंतर्दृष्टि और और करने की प्रबल इच्छा के साथ। लेकिन यह खत्म नहीं हुआ सुनिश्चितता, अंतिमता या बंद करने के साथ।

इस अंतिम अध्याय में, बिना किसी निष्कर्ष को थमाए, हम केवल साझा कर सकते हैं कि हमने क्या सीखा और शायद उससे भी महत्वपूर्ण – हमें क्या अनसीखना पड़ा। आगे जो है वह कोई उत्तर नहीं, बल्कि विचारों का संग्रह है, और उनके साथ और सवाल भी हैं। यह फिर से एक धीरे आमंत्रण है कि स्पष्टता और अंतिमता एक नहीं हैं, और उन्हें एक साथ आने की जरूरत नहीं है। अंतिमता हमेशा

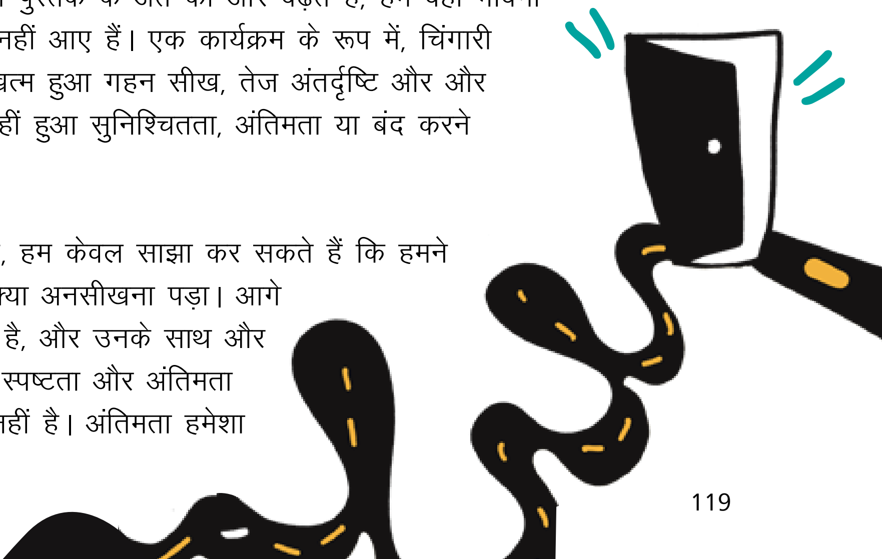

सच्चा ज्ञान नहीं देती, और उसकी अनुपस्थिति बुद्धिमत्ता की कमी नहीं होती। इरादे की स्पष्टता, भले ही निश्चित न हो, फिर भी काम करने, आगे बढ़ने और जुड़े रहने के लिए पर्याप्त हो सकती है।

तो ये हैं हमारी मुख्य सीख और विचारः

## विचार 1:

# नारीवादी सीखने–सीखाने की प्रक्रियाएँ जादू की छड़ी नहीं है

सच कहें तो, जब हम कोई भी क्षमता–निर्माण कार्यक्रम शुरू करते हैं, खासकर नारीवादी कार्यक्रम, हम अक्सर एक सरल आशा के साथ शुरू करते हैंः दुनिया को बदल देना, या कम से कम किसी की दुनिया बदल देना। इसमें कुछ भी भोला या गलत नहीं है। ऐसी दुनिया में, जो संघर्ष, विभाजन, असमानता और अभाव से भरी है, कोई भी कार्यक्रम जो इन वास्तविकताओं को चुनौती देने के लिए प्रतिबद्ध है, जरूरी और सही है। नारीवादी सीखने के स्थानों में, यह महत्वाकांक्षा अक्सर छिपी नहीं रहती। हम इसे खुले रूप में अपने साथ रखते हैं। हम चाहते हैं कि चीजें बेहतर हों। हम चाहते हैं कि बदलाव टिकाऊ हो।

लेकिन, चाहे यह आशा कितनी भी ताकतवर क्यों न हो, नारीवादी सीखना हर खाली जगह को भर नहीं सकता। यह कोई जादू की छड़ी नहीं है जो एक ही झपकी में अन्याय मिटा दे या जीवन को रातोंरात बदल दे। इसका मतलब यह नहीं कि हम सपने देखना बंद कर दें या अधिक न्यायपूर्ण दुनिया की हमारी कल्पना छोड़ दें। इसका मतलब यह है कि हमें मान लेना चाहिए कि नारीवादी सीखना उस दुनिया के बाहर नहीं होता जैसा कि वास्तव में है। वो तनाव, दबाव और विभाजन जिनमें हम रहते हैं, सीखने के स्थान के दरवाजे पर गायब नहीं हो जाते।

हम सभी, सहजकर्ता, प्रतिभागी, शोधकर्ता या मूल्यांकनकर्ता, अपने अपने संसारों के साथ इस जगह आते हैं, और उन संसारों का बोझ भी साथ लाते हैं। नारीवादी सीखने का कार्यक्रम हमारे शिक्षा या अभ्यास का हिस्सा बनने से बहुत पहले ही समाज ने हमें गहराई से और पीढ़ियों तक आकार दे दिया होता है। संरचनाएं, पूर्वाग्रह और अंदरूनी मान्यताएं सिर्फ इसलिए गायब नहीं हो जातीं कि हम कुछ कार्यशालाओं या प्रशिक्षणों में भाग लें।

इस सच्चाई को समझना कोई सीमा नहीं है। यह एक जरूरी शुरुआत है। यह हमें ईमानदारी से सोचने की जगह देता है कि बदलाव कैसा दिख सकता है, अभी क्या संभव है, और किन चीजों के लिए समय, धैर्य और लगातार प्रतिबद्धता की जरूरत होगी।

और फिर यह समझ आती है कि बदलाव की इच्छा का मतलब तुरंत या तात्कालिक रूप से परिवर्तन नहीं होता। यह सच है खासकर उन महिलाओं के लिए जो हाशियाकरण से गुजरती हैं, कठिन परिस्थितियों में जीती और काम करती हैं। खुले विरोध या विद्रोह के काम भारी कीमत ला सकते हैं, कभी–कभी गंभीर सजा तक। बाद में ऐसे पल बदलाव या सशक्तीकरण की प्रेरक कहानियों के रूप में प्रस्तुत हो सकते हैं, लेकिन हमें एक कठिन सवाल पूछना होगाः इन कहानियों की कीमत कौन चुका रहा है?

महिला नेता अपने रोजमर्रा के जीवन में अक्सर तीव्र प्रतिरोध का सामना करती हैं। उन्हें काम से विराम नहीं मिलता, घर की लगातार जिम्मेदारियाँ उठानी पड़ती हैं, और उच्च तनाव और पेशेवर जोखिम सहना पड़ता है। नारीवादी सीखने का कार्यक्रम महिलाओं को नेतृत्व में कदम रखने या अन्याय चुनौती देने के लिए प्रेरित कर सकता है, लेकिन अगर इसमें मजबूत और लगातार समर्थन प्रणाली – सामग्री या संसाधन सहित – नहीं है, तो यह अधूरा रह जाता है। बिना इस समर्थन के, महिलाओं को अकेले ही साहसिक विचार और बदलाव के सपने उठाने पड़ते हैं।

महिलाओं को अक्सर स्थिति को चुनौती देने या सत्ता के सामने सच बोलने के नतीजों का पूरा एहसास होता है। इसलिए, चाहे वे जो कुछ सीखती हैं उसे लागू करना चाहें, फिर भी वे कभी–कभी ऐसा कर ही नहीं सकतीं। उन्हें लगातार अपने कदम तौलने, समझौता करने और रणनीति बनाने की जरूरत होती है। यह धीमा और थकाऊ काम है। इसमें समय लगता है – कभी सालों, कभी जीवनभर।

नारीवादी सीखने के कार्यक्रमों से त्वरित परिणाम की उम्मीद करना या महिलाओं को तुरंत आदर्श नेता बनाने की चाह रखना वास्तविक नहीं है। बदलाव ऐसे नहीं होता। ऐसे कार्यक्रमों को ईमानदार उम्मीदें तय करनी चाहिए और व्यक्तिगत केंद्रित बदलाव और सशक्तीकरण की कहानियों के बहाव से दूर रहना चाहिए, जैसा कि हम इस पुस्तक में बार–बार कहते आए हैं।

यह व्यक्तिगत कहानियों के महत्व को कम करने के लिए नहीं कहा गया। वे मायने रखती हैं। लेकिन सिर्फ वे पर्याप्त नहीं हैं। ये कहानियां अक्सर पृष्ठभूमि और बाद की कहानी को मिटा देती हैं – जो जोखिम उठाए गए, जो कीमत चुकाई गई, और जो लंबा असर रहा। ऐसा करते हुए, ये केवल आंशिक और अधूरी तस्वीर पेश करती हैं कि नारीवादी सीखना वास्तव में क्या मांगता है और यह असल में क्या पैदा करता है।

## विचार 2

# जगह बनाना एक असमान प्रक्रिया है

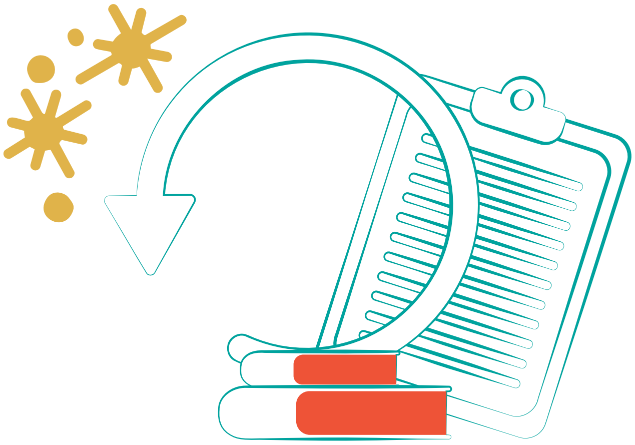

हम अक्सर नारीवादी सीखने के लिए "सुरक्षित" या "समावेशी" जगह बनाने की बात करते हैं, जैसे ये जगहें बस डिजाइन की जाएँ और तैयार हो जाएँ। हकीकत में, जगह बनाना इतना आसान या तयशुदा नहीं होता। यह असमान होता है, भावनात्मक रूप से थकाने वाला होता है, और कभी–कभी बहुत असहज भी। इसमें केवल 'अच्छे' इरादे या सावधान योजना से कहीं ज्यादा मेहनत चाहिए।

जब लोग इन जगहों में आते हैं, वे खाली स्लेट की तरह नहीं आते। जैसा कि पहले कहा गया, वे अपने पूरे जीवन के साथ आते हैं – अपने अनुभव, डर, वफादारी, महत्वाकांक्षा, हानि और सीमाओं के साथ। वे जाति, वर्ग, धर्म, जेंडर, यौनिकता, क्षेत्र, उम्र और काम की स्थितियों से आकार लिए होते हैं। वे सत्ता लेकर आते हैं, लेकिन साथ ही असुरक्षा भी। ये अंतर "नारीवादी" या "ग्रासरूट" लेबल के कारण गायब नहीं हो जाते।

एक सबसे बड़ी धारणा जो हमें अक्सर मिलती है, वह यह है कि ग्रासरूट पर काम करने का मतलब है साझा मूल्य या सामान्य नारीवादी समझ। यह धारणा शायद ही सही होती है। न्याय के लिए प्रतिबद्ध आंदोलनों में भी मतभेद, चुप्पियाँ, असमान संरचनाएँ और बहिष्करण होते हैं। लोग समान संघर्ष साझा कर सकते हैं और फिर भी विरोधाभासी मान्यताएँ रख सकते हैं। वे बदलाव चाहते हैं, लेकिन डरते हैं कि उस बदलाव की कीमत क्या होगी।

इसलिए, नारीवादी सीखने की जगहें अक्सर तनावपूर्ण होती हैं। बातचीत कठिन हो सकती है। भावनाएँ तीव्र हो सकती हैं। कुछ आवाजें प्रमुख होती हैं, जबकि कुछ पीछे हट जाती हैं। कुछ प्रतिभागी जगह की सीमाओं को परखते हैं, जबकि अन्य सतर्क रहते हैं, ध्यान से देखते हैं कि क्या सच में अनुमति है और क्या नहीं। ये पल असफलता के संकेत नहीं हैं। ये काम का हिस्सा हैं।

ऐसी जगहें बनाए रखना धैर्य, नम्रता और लगातार ध्यान मांगता है। यह गहरी सुनवाई मांगता है, सिर्फ कहे गए शब्दों की नहीं, बल्कि उन चीजों की भी जो अनकही रह जाती हैं। यह सहजकर्ताओं और आयोजकों से असहजता में बैठने, आसान सहमति की जल्दी में न आने, और यह पहचानने की मांग करता है कि कहीं नुकसान हुआ है, भले ही अनजाने में। यह मेहनत अक्सर अदृश्य रहती है और शायद ही मान्यता पाती है, फिर भी यह तय करती है कि जगह सच में मायने रखती है या केवल दिखावटी बनी रहती है।

जगह बनाना हमेशा असमान सत्ता संबंधों में होता है। कुछ प्रतिभागी जोखिम आसानी से ले सकते हैं। कुछ खुलकर बोल सकते हैं, असाइनमेंट जल्दी पूरा कर सकते हैं और बिना झिझक प्रतिक्रिया दे सकते हैं। दूसरों को हर शब्द सोच–समझकर बोलना पड़ता है। कुछ के लिए लगातार उपस्थित होना या असाइनमेंट पूरा करना संभव नहीं होता,

चाहे इच्छा हो। यह हमेशा उन प्रतिभागियों में निराशा पैदा करता है जो हमेशा उपस्थित, समयनिष्ठ और सक्रिय रहते हैं।

लेकिन जो दिखता है कि प्रतिबद्धता की कमी है, वह शायद व्यक्तिगत असफलता नहीं है। अक्सर यह लंबे समय से चले आए बहिष्करण, असुरक्षा और हिंसा से बने ढाँचागत प्रतिबंधों को दर्शाता है। असमान भागीदारी को व्यक्तिगत कमजोरी मानना इन वास्तविकताओं को दबा देता है और असमानता का बोझ उन पर डाल देता है जो पहले से ही सबसे ज्यादा जिम्मेदारी उठाते हैं। सभी से उम्मीद करना कि वे एक ही तरह से, समान आत्मविश्वास, खुलापन और सक्रियता दिखाएँ, उन संरचनाओं और अन्यायों को दोहराने का खतरा बनाता है जिन्हें ये जगहें चुनौती देने के लिए बनाई गई हैं।

इसका मतलब जवाबदेही छोड़ देना नहीं है। इसका मतलब है इसे अलग तरीके से रखना। जब तनाव पैदा होते हैं, खासकर जब प्रतिभागी दूसरों की चुप्पी या अनुपस्थिति से परेशान महसूस करते हैं, हमें कठिन सवाल पूछने चाहिए। जवाबदेही को जिज्ञासा, देखभाल और सतह के नीचे देखने की इच्छा के साथ संतुलित करना चाहिए। हमें खुद को और प्रतिभागियों को यह सोचने के लिए प्रेरित करना चाहिए कि अलग–अलग लोगों के लिए उपस्थिति अलग क्यों दिखती है। जब बदलाव बाहर लागू करना मुश्किल लगता है, तो सीखने की जगह खुद असमान वास्तविकताओं को परखने, सीखने और समझने की जगह बन सकती है।

जगह बनाने की असमानता को मान लेना नारीवादी सीखने को कमजोर नहीं करता। यह इसे मजबूत करता है। यह हमें याद दिलाता है कि संघर्ष सीखने का विरोध नहीं है, और देखभाल कोई नरम जोड़ नहीं है। यह एक राजनीतिक अभ्यास है, जो लगातार प्रयास और असहजता में बैठने का साहस मांगता है।

अपनी
ताकत
को
पहचानो
और
आगे
बढ़ते
रहो

## विचार 3

# समावेशन एक काम है

हमारे सबसे बड़े सबकों में से एक था कि समावेशन कितना आसानी से गलत समझा जा सकता है। अक्सर समावेशन को एक मूल्य या इरादे के रूप में बताया जाता है, जैसे खुले निमंत्रण देना या समावेशी भाषा का इस्तेमाल करना। लेकिन असल में, समावेशन की कीमत होती है। इसमें भावनात्मक, संगठनात्मक और आपसी मेहनत शामिल होती है। जब यह मेहनत मान्यता नहीं पाती, साझा नहीं होती या योजना में शामिल नहीं होती, तो समावेशन अक्सर केवल प्रतीकात्मक रह जाता है, वास्तविक नहीं।

सच्चा समावेशन समय मांगता है। इसमें लचीलापन, धैर्य और संसाधन चाहिए। यह ढाँचों, समय–सीमाओं और काम करने के तरीकों को बार–बार बदलने की मांग करता है। अगर इसे अपनाने की इच्छा न हो, तो सबसे अच्छी नीयत भी काम नहीं करेगी। समावेशन सिर्फ अच्छे इरादों से नहीं टिकता। इसके लिए सचेत योजना और लगातार प्रतिबद्धता चाहिए।

समावेशन मुश्किल भी है। कभी हम इसे अधिक कर देते हैं, कभी कम। संतुलन ढूँढना कठिन और अक्सर निराशाजनक होता है। यह उन लोगों के बीच तनाव पैदा कर सकता है जो कार्यक्रम को जोड़कर रख रहे हैं। फिर भी समावेशन केवल प्रशंसा या सराहना की उम्मीद में नहीं किया जा सकता। इसे बिना दिखावे, बिना महिमा बढ़ाए करना होता है। इसे सामान्य बनाना होता है, धीरे–धीरे प्रक्रियाओं, डिजाइन और उन जगहों में शामिल करना जिन्हें कभी समावेशन के लिए नहीं बनाया गया। यह काम धीमा, अपूर्ण और कभी पूरा नहीं होता, लेकिन इसे जानबूझकर और लगातार करना पड़ता है।

एक और चुनौती थी कि हम अक्सर प्रतिभागियों की जरूरतों को खुद ही तय कर लेते थे। हम चाहते थे कि वे सुरक्षित रूप से वर्कशॉप में पहुँचें, सत्रों में तकनीकी परेशानी न हो, असाइनमेंट समझें और समय पर समूह कार्य में भाग लें। हमारा मकसद सरल था, उन्हें पूरी तरह शामिल होने का मौका देना और उनकी जरूरतों का ध्यान रखना। लेकिन हमारी इस मेहनत में शायद हमने ज़्यादा कर दिया। हमने पूछने की बजाय अनुमान लगाया। अंततः हमें छोड़ना पड़ा। चाहे हमने कितना भी प्रयास किया, सबकुछ नियंत्रित नहीं कर सकते थे। यह हमें कठिन सवालों का सामना करने पर मजबूर करता है। क्या हम संरक्षण करने वाले बन गए? क्या हम समावेशन को किसी और सुरक्षा के रूप में बदल रहे थे?

हमने यह भी सीखा कि उपलब्धता या प्रतिक्रिया की उम्मीद न करना जरूरी है। अपनी उम्मीदों को मैनेज करना सहजकर्ता का अहम हिस्सा बन गया। हर कोई बराबर दिखाई नहीं देता या लगातार सक्रिय नहीं रहता। कुछ पल के लिए हट जाते हैं। कुछ चुप रहते हैं लेकिन ध्यान से

सुनते हैं। कुछ अनपेक्षित तरीकों से नेतृत्व में कदम रखते हैं। इन प्रतिक्रियाओं में कोई भी महत्वहीन नहीं थी। हर प्रतिक्रिया किसी खास संदर्भ, बाधा या विकल्प को दर्शाती थी।

इन विभिन्न प्रकार की भागीदारी को बिना जजमेंट के समझना हमें समावेशन की नई समझ देता है। यह याद दिलाता है कि समावेशन का मतलब समानता या लगातार दृश्यता नहीं है। इसका मतलब है ऐसी परिस्थितियाँ बनाना जहाँ अलग–अलग तरीकों से रहने, योगदान देने और नेतृत्व करने का सम्मान हो। जब समावेशन को एक पूरा हासिल किया गया लक्ष्य मानने की बजाय निरंतर काम माना जाता है, तो यह अधिक ईमानदार, ठोस और वास्तव में अधिक मायने रखने वाला बन जाता है।

## विचार 4

# समीक्षात्मक सोच, दृष्टिकोण और कौशल दोनों है

नारीवादी सीखने के स्थानों में अक्सर यह सवाल उठता है कि हम बहुत ज्यादा दृष्टिकोण बनाने पर ध्यान देते हैं और कौशल निर्माण पर कम। जब हमने चिंगारी शुरू किया, तो यह आरोप हमें जल्दी ही मिला। हम इसका जवाब देने की कोशिश करते, कभी–कभी इससे बचने की कोशिश भी। यह चिंता पूरी तरह गलत नहीं है। मजबूत दृष्टिकोण होने का मतलब यह नहीं कि व्यक्ति जमीन पर काम करने में सक्षम है।

लेकिन नारीवादी नेतृत्व और नारीवादी सीखना कभी पूर्णता या निपुणता की ओर नहीं चलते। यह अंतिम उत्तर या परिपूर्ण मॉडल का वादा नहीं करता। इसे समय, स्थान और वास्तविक जीवन आकार देता है। कोई सार्वभौमिक रूपरेखा नहीं है। जब हम दृष्टिकोण और कौशल के कथित अंतर पर बार–बार लौटते, तो स्पष्ट हुआ कि यह द्वैधता भ्रमपूर्ण है, खासकर उन ग्रासरूट महिलाओं की जिंदगियों में जो सत्ता के साथ रोजमर्रा की जुझारूपूर्ण बातचीत करती हैं।

समीक्षात्मक सोच अक्सर केवल दृष्टिकोण बनाने तक सीमित कर दी जाती है, जैसे यह केवल देखने का एक तरीका हो। लेकिन नारीवादी सीखने की जगहों में, यह उससे कहीं ज्यादा है। काम शुरू होता है एक नजरिया विकसित करने और दुनिया को अलग तरीके से देखने की इच्छा से। लेकिन यह नजरिया न तो निरपेक्ष है, न स्थिर। इसे संभालना, अभ्यास करना और लगातार नवीनीकृत करना पड़ता है। समीक्षात्मक सोचना मतलब लगातार मानसिक और भावनात्मक मेहनत करना है, जो दुनिया और खुद को समझने के तरीके को बदल देती है।

समीक्षात्मक सोच एक ही क्षण में नहीं आती। यह दोहराव और बार–बार लौटने से बढ़ती है – एक ही सवाल, विरोधाभास और अनुभव पर लौटकर। हर बार हमें वह देखने का मौका मिलता है जो पहले अनदेखा रहा, वह नाम देने का मौका जो पहले अनकहा रहा। ये बदलाव अक्सर धीरे–धीरे आते हैं, नाटकीय नहीं। फिर भी, हमारे जीवन और संदर्भों की सीमाओं में, ये धीरे–धीरे संभावनाओं का विस्तार करते हैं और आजादी के रास्ते खोलते हैं।

बेल हुक्स हमें याद दिलाती हैं कि इस प्रक्रिया में क्या दांव पर है। उन्होंने Teaching to Transgress में लिखा है कि उन्होंने दर्द से, अपने और अपने आसपास हो रही घटनाओं को समझने की आवश्यकता से, थ्योरी की ओर रुख किया और उसमें इलाज और समझ की जगह पाई। उनके शब्द यह दर्शाते हैं कि समीक्षात्मक सोच कोई बौद्धिक विलासिता नहीं है। उनके लिए जो उत्पीड़न के बोझ के साथ जीते हैं, समीक्षात्मक सोच दृष्टिकोण का सुधार नहीं, बल्कि जीवित रहने का तरीका है, जब दुनिया बदलना तुरंत संभव न हो।

इसलिए यह सोचना कि दृष्टिकोण निर्माण का एक स्पष्ट अंत बिंदु है, गलत है। दृष्टिकोण कोई ऐसा नहीं है जिसे हासिल कर हम आगे बिना बदलाव के ले जाएँ। इसे अभ्यास करना पड़ता है। जब हमने दृष्टिकोण को केवल संज्ञा नहीं बल्कि क्रिया के रूप में समझना शुरू किया, तो स्पष्ट हुआ कि समीक्षात्मक सोच दोनों – दृष्टिकोण और कौशल – के रूप में काम करती है।

यह अनुशासन, प्रतिबद्धता और प्रशिक्षण मांगती है। इसे सीखना, तेज करना और समय के साथ बनाए रखना जरूरी है। कोई दृष्टिकोण उस कौशल के बिना जीवित नहीं रह सकता जो इसे संभाले और अभ्यास करे। और कौशल, जब दृष्टिकोण से अलग हो, तो बहुत कम मायने रखते हैं।
आखिरकार, क्या यही कारण नहीं है कि हम नेतृत्व और नारीवादी नेतृत्व में अंतर करते हैं?

## विचार 5

# सीखने के लिए असहज होना जरूरी है

चिंगारी की हमारी यात्रा में एक सवाल बार–बार लौटता रहा – क्या सहजता को ही सुरक्षा समझना चाहिए? या सुरक्षा असहजता के बीच भी मौजूद हो सकती है? हम, सहजकर्ता के रूप में, इस तनाव में रहते हैं। हम लगातार सोचते हैं – क्या हम ज्यादा दबाव डाल रहे हैं? क्या अब रोकने का समय है? क्या हमने कुछ पेश किया जिसने किसी को असहज कर दिया, और उसे संभालने की जरूरत है? क्या हमें धीमा होना चाहिए, पल को नरम करना चाहिए, राहत प्रदान करनी चाहिए? ये हिचक नहीं, बल्कि जिम्मेदारी के संकेत हैं। सीखने की प्रक्रिया में, कमरे को पढ़ना, उसकी खामोशियों और बदलावों को महसूस करना, उसकी धड़कन को समझना और ध्यान से प्रतिक्रिया देना जरूरी है।

लेकिन ध्यान का मतलब कठिनाइयों से बचना नहीं है। इसका मतलब कठोरता को रोकना या असुविधाजनक सवालों से मुंह मोड़ना नहीं है। सीखना, खासकर नारीवादी सीखना, केवल सहमति या पुष्टि के लिए नहीं होता। यह हमेशा आसान या सुखद नहीं हो सकता। जब हम अपने लंबे समय से माने हुए विश्वासों, मूल्य और स्वयं की समझ पर सवाल उठाना शुरू करते हैं, तो असहजता अनिवार्य है।

यह असहजता तब आती है जब हम अपने फायदे और दूसरों के हाशियाकरण के बीच संबंध देखते हैं, यह मानते हैं कि हम सभी सत्ता के ढाँचों से प्रभावित हैं और कुछ को इससे ज्यादा लाभ होता है। यह पुराने विश्वासों और पीढ़ियों से चली आ रही आदतों को छोड़ने की मांग करता है। यह काम कभी आसान या हल्का नहीं होता।

अमिया श्रीनिवासन याद दिलाती हैं कि राजनीति आराम का मैदान नहीं है। अगर राजनीति वह जगह है जहाँ सत्ता पर सवाल उठाए जाते हैं और अन्याय की पहचान होती है, तो असहज होना यह नहीं दिखाता कि कुछ गलत हुआ। यह अक्सर यह संकेत है कि कुछ असली और जरूरी मुद्दों का सामना हो रहा है। असहजता तब आती है जब हमें असहमति, निराशा और नैतिक जटिलता के साथ बैठने के लिए कहा जाता है, जब हमें अपनी खुद की भागीदारी और जिम्मेदारियों को देखना पड़ता है, और जब हमें स्वीकार करना पड़ता है कि कोई भी परिणाम हर किसी को पूरी तरह संतुष्ट नहीं कर सकता।

यह सीखने के स्थानों में भी वैसा ही सच है जैसे राजनीतिक जीवन में, क्योंकि सीखना भी राजनीतिक है। जब आराम को सुरक्षा का पैमाना बना दिया जाता है, तो सीखना खोखला हो जाता है – सुधार और बदलाव के बजाय केवल पुष्टि की चिंता रहती है। सुरक्षा का मतलब चुनौती की गैर–मौजूदगी नहीं है। इसका मतलब है कि भले ही हम असहज हों, हमें अकेला नहीं छोड़ा जाएगा। हमें थामे रखा जाएगा जब हमारी निश्चितताओं पर सवाल उठे। हमें असहजता के साथ इतना समय रहने दिया जाएगा कि कुछ बदल सके।
अतः असहजता सीखने की दुश्मन नहीं है। यह अक्सर उसकी शुरुआत है।

## विचार 6

# नारीवादी नेतृत्व हर जगह एक जैसा नहीं दिखता

जब हमने चिंगारी शुरू की, हमारा मकसद था, और अब भी है, महिलाओं के मजबूत समुदाय को पनपाना – ऐसी महिला नेता जो नारीवादी मूल्यों के साथ नेतृत्व करें, सामूहिक रूप से अधिकारों के लिए आवाज उठाएं, अपने स्थान खुद बनाएं और दूसरों को भी प्रेरित करें। हमारी इच्छा रही है कि ये नारीवादी नेता सिस्टम और संस्थाओं को नए सिरे से आकार दें, सत्ता को अधिक समतामूलक बनाएं, और रास्ते में खुशी, देखभाल और विश्राम पाएँ।

लेकिन कार्यक्रम के मध्य में, हमने महसूस किया कि एक ही दृष्टि के कई रूप हो सकते हैं। पचास महिलाओं के समूह के साथ चलते हुए, जो अलग–अलग सामाजिक, आर्थिक, पीढ़ियों और भौगोलिक पृष्ठभूमि से थीं, यह बात और स्पष्ट हुई। हर प्रतिभागी के लिए नारीवादी नेतृत्व की एक ही दृष्टि बहुत अलग दिखती थी।

हम जिन महिलाओं के साथ काम कर रहे थे, वे केवल कार्यक्रम की प्रतिभागी नहीं थीं। वे प्रक्रिया की अर्थ–निर्माता थीं। नेतृत्व हमेशा औपचारिक या दिखाई देने वाला नहीं होता। यह अक्सर जीवन की सीमाओं, अवसरों और व्यक्तिगत परिस्थितियों में प्रकट होता है। एक प्रतिभागी ने अपने शहर के सरकारी विभाग के लिए कार्यस्थल में समानता पर सत्र आयोजित किया। दूसरी ने अपने समुदाय की महिलाओं के लिए जेंडर और पितृसत्ता पर बातचीत को सहज किया। एक युवा प्रतिभागी ने भेदभावपूर्ण कार्यस्थल छोड़कर बेहतर अवसरों के लिए दूसरे शहर का रुख किया। एक अन्य ने उच्च शिक्षा के लिए अपने काम को अस्थायी रूप से रोका। ये अलग–अलग फैसले, अलग होते हुए भी, नेतृत्व की प्रक्रिया को दर्शाते हैं।

शायद सबसे महत्वपूर्ण सीख यह थी कि नेतृत्व कई रूपों में प्रकट होता है। यह देखभाल हो सकती है, लगातार कोशिश, सवाल करना, जगह बनाए रखना, या कठिन समय में बोलने का साहस। नारीवादी नेतृत्व कोई एक मॉडल नहीं है जिसे दोहराया जाए – यह मूल्य, अभ्यास, रहने और दुनिया में कार्य करने का तरीका है, जो संदर्भ के अनुसार बदलता है, सीमाओं को मानता है, और व्यक्तिगत क्षमता का सम्मान करता है। एक ही दृष्टि कई तरीकों से फल सकती है, और हर रूप महत्वपूर्ण होता है। यही बहुलता, यही एक–आकार–में–फिट नहीं होने की क्षमता, नारीवादी नेतृत्व को लचीला, परिवर्तनकारी और गहराई से मानवीय बनाती है।

# और, यह एक समापन है!

किताब की पहली और आखिरी पंक्तियाँ अलग तरह की ईमानदारी मांगती हैं। वे पिछले सब अनुभवों का वजन और आगे क्या होगा, उसकी चुप अनिश्चितता साथ लाती हैं। इस किताब को लिखते समय, हमने चिंगारी को फिर से जिया। जैसा कि अनाइस निन ने लिखा है – "हम जीवन को दो बार चखने के लिए लिखते हैं।" वह दूसरी चख उतनी ही तीव्र थी जितनी पहली। यह स्पष्टता और उलझन, उत्साह और असहजता, कोमलता और दृढ़ता के पल वापस लाया।

लिखते समय, हम उन बातचीतों, खामोशियों, सवालों और जोखिमों पर लौटे जिन्होंने यात्रा को आकार दिया। हमने फिर से महसूस किया कि असहजता के साथ रहना, दूसरों के साथ सीखना और प्रक्रिया से बदलना क्या होता है। यह किताब उन छापों को रखती है। कई मायनों में, ये हमारे जीवन के टुकड़े अपने हाथों से मुक्त कर देती है।

जैसे ही यह आप तक पहुंचे, हम उम्मीद करते हैं कि यह आपको वहीं मिल जाए जहाँ आप हैं। यह आपको असहज करे और पुष्टि भी करे। यह पहचान के पल दे, नए सवाल जगाए, और गहरी सोच में आमंत्रित करे। अगर यह केवल चिंगारी ने हमारे जीवन में जो चुनौती, जीवंतता और गहराई लाई, उसका थोड़ा हिस्सा भी आपके पास लाए, तो यह यात्रा, अपनी सारी उलझन और अर्थ के साथ, साझा करने लायक रही।

## प्रस्तावित अध्ययन सामग्रीः

- Hooks, bell. Teaching to Transgress: Education as the Practice of Freedom. New York: Routledge, 1994.
- Nin, Anaïs. The Diary of Anaïs Nin, Vol. 4: 1944–1947. New York: Harcourt Brace Jovanovich, 1974.
- Oliver, Mary. Upstream: Selected Essays. New York: Penguin Press, 2016.
- Srinivasan, Amia. The Right to Sex: Feminism in the Twenty-First Century. London: Bloomsbury Publishing, 2021.

# शब्दकोष

| | |
|---|---|
| **ऐबेलिस्म** | ऐबेलिस्म का मतलब है वह तरीका जिसमें समाज, उसके ढाँचे, और रोजमर्रा के व्यवहार कुछ तरह के शरीर और दिमाग को "सामान्य" और बेहतर मानते हैं, और बाकी को कम सक्षम या कम महत्वपूर्ण समझते हैं। यह हमारी भाषा, इमारतों, परिवहन, नियमों और संस्थाओं में दिखती है – जो ज़्यादातर गैर–विकलांग (able & bodied) लोगों को ध्यान में रखकर बनाए जाते हैं।<br>उदाहरण के लिए, अगर कोई व्यक्ति व्हीलचेयर का इस्तेमाल करता है, या किसी की लंबाई कम है, या कोई मशीन के पास खड़े नहीं हो सकता – तो वह उस मशीन को अपने आप इस्तेमाल नहीं कर पाएगा। ऐसे में वह मशीन एक तरह का "रोकने वाला दरवाजा" बन जाती है। इसी वजह से, विकलांग लोग अक्सर शिक्षा, काम, स्वास्थ्य सेवाओं और सार्वजनिक जीवन तक पहुँच नहीं बना पाते, या उन्हें बहुत ज़्यादा मेहनत करनी पड़ती है।<br>संयुक्त राष्ट्र के विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर कन्वेंशन (CRPD, 2006) के अनुसार, विकलांगता तब पैदा होती है जब किसी व्यक्ति की शारीरिक या मानसिक स्थिति, समाज में मौजूद रुकावटों से टकराती है – और ये रुकावटें उन्हें बराबरी से भाग लेने से रोकती हैं। ऐबेलिस्म इन रुकावटों को बनाता और बनाए रखता है, क्योंकि यह तय करता है कि किसकी जरूरतें मायने रखती हैं और किसकी अनदेखी की जाती है। जैसे, अगर किसी सरकारी दफ्तर के प्रवेश पर लंबी सीढ़ियाँ हैं, लेकिन रैंप या लिफ्ट नहीं है, तो यह एक साफ संदेश देता है कि व्हीलचेयर इस्तेमाल करने वाले लोगों को यहाँ आने के बारे में सोचा ही नहीं गया है।<br>भारत में विकलांगता अधिकार आंदोलनों के अनुसार, ऐबेलिस्म वह भेदभाव है जो इस सोच से आता है कि विकलांगता एक "समस्या" है जिसे ठीक करना है – जबकि असल में यह समाज की जिम्मेदारी है कि वह रुकावटों को हटाए और सबके लिए गरिमा और पहुँच सुनिश्चित करे। |
| **ब्राह्मणवाद**<br> | ब्राह्मणवाद एक विचारधारा और सत्ता का ढांचा है, जो ब्राह्मणों और उच्च जातियों की सत्ता को "ऊपर" और "बेहतर" मानता है। यह समाज को जाति की दर्जाबंदी, शुद्धता–अशुद्धता के नियमों, और ज्ञान पर नियंत्रण के आधार पर व्यवस्थित करता है।<br>ब्राह्मणवादी सत्ता का मतलब है – यह तय करने की ताकत कि क्या शुद्ध है और क्या अशुद्ध, क्या सही है और क्या गलत, और कौन–सा जीवन "ठीक" माना जाएगा। यह तय करता है कि किन समुदायों को सम्मान और गरिमा मिलेगी, और किन्हें "नीचा" या "अशुद्ध" समझा जाएगा। इस व्यवस्था में, ऊपर की जातियों को शिक्षा, जमीन, मंदिरों और नेतृत्व तक आसान पहुँच मिलती है, जबकि दलित–बहुजन समुदायों को बहिष्करण, कलंक और हिंसा का सामना करना पड़ता है। |

| | |
|---|---|
| | यह यह भी तय करता है कि किस तरह के काम को सम्मान मिलेगा और किसे “नीचा” या गंदा समझा जाएगा। जैसे – सफाई करना, कचरा उठाना, या मृत जानवरों को हटाना – ये काम ऐतिहासिक रूप से दलित समुदायों पर थोपे गए, और फिर इन्हीं कामों के आधार पर उन्हें बराबरी से वंचित किया गया।<br>ब्राह्मणवाद ज्ञान तक पहुँच को भी नियंत्रित करता है। इतिहास में कई जातियों को पढ़ने–लिखने और धार्मिक शिक्षा से दूर रखा गया, ताकि ज्ञान और सत्ता कुछ ही लोगों तक सीमित रहे। भारत के एंटी–जाति विचारकों ने दिखाया है कि ब्राह्मणवाद धर्म और संस्कृति के सहारे बना रहता है। यह रोजमर्रा की जिंदगी में हमारे त्योहारों, परंपराओं, खाने–पीने के नियमों, छूने–छूने के नियमों, और “इज्जत” के विचारों में दिखता है।<br>यह सिर्फ धर्म तक सीमित नहीं है – यह एक ऐसा सत्ता ढांचा है जो हमारी संस्कृति, मूल्यों और रोज के व्यवहार को नियंत्रित करता है। आज के समय में भी, जब ऊँची जातियों के बोलने, पहनने, खाने या जीने के तरीकों को “सभ्य” माना जाता है, और दलित–बहुजन तरीकों का मजाक उड़ाया जाता है – तब भी ब्राह्मणवाद काम कर रहा होता है। इसी तरह, जब “मेरिट” (योग्यता) की भाषा का इस्तेमाल करके जाति विशेष के फायदे को बचाया जाता है, जबकि बराबरी के मौके कभी रहे ही नहीं – तब भी ब्राह्मणवाद दिखता है।<br>डॉ. बी.आर. आंबेडकर ने जाति को “सीढ़ी जैसी असमानता” (graded inequality) बताया – जहाँ हर जाति किसी से ऊपर और किसी से नीचे होती है। यह व्यवस्था लोगों को असमानता को सामान्य मानने के लिए तैयार करती है, और दबे हुए समूहों के बीच एकजुटता बनने से रोकती है। उन्होंने यह भी बताया कि जाति को बनाए रखने के लिए शादी के सख्त नियम (अपने ही जाति में विवाह) लागू किए जाते हैं। उदाहरण के लिए, अंतर–जातीय विवाह का अक्सर विरोध होता है, और ऐसे जोड़ों को बहिष्कार, धमकी या हिंसा का सामना करना पड़ता है।<br>नारीवादी विचारक उमा चक्रवर्ती बताती हैं कि ब्राह्मणवाद, पितृसत्ता के साथ मिलकर काम करता है – जिसे “ब्राह्मणवादी पितृसत्ता” कहा जाता है। इसमें महिलाओं की यौनिकता, उनके रिश्तों और शादी पर नियंत्रण करके जाति की सीमाओं को बनाए रखा जाता है। इसमें महिलाओं के शरीर और व्यवहार को जाति की “इज्जत” से जोड़ दिया जाता है। जैसे, लड़कियों की आवाजाही, दोस्ती, कपड़े और शिक्षा पर पाबंदियाँ लगाना, या उनकी पसंद के रिश्तों पर निगरानी रखना। अगर महिलाएँ इन नियमों का विरोध करती हैं, तो सजा अक्सर बहुत कठोर होती है – क्योंकि ब्राह्मणवाद महिलाओं पर नियंत्रण के जरिए ही जाति व्यवस्था को बनाए रखता है। |
| जाति | जाति एक सामाजिक दर्जाबंदी का ढांचा है, जिसमें लोगों की स्थिति, काम और सामाजिक मूल्य जन्म के आधार पर तय कर दिए जाते हैं। यह तय करता है कि किसे जमीन, शिक्षा, संसाधन, सम्मान और सुरक्षा मिलेगी – और किसे नहीं। जाति शुद्धता–अशुद्धता के नियमों, अपने ही जाति में शादी (endogamy), और सामाजिक दूरी के जरिए काम करती है – जिसमें छुआछूत जैसी प्रथाएँ भी शामिल हैं। डॉ. बी.आर. आंबेडकर ने कहा था कि जाति सिर्फ काम का बँटवारा नहीं है, बल्कि “काम करने वालों का बँटवारा” है – जहाँ लोगों को ऊँचा और नीचा माना जाता है। आज भी जाति नए रूपों में मौजूद है – जैसे घर किराए पर देने में भेदभाव, स्कूलों और काम की जगहों पर असमानता, और दलितों व आदिवासियों के खिलाफ हिंसा – खासकर तब, जब वे अपने अधिकार और गरिमा की बात करते हैं। |

### क्रिटिकल पेडागॉजी

क्रिटिकल पेडागॉजी सीखने–सीखाने (सीखना–सीखाना) की एक ऐसी पद्धति है जो शिक्षा को आजादी, गरिमा और सामाजिक न्याय से जोड़ती है। इसका मकसद है कि सीखने वाले लोग अपने जीवन के बारे में सोचें, सवाल पूछें और समझें कि समाज में सत्ता कैसे काम करती है।

इस पद्धति में सीखने वाले सिर्फ "छात्र" नहीं माने जाते, बल्कि ऐसे लोग माने जाते हैं जिनके पास अपना अनुभव और अपना ज्ञान होता है। यहाँ सीखना एक साझा (सामूहिक) प्रक्रिया बन जाता है, न कि सिर्फ एक तरफ से जानकारी देने का काम।

नारीवादी विचारक बेल हुक्स इसे "engaged pedagogy" के रूप में समझाती हैं – जहाँ सीखना सिर्फ दिमाग तक सीमित नहीं रहता, बल्कि व्यक्ति के पूरे विकास से जुड़ता है, जैसे आत्मविश्वास, अपनी बात रखना और सोचने–समझने की क्षमता। उनके अनुसार, कक्षा ऐसी जगह बन सकती है जहाँ लोग बातचीत और भागीदारी के जरिए सवाल करना सीखें और आजादी को महसूस करें।

जब सीखने वाले सुरक्षित महसूस करते हैं, अपनी बात कह पाते हैं और ज्ञान को अपनी रोजमर्रा की जिंदगी से जोड़ पाते हैं – तभी शिक्षा सच में अर्थपूर्ण बनती है।

क्रिटिकल पेडागॉजी लोकतंत्र और सामूहिक जिम्मेदारी को भी मजबूत करने पर ध्यान देती है। यह लोगों में यह क्षमता बनाती है कि वे अन्याय को पहचान सकें और उसके खिलाफ खड़े हो सकें।

नारीवादी आंदोलनों में यह पद्धति इस सोच को चुनौती देती है कि ज्ञान सिर्फ किताबों या "एक्सपर्ट्स" से आता है। इसके बजाय, यह अनुभव, एकजुटता और संघर्ष को भी ज्ञान का हिस्सा मानती है।

यह पद्धति यह समझने में मदद करती है कि जेंडर, जाति, वर्ग, नस्ल और दर्जाबंदी के अलग–अलग ढाँचे मिलकर भेदभाव कैसे पैदा करते हैं, और लोग मिलकर बदलाव कैसे ला सकते हैं।

भारत में यह पद्धति खासतौर पर एंटी–जाति और नारीवादी काम में महत्वपूर्ण है। यह ब्राह्मणवाद और पितृसत्ता को चुनौती देती है, दलित–बहुजन समुदायों में आत्मविश्वास बढ़ाती है, और सामूहिक नेतृत्व को मजबूत करती है।

उदाहरण के लिए, अधिकारों को सिर्फ कानूनी शब्दों के रूप में पढ़ाने के बजाय, यह पद्धति सीखने वालों से कहती है कि वे अपने अनुभवों से जोड़कर समझें – जैसे स्कूल में असमान व्यवहार, सार्वजनिक जगहों पर बहिष्करण, स्वास्थ्य सेवाओं में भेदभाव, या काम की जगहों पर हिंसा।

| | |
|---|---|
| विकलांगता | विकलांगता का मतलब है – लंबे समय तक रहने वाली शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक या इंद्रिय से जुड़ी स्थितियाँ, और उनके साथ–साथ वे सामाजिक और पर्यावरण से जुड़ी रुकावटें जो लोगों को पूरी तरह भाग लेने से रोकती हैं। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार, विकलांगता तब सामने आती है जब किसी व्यक्ति की स्थिति और समाज में मौजूद रुकावटें मिलकर उन्हें बराबरी से भाग लेने से रोकती हैं। यह समझ हमें यह सिखाती है कि समस्या सिर्फ व्यक्ति में नहीं है, बल्कि समाज की जिम्मेदारी भी है कि वह रुकावटों को हटाए। भारत में विकलांगता अधिकार का काम यह मानता है कि विकलांगता इंसानी विविधता का हिस्सा है, और गरिमा, पहुँच (accessibility) और समान अवसर – समावेशन के लिए बहुत जरूरी हैं। |
| समानता | समानता का मतलब है कि हर व्यक्ति की **गरिमा, अधिकार और मूल्य बराबर हैं,** और कानून व संस्थाएँ सभी के साथ एक जैसा व्यवहार करें।<br>मानवाधिकार के नजरिए से, समानता का मतलब है कि किसी के साथ **जेंडर, जाति, धर्म, विकलांगता, यौनिकता, वर्ग** या किसी भी पहचान के आधार पर भेदभाव न हो। इसका मतलब है कि सभी लोगों को अवसर, सेवाएँ और आजादी बराबरी से मिलनी चाहिए।<br>भारत में, संविधान में समानता को बहुत महत्वपूर्ण माना गया है।<br>◆ अनुच्छेद 14 कहता है कि सभी लोग कानून के सामने बराबर हैं।<br>◆ अनुच्छेद 15 कहता है कि राज्य किसी के साथ भेदभाव नहीं कर सकता।<br>लेकिन व्यवहार में समानता का मतलब सिर्फ नियम बनाना नहीं है – बल्कि यह भी जरूरी है कि हर व्यक्ति को बराबर सम्मान मिले, और अगर भेदभाव या हिंसा हो, तो उसकी जवाबदेही तय हो। |
| समता | समता का मतलब है **न्यायपूर्ण व्यवहार** (fairness)। यह मानती है कि सभी लोग एक ही जगह से शुरू नहीं करते, क्योंकि समाज में पहले से ही असमानताएँ मौजूद हैं। इसलिए, सिर्फ सभी के साथ एक जैसा व्यवहार करने से बराबर परिणाम नहीं मिलते। समता का ध्यान इस बात पर होता है कि जो लोग हाशियाकरण या बहिष्करण का सामना करते हैं, उन्हें अतिरिक्त संसाधन, समर्थन और अवसर मिलें – ताकि वे बराबरी से भाग ले सकें। जैसे – पहुँच (accessibility), आरक्षण, सुरक्षित कार्यस्थल, और हिंसा से सुरक्षा जैसे उपाय – ये सब समता का हिस्सा हैं। इसका उद्देश्य है कि **गरिमा और अवसर सिर्फ कागज पर नहीं, बल्कि रोजमर्रा की जिंदगी में सच बनें।** |

| | |
|---|---|
| **बहिष्करण** | बहिष्करण का मतलब है वह प्रक्रिया, जिसके जरिए कुछ लोगों या समुदायों को उन जगहों, सेवाओं और अवसरों से बाहर रखा जाता है, जो दूसरों के लिए उपलब्ध हैं। यह सीधे तौर पर भी हो सकता है – जैसे किसी को प्रवेश न देना, सेवा से मना करना, या डर और हिंसा का इस्तेमाल करना। लेकिन यह छुपे हुए तरीकों से भी होता है – जैसे भाषा, नियम, ढाँचे या डिजाइन ऐसे होना, जो कुछ लोगों के लिए भाग लेना मुश्किल बना दें।<br>शिक्षा में बहिष्करण अक्सर सामाजिक पृष्ठभूमि, जेंडर, भाषा, गरीबी, विकलांगता या अन्य असमानताओं से जुड़ी रुकावटों के कारण होता है। भारत में बहिष्करण अक्सर उन सिस्टम्स के जरिए होता है, जिन्हें "सामान्य" माना जाता है। जैसे – एक सरकारी स्कूल यह मानकर चलता है कि हर परिवार के पास समय, पढ़ाई की समझ, जरूरी कागजात, फोन और स्थायी घर है। लेकिन प्रवासी परिवारों, एकल माता–पिता वाले घरों या दिहाड़ी मजदूरी करने वाले परिवारों के बच्चों के लिए यह संभव नहीं होता – और वे धीरे–धीरे स्कूल से बाहर हो सकते हैं।<br>इसी तरह, कई सरकारी योजनाओं में बायोमेट्रिक, बार–बार दफ्तर जाना, या दस्तावेज की जरूरत होती है – जो गरीब और हाशिए पर रहने वाले लोगों के पास नहीं होते। यहाँ कोई खुलकर "ना" नहीं कहता, लेकिन सिस्टम की शर्तें ही लोगों को बाहर कर देती हैं।<br>बहिष्करण भेदभाव के जरिए भी होता है – खासकर दलित, आदिवासी, मुस्लिम, विकलांग और ट्रांसजेंडर लोगों के साथ। जैसे – अलग बैठाना, पानी के स्रोतों तक बराबर पहुँच न देना, स्वास्थ्य सेवाओं में अपमानजनक व्यवहार, या कुछ कामों और संस्थानों में जाने से रोकना। स्कूलों में भी, हाशिए के समुदायों के बच्चों को अलग–थलग करना, या अपमानजनक टिप्पणियाँ करना – उन्हें बिना औपचारिक रूप से निकाले भी बाहर कर सकता है।<br>ये उदाहरण दिखाते हैं कि बहिष्करण सिर्फ किसी चीज की कमी नहीं है – बल्कि यह इस बात से जुड़ा है कि हमारे सिस्टम कैसे बनाए (डिजाइन) किए गए हैं। |
| **नारीवाद** | नारीवाद एक **राजनैतिक और नैतिक सोच है,** जो महिलाओं और जेंडर विविध लोगों की आजादी, गरिमा और समानता के लिए काम करती है। यह **पितृसत्ता** को चुनौती देता है – यानी वे सामाजिक और संस्थागत ढाँचे जो पुरुषों और उनके नियंत्रण को ऊपर रखते हैं, और परिवार, समुदाय, काम की दुनिया और सार्वजनिक जीवन में असमान सत्ता बनाते हैं।<br>नारीवाद यह सुनिश्चित करना चाहता है कि महिलाएँ और जेंडर विविध लोग बिना हिंसा, दबाव और भेदभाव के जी सकें, और उन्हें शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, संसाधनों, सार्वजनिक जगहों और नेतृत्व में बराबर पहुँच मिले। विचारक बेल हुक्स नारीवाद को एक ऐसे आंदोलन के रूप में समझाती हैं जो सेक्सिज्म (लिंग आधारित भेदभाव), शोषण और दमन को खत्म करना चाहता है। इसका मतलब है कि नारीवाद सिर्फ एक व्यक्तिगत राय या पहचान नहीं, बल्कि एक सामूहिक संघर्ष है। |

| | |
|---|---|
| | कमला भसीन के अनुसार, नारीवाद महिलाओं की मुक्ति और समानता की राजनीति है, जो रोजमर्रा की जिंदगी में महिलाओं के शरीर, काम, आवाजाही और फैसलों पर नियंत्रण को चुनौती देता है।<br>नारीवाद ऐसे सुरक्षित और समावेशी (समावेशी) स्थान भी बनाता है, जहाँ महिलाएँ और जेंडर विविध लोग अपनी बात रख सकें, संगठित हो सकें और नेतृत्व कर सकें।<br>सारा अहमद के अनुसार, नारीवाद सिर्फ सोचने का तरीका नहीं, बल्कि जीने और रोजमर्रा में अभ्यास करने की चीज है – यानी असमानता को पहचानना और उसे सामान्य मानने से इंकार करना।<br>इस तरह, नारीवाद सोचने और काम करने – दोनों का तरीका है, जो सामूहिक ताकत, साझा नेतृत्व और एकजुटता पर आधारित है। |
| **जेंडर बाइनरी** | जेंडर बाइनरी का मतलब है यह मान लेना कि सिर्फ दो ही जेंडर होते हैं – पुरुष और महिला – और हर व्यक्ति को इन्हीं में से किसी एक में पूरी तरह फिट होना चाहिए। यह जेंडर को जन्म के समय तय किए गए सेक्स से जोड़ देता है, और यह उम्मीद करता है कि हर व्यक्ति तयशुदा भूमिकाओं, व्यवहार और दिखावे के अनुसार चले।<br>इस सोच में "मर्दाना" और "स्त्रीत्व" को एक–दूसरे के बिल्कुल उलट और अलग माना जाता है। मर्दाना गुणों में अक्सर ताकत, हिम्मत, नियंत्रण, नेतृत्व और कमाने की जिम्मेदारी जोड़ी जाती है। वहीं स्त्रीत्व गुणों में नरमी, देखभाल, आज्ञाकारिता, भावुकता और "समायोजन" को जोड़ा जाता है। ये सब असल में सामाजिक अपेक्षाएँ हैं, लेकिन जेंडर बाइनरी इन्हें नियम बना देता है। जो लोग इन नियमों में फिट नहीं होते, उन्हें अक्सर सजा, मजाक या नियंत्रण का सामना करना पड़ता है।<br>यह यह भी तय करता है कि लोग कैसे दिखें और व्यवहार करें – जिसे जेंडर एक्सप्रेशन कहा जाता है, जैसे कपड़े, बाल, आवाज और हाव–भाव। उदाहरण के लिएः<br>◆ अगर कोई लड़का भावुक है या "लड़कियों जैसे" कपड़े पहनना पसंद करता है, तो उसका मजाक उड़ाया जा सकता है।<br>◆ अगर कोई लड़की खुलकर बोलती है या "लड़कों जैसे" कपड़े पहनती है, तो उसे "अच्छी लड़की नहीं" कहा जा सकता है। |

| | |
|---|---|
| | जेंडर बाइनरी रोजमर्रा की जिंदगी में काम और जिम्मेदारियाँ भी तय करता है। जैसे – पुरुषों से कमाने और फैसले लेने की उम्मीद की जाती है, और महिलाओं से घर का काम, बच्चों और बुजुर्गों की देखभाल करने की। यह असमानता को "स्वाभाविक" बना देता है। यह स्कूल, परिवार और अन्य संस्थाओं में भी दिखता है – जैसे ड्रेस कोड, या घर के कामों का बँटवारा।<br>हालाँकि, कई समाजों में लंबे समय से दो से ज़्यादा जेंडर पहचाने जाते रहे हैं, जैसे ट्रांसजेंडर और नॉन–बाइनरी पहचानें। इसलिए जेंडर एक सामाजिक गढ़न है – जो समय और समाज के साथ बदल सकता है। जेंडर बाइनरी को चुनौती देना, उन लोगों के लिए गरिमा और अधिकार सुनिश्चित करता है जो इन सीमाओं में फिट नहीं होते, और साथ ही महिलाओं और पुरुषों – दोनों को अधिक स्वतंत्रता देता है। |
| जेंडर के नियम–कायदे | जेंडर के नियम–कायदे वे सामाजिक अपेक्षाएँ हैं, जो तय करती हैं कि महिलाएँ, पुरुष, लड़कियाँ और लड़के कैसे व्यवहार करें, क्या पहनें, कैसे बोलें और क्या काम करें। ये तय करते हैं कि क्या "सही" माना जाएगा, और जो लोग इनसे अलग चलते हैं, उन्हें अक्सर रोका या सजा दी जाती है। ये नियम शिक्षा, धर्म, कानून और मीडिया जैसे ढाँचों के जरिए मजबूत किए जाते हैं।<br>जेंडर के नियम–कायदे लोगों की आवाजाही, सुरक्षा, काम और नेतृत्व को प्रभावित करते हैं – और अक्सर महिलाओं और जेंडर विविध लोगों को सीमित करते हैं। इन नियमों को बदलना जरूरी है ताकि समानता, साझा देखभाल और अपनी पसंद से जीने की आजादी मिल सके। |
| समावेशन | समावेशन का मतलब है ऐसे माहौल बनाना जहाँ हर व्यक्ति **गरिमा, सुरक्षा और बराबर अवसर** के साथ पूरी तरह भाग ले सके। यह सिर्फ मौजूद होने की बात नहीं है, बल्कि यह सुनिश्चित करने की बात है कि लोग उस जगह को अपना महसूस करें, समझ सकें, अपनी बात रख सकें और फैसलों में भाग ले सकें।<br>समावेशन तब होता है जब सिस्टम खुद बदलता है – न कि लोग चुपचाप खुद को ढालने के लिए मजबूर हों। उदाहरण के लिए, स्कूल में समावेशन का मतलब है:<br>◆ अलग–अलग सीखने की जरूरतों के हिसाब से पढ़ाने के तरीके बदलना<br>◆ भाषा और सामग्री को आसान और समझने योग्य बनाना<br>◆ विविध अनुभवों को शामिल करना<br>◆ भेदभाव और अपमान को रोकना<br>इसी तरह, काम की दुनिया में समावेशन का मतलब है कि किसी की पहचान या पृष्ठभूमि उसके अवसरों में रुकावट न बने। |

| | |
|---|---|
| **इंटरसेक्शनलिटी** | इंटरसेक्शनलिटी एक तरीका है यह समझने का कि किसी व्यक्ति की अलग–अलग पहचानें – जैसे जेंडर, जाति, वर्ग – मिलकर उसके अनुभव को कैसे प्रभावित करती हैं। यह बताता है कि असमानता के अलग–अलग ढाँचे (जैसे जेंडर, जाति, वर्ग) अलग–अलग नहीं, बल्कि एक–दूसरे से जुड़े होते हैं और साथ मिलकर काम करते हैं। इसका मतलब है कि जो लोग एक से ज़्यादा तरह के हाशियाकरण का सामना करते हैं, उनके अनुभव अलग और खास होते हैं।<br>उदाहरण के लिए, दलित महिलाओं का अनुभव सिर्फ "जेंडर" या सिर्फ "जाति" से नहीं समझा जा सकता – बल्कि दोनों मिलकर उनकी स्थिति को तय करते हैं। भारतीय संदर्भ में, यह समझना जरूरी है कि मुस्लिम, दलित या आदिवासी महिलाओं के अनुभव सिर्फ "ज़्यादा कठिन" नहीं हैं, बल्कि अलग तरह से बने होते हैं। इसलिए, इंटरसेक्शनलिटी सिर्फ समस्याओं की गिनती नहीं है – बल्कि यह गहराई से समझने का तरीका है कि अलग–अलग सत्ता के ढाँचे एक साथ मिलकर कैसे काम करते हैं। |
| **ज्ञान और सत्ता** | "ज्ञान और सत्ता" का मतलब है कि ज्ञान सिर्फ जानकारी नहीं है – यह नियंत्रण से भी जुड़ा होता है। जो लोग यह तय करते हैं कि क्या ज्ञान माना जाएगा, कौन ज्ञान बना सकता है, और किसे ज्ञान तक पहुँच मिलेगी – वही समाज में सत्ता और दर्जाबंदी को भी तय करते हैं। इस तरह, ज्ञान पर नियंत्रण एक शक्तिशाली तरीका बन जाता है असमानता को बनाए रखने का।<br>भारत में, ब्राह्मणवाद ने लंबे समय तक ज्ञान को अपने नियंत्रण में रखा – जैसे धार्मिक ग्रंथ, संस्कृत भाषा और शिक्षा संस्थाएँ – ताकि ज्ञान सिर्फ ऊँची जातियों तक सीमित रहे। इससे दलित, आदिवासी और महिलाओं को न सिर्फ शिक्षा से दूर रखा गया, बल्कि उनके अनुभवों और ज्ञान को कमतर भी माना गया।<br>आज भी यह कई आधुनिक रूपों में जारी है – जैसे अकादमिक संस्थानों, मीडिया और नीतियों में ऊँची जातियों के नजरिए को "सामान्य" या "सही" मान लिया जाता है, जबकि बाकी लोगों को अपनी विश्वसनीयता साबित करनी पड़ती है।<br>नारीवादी सोच इस व्यवस्था को चुनौती देती है। यह कहती है कि ज्ञान सिर्फ किताबों या "तटस्थ" सोच से नहीं आता, बल्कि अनुभव, देखभाल, यादें और सामूहिक समझ भी ज्ञान के स्रोत हैं। यह इस बात पर सवाल उठाती है कि किसकी आवाज सुनी जाती है, किस पर भरोसा किया जाता है, और सीखना कैसे होता है। इस तरह, नारीवाद ज्ञान को लोकतांत्रिक बनाने की कोशिश करता है – यानी ज्ञान को साझा (सामूहिक) संसाधन बनाना, जो न्याय और आजादी की दिशा में काम करे, न कि नियंत्रण और दबाव का साधन बने। |

| | |
|---|---|
| पद्धति | पद्धति का मतलब है – सीखना–सीखाना कैसे होता है। यह सिर्फ यह नहीं है कि क्या पढ़ाया जा रहा है, बल्कि यह भी है कि कैसे पढ़ाया जा रहा है, कौन पढ़ा रहा है, कौन सीख रहा है, और उनके बीच का रिश्ता कैसा है। पद्धति में वे तरीके, मूल्य और मान्यताएँ शामिल होती हैं जो कक्षा, प्रशिक्षण या समुदाय जैसे सीखने के स्थानों को आकार देती हैं।<br>पद्धति हमेशा **सत्ता** से जुड़ी होती है। पारंपरिक तरीकों में शिक्षक को "सब जानने वाला" माना जाता है और सीखने वालों से उम्मीद होती है कि वे चुपचाप सुनें, याद करें और मानें। इससे सवाल पूछना कम हो जाता है, लोगों के अपने अनुभवों को महत्व नहीं मिलता, और सीखना दूर या डराने वाला लग सकता है – खासकर उनके लिए जो पहले से ही बहिष्करण का सामना कर चुके हैं।<br>एक अधिक समावेशी पद्धति में सीखना एक **साझा (सामूहिक) प्रक्रिया** होता है। इसमें बातचीत, भागीदारी और आपसी सम्मान को महत्व दिया जाता है। यहाँ सीखना नियंत्रण का नहीं, बल्कि देखभाल और जिम्मेदारी का काम बन जाता है। |
| प्रोटेक्शनिज्म | प्रोटेक्शनिज्म का मतलब है कुछ लोगों को "सुरक्षित" रखने के नाम पर उन्हें जोखिम, जिम्मेदारियों या चुनौतियों से दूर रखना। ऊपर से यह देखभाल जैसा लग सकता है, लेकिन असल में यह लोगों की **आजादी, अवसर और भागीदारी** को सीमित कर देता है। यह मानकर चलता है कि कुछ लोग अपने फैसले खुद नहीं ले सकते – और यही सोच असमानता को कम करने के बजाय और बढ़ा देती है।<br>जैसे – महिलाओं को "सुरक्षा" के नाम पर नेतृत्व की भूमिका लेने से रोकना, रात में काम करने या अकेले यात्रा करने से मना करना। यह सब देखभाल के नाम पर होता है, लेकिन इससे महिलाओं के अवसर कम हो जाते हैं। सच्चा समावेशन इसके उलट होता है – जहाँ लोग सुरक्षित माहौल में खुद फैसले ले सकें, जोखिम ले सकें, और आगे बढ़ सकें – न कि उन्हें "कमजोर" मानकर पीछे रोका जाए। |
| क्वीर | क्वीर उन लोगों के लिए इस्तेमाल होने वाला शब्द है जिनकी **यौनिकता, जेंडर पहचान या अभिव्यक्ति** समाज के तय "नॉर्म्स" (जैसे सिर्फ पुरुष/महिला या सिर्फ विषमलैंगिकता) में फिट नहीं होती। इसमें लेस्बियन, गे, बाइसेक्शुअल, ट्रांसजेंडर, नॉन–बाइनरी और अन्य पहचानें शामिल हो सकती हैं।<br>क्वीर सिर्फ एक पहचान नहीं, बल्कि दुनिया को समझने का एक तरीका भी है। यह दिखाता है कि समाज की संरचना अक्सर विषमलैंगिकता और तय जेंडर भूमिकाओं पर आधारित होती है। जैसे – शादी, परिवार, और काम के नियम अक्सर इस तरह बनाए जाते हैं कि वे एक खास तरह की जेंडर और यौनिकता को "सामान्य" मानते हैं।<br>"क्वीर" शब्द पहले गाली की तरह इस्तेमाल होता था, लेकिन बाद में आंदोलनों ने इसे अपनाकर एक ताकत के रूप में बदल दिया। आज, क्वीर एक ऐसा नजरिया है जो यह सवाल उठाता है कि किसकी पहचान को मान्यता मिलती है, किसे बाहर रखा जाता है, और क्यों। |

| | |
|---|---|
| **उचित समायोजन** | उचित समायोजन का मतलब है – ऐसे बदलाव या व्यवस्था करना, जिससे विकलांग लोग किसी भी जगह (जैसे स्कूल, कार्यस्थल) पर पूरी तरह और बराबरी से भाग ले सकें। जैसे – लचीला समय, पहुँच योग्य इमारतें, सहायक तकनीक, या अतिरिक्त समर्थन। इसका मकसद है रुकावटों को हटाना, अलग–अलग क्षमताओं को मान देना, और यह सुनिश्चित करना कि हर व्यक्ति को आगे बढ़ने और नेतृत्व करने का बराबर मौका मिले। |
| **अधिकार–आधारित दृष्टिकोण** | अधिकार–आधारित दृष्टिकोण एक ऐसा तरीका है जो विकास, शासन और सामाजिक बदलाव को **मानव अधिकारों** के आधार पर समझता है। यह मानता है कि अधिकार हर व्यक्ति को सिर्फ इंसान होने के नाते मिलते हैं – न कि किसी दया या सहायता के रूप में। यह यह भी समझता है कि हाशियाकरण और बहिष्करण संयोग से नहीं होते, बल्कि लंबे समय से चले आ रहे सत्ता के ढाँचों के कारण होते हैं।<br>यह दृष्टिकोण यह सवाल उठाता है:<br>◆ संसाधन किसे मिल रहे हैं?<br>◆ उन पर नियंत्रण किसका है?<br>◆ किसकी आवाज सुनी जा रही है?<br>भारत में यह दृष्टिकोण संविधान और सामाजिक आंदोलनों से जुड़ा है – जैसे शिक्षा का अधिकार, सूचना का अधिकार, नारीवादी आंदोलन, एंटी–जाति आंदोलन और विकलांगता अधिकार। यह लोगों को "लाभ पाने वाले" नहीं, बल्कि **अधिकार रखने वाले सक्रिय नागरिक** के रूप में देखता है। |
| **यौनिकता** | यौनिकता इंसान के जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, जिसमें जेंडर पहचान, रिश्ते, इच्छा, नजदीकी, आनंद और प्रजनन सब शामिल होते हैं। यह सिर्फ यौन संबंधों तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें यह भी शामिल है कि लोग खुद को कैसे समझते हैं और व्यक्त करते हैं।<br>नारीवादी सोच यह दिखाती है कि खासकर महिलाओं की यौनिकता पर नियंत्रण, पितृसत्ता को बनाए रखने का एक बड़ा तरीका रहा है। "अच्छी औरत", "इज्जत", "पवित्रता" जैसे विचार – ये सब महिलाओं के शरीर और उनकी पसंद को नियंत्रित करने के तरीके हैं।<br>भारत में, ब्राह्मणवाद और पितृसत्ता मिलकर महिलाओं की यौनिकता को नियंत्रित करते हैं – ताकि जाति और संपत्ति की व्यवस्था बनी रहे। राज्य भी कानूनों और नीतियों के जरिए यह तय करता है कि कौन शादी कर सकता है, कौन बच्चे पैदा कर सकता है, और कौन–सा व्यवहार "सही" माना जाएगा। इसलिए, यौनिकता सिर्फ निजी मामला नहीं है – यह एक सामाजिक और राजनीतिक मुद्दा भी है। |
| **राज्य** | राज्य वह संगठित व्यवस्था है जो कानून बनाती है, उन्हें लागू करती है और समाज को चलाने का काम करती है। इसमें संसद, न्यायालय, पुलिस और अन्य सरकारी संस्थाएँ शामिल होती हैं। राज्य यह तय करता है कि संसाधन, अधिकार और अवसर कैसे बाँटे जाएँ – और यह सामाजिक असमानताओं को बनाए रखने या बदलने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। |

| | |
|---|---|
| **सत्ता के ढाँचे** | सत्ता के ढाँचे वे सिस्टम और व्यवस्थाएँ हैं जो यह तय करती हैं कि समाज में किसके पास ताकत, संसाधन, आवाज और फैसले लेने का अधिकार है। इनमें राज्य, जाति, पितृसत्ता, धर्म, मीडिया, संस्कृति और आर्थिक व्यवस्था जैसे ढाँचे शामिल हैं।<br><br>ये एक–दूसरे से जुड़े होते हैं – यानी एक जगह की असमानता दूसरी जगह की असमानता को भी मजबूत करती है। इन्हें समझना जरूरी है, क्योंकि इससे पता चलता है कि बहिष्करण और हाशियाकरण सिर्फ अलग–अलग घटनाएँ नहीं हैं, बल्कि सिस्टम के अंदर ही बसे हुए हैं।<br><br>इसलिए, समावेशन के लिए सिर्फ लोगों को शामिल करना काफी नहीं है – बल्कि **सत्ता के बँटवारे को बदलना** भी जरूरी है। |
| **ट्रांसजेंडर** | ट्रांसजेंडर एक ऐसा व्यापक शब्द है, जो उन लोगों के लिए इस्तेमाल होता है जिनकी जेंडर पहचान या अभिव्यक्ति जन्म के समय तय किए गए सेक्स से अलग होती है। इसमें ट्रांस महिलाएँ, ट्रांस पुरुष, नॉन–बाइनरी और जेंडर विविध लोग शामिल हो सकते हैं।<br><br>ट्रांस होना जेंडर पहचान से जुड़ा है, न कि यौनिकता से – यानी ट्रांस व्यक्ति किसी भी यौनिकता के हो सकते हैं। ट्रांस अनुभव यह दिखाता है कि समाज किस तरह शरीर, पहचान और व्यवहार को नियंत्रित करता है। अक्सर हमारे सामाजिक और संस्थागत ढाँचे यह मानकर चलते हैं कि हर व्यक्ति का जेंडर जन्म के समय तय हो जाता है – और जो लोग इससे अलग होते हैं, उन्हें हाशिये पर डाल दिया जाता है।<br><br>इतिहास में, ट्रांस लोगों को बीमारी की तरह देखा गया, अपराधी बनाया गया, और उनके साथ हिंसा की गई। लेकिन ट्रांस समुदायों ने हमेशा इन नियंत्रणों का विरोध किया है – और यह दिखाया है कि जेंडर स्थिर या तयशुदा नहीं है, बल्कि विविध और बदलने वाला है। |

चिंगारी

**ICRW Asia**
Module 410, NSIC Business Park, 4th Floor, Okhla Industrial Estate, New Delhi – 110020
**Tel:** 91.11.4664 3333 | **E-mail:** info.india@icrw.org | **Website:** www.icrw.org/asia
**Facebook:** @ICRWAsia | **X:** @ICRWAsia | **Instagram:** @icrwasia
**LinkedIn:** https://www.linkedin.com/company/international-center-for-research-onwomen-icrwasia/

**ICRW Jamtara Project Office**
Ground Floor, 726-A/1 P2, Krishna Nagar, Mihijam, Jamtara, Jharkhand - 815354